PRINTED MATTER/PRINTING BOOK CLAUSE 121 (A) P & T GUIDE

गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी (रजि.)
द्वारा भिवानी (हरियाणा), काठमाण्डू (नेपाल) से प्रकाशित

ISSN : 2395-7115
Impact Factor 8.642

बोहल शोध मंजूषा
Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL MULTI DISCIPLINARY, MULTIPLE LANGUAGES PEER REVIEWED, REFREED RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Website : www.bohalshodhmanjusha.com
Email : grsbohal@gmail.com

Editor :
Dr. Naresh Sihag, Advocate
HOD Hindi, Tantia University
M. : 8708822674, 9466532152

गीना देवी शोध संस्थान
द्वारा श्रीगंगानगर, (राजस्थान), पटियाला (पंजाब) व नेपाल से प्रकाशित

ISSN : 2321-8037
Impact Factor 7.834

Gina Shodh SANGAM

A Peer Reviewed & Refereed International Research Journal
Journal of Literature, Arts, Culture, Humanities and Social Sciences
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Website : www.ginajournal.com
Email : grngobwn@gmail.com
Office : 8708822674

Editor :
Dr. Rekha Soni, Vice Principal
Education, Tantia University
M. 9828531975

गिरधारीलाल घासीराम शोधपीठ
द्वारा नई दिल्ली, आगरा, गाजियाबाद एवं नेपाल से प्रसारित

ISSN : 2348-5639
Impact Factor 6.521

SHODH SAMALOCHAN

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES QUARTERLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Website : https://ginajournal.com/shodh-samalochan/
Executive Editor : Dr. Varsha Rani M. 9671904323
Managing Editor : Dr. Mukesh Verma M. 9627912535

Editor :
Dr. Naresh Sihag, Advocate
M. 8708822674

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक गुगनराम सोसायटी (रजि.) के लिए डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट ने सानिया पब्लिकेशन, दिल्ली-110094 से छपवाकर गीना प्रकाशन, 202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी-127021 (हरियाणा) से वितरित की।

ISSN 2348:5639

SHODH SAMALOCHAN 2025

Dr. Versha Rani
Dr. Naresh Sihag, Adv.

गिरधारीलाल घासीराम शोधपीठ
द्वारा भारत-नेपाल से प्रसारित

ISSN : 2348-5639
Impact Factor : 6.521

SHODH SAMALOCHAN

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES QUARTERLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Vol. : 12, Issue : 2

April-May-June : 2025

Executive Editor :
Dr. Varsha Rani

Editor :
Dr. Naresh Sihag 'Bohal'
Advocate

संस्थापक संपादक
स्व. फतेहचंद

गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी (रजि.) द्वारा प्रकाशित

SHODH SAMALOCHAN

शोध-समालोचन (त्रैमासिक)

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REREREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES QUARTTERLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

वर्ष-12, अंक-2 **अप्रैल-जून 2025 (भाग-5)** **आईएसएसएन : 2348-5639**

संपादक
• डॉ. नरेश सिहाग 'बोहल' एडवोकेट

कार्यकारी संपादक
• डॉ. वर्षा रानी

प्रबंध संपादक
• डॉ. मुकेश 'ऋषिवर्मा'

सह-संपादक
• डॉ. लता एस. पाटिल,
• डॉ. सुलक्षणा अहलावत

सह-संपादक
• डॉ. सुमन रानी

अक्षर संयोजन
• मो. सलीम

कानूनी सलाहाकार
• डॉ. रामफल दलाल, एडवोकेट
• अजीत सिहाग, एडवोकेट

सलाहकार सम्पादक मंडल

• डॉ. निशीथ गौड, आगरा
• डॉ. ऊषा रानी, शिमला
• डॉ. गोविन्द सोनी, श्रीगंगानगर
• डॉ. सुषमा रानी, जीन्द
• डॉ. मुदस्सिर अहमद भट्ट, श्रीनगर
• डॉ. दीपशिखा, पटियाला
• डॉ. गौतम कुमार साहा, दरभंगा
• श्री राकेश शंकर भारती, युक्रेन
• डॉ. के.के. मल्होत्रा, कैनेडा
• डॉ. आशीष कुमार दीपांकर, मेरठ
• डॉ. कामिनी कौशल, गाजियाबाद
• डॉ. रवि शंकर सिंह, आरा
• डॉ. संजय कुमार, रांची
• डॉ. संतोष कुमार भगत, रांची

1. 'शोध-समालोचन' का प्रबंधन और संपादन पूर्णतः अवैतनिक है।
2. 'शोध-समालोचन' में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार संबंधित लेखकों के अपने हैं। उनके प्रति वे स्वयं उत्तरदायी है।
3. पत्रिका से संबंधित प्रत्येक विवाद का न्याय क्षेत्र भिवानी न्यायालय ही मान्य होगा।
4. प्रकाशक/ स्वामी डॉ. नरेश सिहाग, एडवोकेट ने सानिया पब्लिकेशन, दिल्ली-110094 से मुद्रित करवाया।

'शोध समालोचन' की सदस्यता का शुल्क भुगतान राष्ट्रीयकृत बैंकों द्वारा सीधे ट्रांसफर या जमा किया जा सकता है। बैंक का विवरण निम्नानुसार है–**बैंक :** PUNJAB NATIONAL BANK **Branch :** Yamuna Vihar, Delhi-110053 **IFSC :** PUNB0225600 **Account Holder :** SANIA PUBLICATION **Current Account No.** 2256002100405546 भुगतान की मूल रसीद, शोध -पत्र पत्रिका की ई-मेल पर भेजना अनिवार्य है।

नोट :- इस अंक की प्रिंट कॉपी खरीदने के लिए सानिया पब्लिकेशन, दिल्ली-110094 से सम्पर्क करें मो. 9818128487

मूल्य : 650/- रु. एक प्रिंट प्रति वार्षिक 2500/- रु.

विषय विशेषज्ञ सलाहकार समिति/ संपादकीय मंडल :

- **Dr. Mudita Popli**
  Principal, Maa Karni B Ed College Nal, Bikaner
- **Dr. Tapasya Chauhan**
  Assistant Professor,
  Dr. Bhimrao Ambedkar University, Agra (Utter Pradesh)
- **Dr. AMBILI V. S.**
  Assistant Professor, Department of Hindi,
  N.S.S. College, Pandalam, Pathanamthitta Distt. University of Kerala.
- **Dr. Om Prakash Mehrara**
  Director, Shri Ramnarayan Dixit PG College, Srivijaynagar, Distt. Anupgarh (Rajasthan)
- **Dr. Anju Bala**
  Assistant Professor Hindi,
  Guru Nanak Girls College, Yamunanagar-135001
- **डॉ. श्रीमती अभिलाषा सैनी**
  प्राचार्य, स्व. रामनाथ वर्मा शासकीय महाविद्यालय, मोपका, जिला-बलौदा बाजार, छत्तीसगढ़
- **डॉ. माया गोला,** असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी विभाग, सोबन सिंह जीना विश्वविद्यालय, अल्मोड़ा (उत्तराखंड)
- **डॉ. मोहित शर्मा**
  श्री सर्वेश्वर संस्कृत महाविद्यालय, निम्बार्क तीर्थ किशनगढ़, जिला अजमेर (राजस्थान)-305815
- **रजनी प्रिया**
  राँगाटाँड़ रेलवे कॉलोनी, क्वार्टर सं. 502/136, तरुण संघ क्लब दुर्गा मंदिर, धनबाद, लैण्डमार्क - नियर श्रमिक चौक, पोस्ट जिला-धनबाद, झारखंड-826001
- **डॉ. आँचल कुमारी,** असिस्टेंट प्रोफेसर हिंदी
  राम चमेली चड्ढा विश्वास गर्ल्स कॉलेज गाजियाबाद चौधरी चरणसिंह युनिवर्सिटी, मेरठ (उ. प्र.)
- **डॉ. सरिता भवानी मालवीय**
  असिस्टेंट प्रोफेसर, फैकल्टी ऑफ लॉ.,
  आर.के.डी.एफ. विश्वविद्यालय, भोपाल (मध्यप्रदेश)
- **डॉ. संदीप कुमार,** असि. प्रोफेसर, पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग, कन्हैयालाल मानिकलाल मुंशी हिंदी तथा भाषाविज्ञान विद्यापीठ, डॉ. भीमराव अम्बेडकर वि.वि., आगरा
- **डॉ. प्रमोद नाग**
  सहायक प्राध्यापक, आचार्य इंस्टीट्यूट ऑफ ग्रेजुएट स्टडीज, बेंगलुरु-560107
- **पल्लवी आर्य**
  असि. प्रोफेसर, भाषाविज्ञान विभाग, के.एम.आई. डॉ. भीमराव अम्बेडकर वि.वि., आगरा
- **डॉ. अमित कुमार सिंह**
  डी. लिट्., असि. प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, के.एम. आई., डॉ. भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, आगरा
- **कोकिला कुमारी**
  शोद्यार्थी, हिंदी विभाग, राँची वि.वि. राँची, झारखंड
- **गोस्वामी सोनीबाला**

शोधार्थी – जयप्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा, बिहार

- **डॉ. करुणेन्द्र सिंह**, असिस्टेंट प्रोफेसर
  रक्षा एवं स्त्रातजिक अध्ययन विभाग, गोरखपुर, बापू स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पीपीगंज, गोरखपुर
- **डॉ. मीरा चौरसिया**
  चमनलाल महाविद्यालय लंढौरा, रुड़की, हरिद्वार, उत्तराखण्ड–247664
- **Dr. Vimal Parmar**
  Assistant Prof. Rajasthan P.G. Law College, Chirawa , Rajasthan
- **डॉ. तनु श्रीवास्तव**
  असिस्टेंट प्रोफेसर (अर्थशास्त्र), स्कूल ऑफ सोशल साइंस, देवी अहिला विश्वविद्यालय, इन्दौर
- **डॉ. कुमारी लक्ष्मी जोशी**
  उप–प्राध्यापक, केंद्रीय हिन्दी विभाग
  त्रिभुवन विश्वविद्यालय, काठमांडू, नेपाल
- **Dr. Archana Tiwari** , Assistant Professor , History and Indian Culture, Uni. Rajasthan, Jaipur
- **डॉ. जगदीप दुबे**
  सहायक प्राध्यापक वाणिज्य (म.प्र.), शासकीय आदर्श महाविद्यालय, डीनडोरी (म.प्र.)
- **डॉ. चन्द्रशेखर सिंह**
  समाज कार्य विभाग, काशी विद्यापीठ, वाराणसी
- **लेफ्टि. डॉ. सन्दीप भांभू**
  शारीरिक शिक्षा विभाग, टॉटिया वि.वि. श्रीगंगानगर

Request to Writers

Send quality original and unpublished works written on language, literature, society, science and culture. For publication, along with the translated works, also send the letters of consent received from the original authors. Compositions should be typed in Hindi Unicode Mangal font, English Time Roman. At the beginning of the article, a summary of the article is required which should be between 150 to 200 words maximum. The abstract must reflect the purpose of writing the article. Also write 5 to 7 'key words' (seed words) according to the article.

Write the article by dividing it appropriately into subheadings. Be sure to give a conclusion at the end of the article. The word limit should be 2000 to 2500 words. List of bibliographies at the end of the article APA Be in the format of. While sending the article, please write your name, address, phone number and title of the article in the e-mail. Submit a declaration to the effect that the article is original, unpublished, the author and not the editorial board will be responsible for any dispute related to it in future.

At the end of the composition, mention your complete postal address, mobile number and e-mail address.

- Editor

लेखकों से निवेदन

भाषा, साहित्य, समाज, विज्ञान एवं संस्कृति पर लिखी गयी स्तरीय मौलिक तथा अप्रकाशित रचनाएं भेजें। प्राकशनार्थ अनूदित रचनाओं के साथ मूल लेखकों से प्राप्त सहमति पत्र भी भेजें। रचनाएँ हिंदी यूनिकोड मंगल फान्ट अंग्रेजी टाइम रोमन में टंकित होनी चाहिए। लेख के प्रारंभ में लेख का सार अपेक्षित है जो अधिकतम 150 से 200 शब्दों के मध्य हो। सार में लेख लिखने का उद्देश्य अवश्य परिलक्षित होना चाहिए। लेख के अनुरूप 5 से 7 (की वर्ड) (बीज शब्द) भी लिखें। लेख को यथोचित उपशीर्षकों में विभाजित करके लिखें। लेख के अंत में निष्कर्ष अवश्य दें। शब्द सीमा 2000 से 2500 शब्दों की हो। आलेख के अंत में संदर्भ ग्रंथों की सूची ए.पी.ए. के प्रारूप में हो। लेख भेजते समय अपने नाम, पता, फोन नंबर एवं लेख का शीर्षक ई-मेल में अवश्य लिखें। इस आशय का एक घोषणा-पत्र प्रस्तुत कर दें कि लेख मौलिक है, अप्रकाशित है, भविष्य में इससे संबंधित किसी भी विवाद के लिए लेखक उत्तरदायी होंगे संपादक मंडल नहीं।

रचना के अंत में अपना पूरा डाक पता, मोबाइल नंबर और ई-मेल पता अंकित करें।

-संपादक

प्रकाशित पत्रिका प्राप्त करने के लिए संपर्क करे :
सानिया पब्लिकेशन, दिल्ली-110094
मोबाइल : 9818128487, 8383042929

ISSN : 2348-5639

SHODH SAMALOCHAN

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES QUARTERLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Table 2

Methodology for University and College Teachers for calculating Academic/Research Score

(Assessment must be based on evidence produced by the teacher such as: copy of publications, project sanction letter, utilization and completion certificates issued by the University and acknowledgements for patent filing and approval letters, students' Ph.D. award letter, etc,.)

S.N.	Academic/Research Activity	Faculty of Sciences /Engineering / Agriculture / Medical /Veterinary Sciences	Faculty of Languages / Humanities / Arts / Social Sciences / Library /Education / Physical Education / Commerce / Management & other related disciplines
1.	**Research Papers in Peer-Reviewed or UGC listed Journals**	08 per paper	10 per paper
2.	**Publications (other than Research papers)**		
	(a) Books authored which are published by ;		
	International publishers	12	12
	National Publishers	10	10
	Chapter in Edited Book	05	05
	Editor of Book by International Publisher	10	10
	Editor of Book by National Publisher	08	08
	(b) Translation works in Indian and Foreign Languages by qualified faculties		
	Chapter or Research paper	03	03
	Book	08	08
3.	**Creation of ICT mediated Teaching Learning pedagogy and content and development of new and innovative courses and curricula**		
	(a) Development of Innovative pedagogy	05	05
	(b) Design of new curricula and courses	02 per curricula/course	02 per curricula/course

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

संपादकीय

प्रिय पाठकों,

वर्तमान समय संक्रमण और संघर्ष का काल है—आशाओं के पुनर्निर्माण और मूल्यों के पुनर्पाठ का समय। जब वैश्विक परिदृश्य में अस्थिरता, कृत्रिमता और आत्मकेन्द्रितता अपनी चरम अवस्था में है, तब साहित्य और समालोचना की भूमिका और अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है। शोध समालोचन का यह तिमाही अंक इसी चेतना से प्रेरित है।

इस अंक में हमने विविध विमर्शों, काव्य प्रवृत्तियों, लोकधर्मी साहित्य और समकालीन आलोचनात्मक दृष्टियों को समेटने का प्रयास किया है। हमारी यह मान्यता रही है कि साहित्य का मूल्य केवल रचना तक सीमित नहीं होता, बल्कि उसका विश्लेषण, संवाद और सामाजिक संदर्भों में पुनर्पाठ ही उसकी आत्मा को व्यापक बनाता है।

इस अंक में प्रकाशित आलेखों में आप हिंदी साहित्य के विविध पक्षों—जैसे दलित विमर्श, स्त्रीवाद, लोक साहित्य, उत्तरआधुनिकता और नई आलोचना—की विश्लेषणात्मक छवियाँ देखेंगे। शोधार्थियों और नवलेखकों की दृष्टि का समावेश भी हमारे लिए उत्साह का विषय है, जो यह संकेत देता है कि आने वाला बौद्धिक परिदृश्य भी चिंतनशील और जिज्ञासु होगा।

इस बार हम विशेष रूप से उन रचनाकारों और आलोचकों को धन्यवाद देना चाहेंगे जिन्होंने अपने लेखों के माध्यम से साहित्यिक विमर्श को और भी समृद्ध किया। साथ ही हम अपने पाठकों से यह अपेक्षा भी करते हैं कि वे अपने सुझावों और प्रतिक्रियाओं के माध्यम से इस संवाद को आगे बढ़ाएँ।

आज जब 'सच' और 'प्रदर्शन' के बीच की दूरी बढ़ती जा रही है, तब यह आवश्यक है कि हम अपने समय के सवालों से आँख मिलाएँ और रचनात्मक ईमानदारी के साथ संवाद करें। शोध समालोचन इसी दिशा में एक विनम्र प्रयास है।

वसंत की सुगंधि के साथ जब पृथ्वी हरियाली की चादर ओढ़ती है, तब सृजनशीलता भी अपने उत्कर्ष की ओर बढ़ती है। अप्रैल, मई और जून का यह त्रैमासिक अंक न केवल ऋतु-परिवर्तन का साक्षी है, बल्कि विचार, विमर्श और बौद्धिक चेतना के नव अंकुरण का परिचायक भी है।

आज जब दुनिया तकनीक और त्वरित सूचनाओं की दौड़ में भाग रही है, तब साहित्य, समाज और संस्कृति से जुड़े गंभीर विमर्शों की भूमिका और भी महत्वपूर्ण हो जाती है। शोध और समालोचना न केवल हमारे अतीत की पड़ताल करते हैं, बल्कि वर्तमान को समझने और भविष्य को दिशा देने का आधार भी प्रदान करते हैं।

इस अंक में प्रस्तुत लेख और शोध-पत्र विविध विषयों को स्पर्श करते हुए एक व्यापक बौद्धिक फलक रचते हैं। साहित्य में स्त्री-विमर्श, दलित चेतना, भाषाई विविधता, लोक-संस्कृति की पुनर्व्याख्या, और साथ ही समकालीन हिंदी काव्य के बदलते स्वर—इन सभी पर गहन दृष्टिकोण प्रस्तुत किया गया है।

हमारे लेखकगणों ने अपनी विद्वता और संवेदनशील दृष्टि से न केवल अकादमिक जगत को समृद्ध किया है, बल्कि पाठकों के मन-मस्तिष्क को भी झकझोरने का प्रयास किया है। हमें गर्व है कि 'शोध समालोचन' अब मात्र एक पत्रिका नहीं, बल्कि एक विचारधारा का मंच बन चुका है—जहाँ हर कलम सवाल उठाती है, समाधान ढूँढ़ती है, और नवोन्मेष को जगह देती है।

आशा है, यह अंक भी पाठकों के मन में नए विचारों का संचार करेगा और संवाद की संस्कृति को और प्रगाढ़ बनाएगा। आप सभी का सतत स्नेह, सहयोग और सुझाव ही हमारी प्रेरणा हैं। आइए, हम सब मिलकर ज्ञान और चिंतन की इस यात्रा को और भी सार्थक बनाएं।

- नरेश कुमार सिहाग
संपादक
शोध समालोचन

विषयानुक्रमणिका

संपादकीय 6

नरेश मेहता के खंडकाव्य में सांस्कृतिक मूल्य 10
सुरेश एच मेडा
डॉ. बी. आर. बोदर

नागार्जुन की वैचारिकी में सामाजिकता-बोध 16
डॉ. मंटू कुमार साव

कुँवर नारायण की कविता में मिथकों का अतिक्रमण : एक समकालीन दृष्टिकोण 20
डॉ. अनिता कुमारी जाट

अभिजात्य एवम् सामान्य वर्ग की छात्राओं की शैक्षिक अभिप्रेरणा का अध्ययन 23
डॉ. महेश कुमार शर्मा

Beyond Utility: The Intrinsic Value of Justice in the Human Experience 28
Dr. Gauranga Das

The Relevance of Sanskrit to Botany: A comparative study 33
Naresh Kumar
Prof. Sushma Devi

भारतीय काव्यशास्त्र में रस का आत्मत्व रूप : एक समीक्षात्मक अध्ययन 37
वीणा शर्मा
प्रोफेसर सुषमा देवी

भारत में नेपाली सैनिकों की भूमिका का सांस्कृतिक मूल्यांकन 40
डॉ. जितेन्द्र कुमार

भारतीय परिपेक्ष्य में सामाजिक आंदोलन का अवधारणात्मक स्वरूप 44
डॉ. अग्नि देव

ई-गवर्नेंस की सफलताऐं, सीमाऐं एवं सम्भावनाऐं 50
डॉ. कौशल कुमार सैन

राम मनोहर लोहिया का समाजवादी-सांस्कृतिक चिंतन 55
डॉ. दयाचंद

रामायणमञ्जरी में मन्त्रिमण्डल विधान 62
रोहितकुमार
डॉ. विद्याधर सिंह

Challenges and Opportunities of Implementing Feminist Foreign Policy in South Asia's Male-Dominated Political Landscapes 65
Mr. Sagar Gopal Rathod
Dr. Shriniwas Sayanna Bhandare
From Classroom to Command: How On-Job Training Transforms Future Administrators and political Leadership 70
Mr. Sagar Gopal Rathod
कामागाटा मारू : सिखों के संघर्ष की अद्‌भुत-अनोखी दास्तान 75
डॉ. रणजीत सिंह अरोरा 'अर्श'
भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं की भूमिका 80
डॉ. आशीष कुमार साव
डॉ. सुमन सचदेवा के काव्य संग्रह 'मैं कहाँ?' के भाव पक्ष का विश्लेषण 88
डॉ. हरिभजन प्रियदर्शी
किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य पर सोशल मीडिया का प्रभाव 93
स्वाती सिंह
ठाकुर का कुआँ : दलित जीवन की त्रासदी 98
प्रो. (डॉ.) रामकृष्ण
रीता मौर्य
Ectoparasitic Infestations in Dairy Cows: Their Influence on Growth, Weight Gain, and Milk Production in Purvanchal 101
Ramesh Chandra Yadav, Dr. Satyendra Kumar Yadav,
Dr. Kunvar Dileep Pratap Singh, Dr. Ajay Kumar Singh
The Role of AI in Sustainable Development 106
Dr.Vidhya.P.
Dr.Reka.
Dr. Sajitha. J.
स्वातन्त्र्योत्तर संस्कृत महाकाव्यों में राष्ट्रवाद 111
शिवराज मीणा
आधुनिकताबोध और सर्वेश्वर का कथा-साहित्य 117
डॉ. बिक्रम कुमार साव
To Develop A Machine Learning Driven Webapp With Integration of Internet of Things 121
Dipmala Bhagwat Trimukhe
Dr. Rahul Kumar Budhania
Analysis of Parental Views on Inclusive Education for Their Children with Intellectual Developmental Disabilities (Divyangjan) 129
Usha Lata
Dr. Anita Sharma
Corporate Breach of Contract and The Role of Specific Performance Under Indian Contract Law 137
Hrishikesh Ram More
Dr. Vijaymala
रीवा शहर में वृद्ध महिलाओं की परिवार में स्थिति का समाजशास्त्रीय अध्ययन 143
डॉ. दीपिका शुक्ला

TEMPLE ADMINISTRATION IN COLONIAL AND POST-COLONIAL INDIA BETWEEN THE PERIOD 1863 TO 1983 149
Ashish Ranjan Tiwari
Ajit Kumar Bajpai
मशीन लर्निंग आधारित एल्गोरिद्म द्वारा मधुमेह पूर्वानुमान : एक व्यावहारिक अध्ययन 157
के के इश्विता श्री
AI-Driven Cognitive Behavioural Therapy for Early Detection and Support in Mental Health 162
K K Ishvintha Sree
ARTIFICIAL INTELLIGENCE AND CRIMINAL LIABILITY 169
Soundara Rajendren Nayagi
भारतेन्दुयुगीन निबंधों में राष्ट्रीय सांस्कृतिक मूल्य 179
डॉ. प्रियंका
मृदुला गर्ग के 'कठगुलाब' उपन्यास में नारी-जीवन का बदलता दृष्टिकोण 181
डॉ. पल्लवी मिश्रा
विद्यार्थी शिक्षकों की चुनौती स्वीकार्यता का उनके व्यक्तित्व पर प्रभाव 184
प्रो. वंदना गोस्वामी
शालिनी चावला
हरियाणा की लोक वाणी में गाँधी : एक अध्ययन 190
डॉ. रितु पूनिया
डॉ. रश्मि गुर्जर
राजस्थान में पंचायतीराज एवं ई व ईजी गवर्नेस : चुनौतियां और समाधान 194
अशोक कुमार मीणा
डॉ. राजेश कुमार शर्मा

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

नरेश मेहता के खंडकाव्य में सांस्कृतिक मूल्य

सुरेश एच मेडा
शोधार्थी
श्री गोविंद गुरु विश्व विद्यालय गोधरा, विंज़ोल
विनियन विध्याशाखा

डॉ. बी. आर. बोदर
मार्गदर्शक, कार्यकारी आचार्य
नवजीवन आर्ट्स एवं कॉमर्स कॉलेज, दाहोद
श्री गोविंद गुरु विश्व विद्यालय गोधरा, विंज़ोल

सारांश

यह शोध पत्र प्रसिद्ध हिंदी कवि नरेश मेहता के खंडकाव्यों में निहित सांस्कृतिक मूल्यों का साहित्यिक विश्लेषण प्रस्तुत करता है। नरेश मेहता की रचनाओं में भारतीय संस्कृति की गहराई, परंपरा, धार्मिक चेतना, सामाजिक संबंध और मानवीय संवेदना का सुंदर समन्वय मिलता है। उनके खंडकाव्य ''संशय की एक रात'', और "प्रवाद पर्व'', खंडकाव्य का अध्ययन किया गया है। इस शोध में प्रमुख कवयांशों के माध्यम से यह स्पष्ट किया गया है कि नरेश मेहता भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों को किस प्रकार आधुनिकता के साथ जोड़ते हैं और पाठक के अंतर्मन को झकझोरते हैं। यह अध्ययन साहित्यिक दृष्टि से उनके काव्य की सांस्कृतिक चेतना और प्रतीकात्मकता को उद्घाटित करने का प्रयास करता है।

शब्द कुंजी : खंडकाव्य, सांस्कृतिक मूल्य, भारतीय संस्कृति, साहित्य।

प्रस्तावना

नरेश मेहता भारतीय अस्मिता और सांस्कृतिक सम्पन्नता के कवि हैं। हमारे दर्शन, धर्म, संस्कृति आदि ने आत्मबोध और चेतना की ऊर्ध्वता के शिखरों का सदैव स्पर्श किया है। उनके काव्य की जमीन समसामयिक स्थितियों को गहरा स्पर्श देती हुई शाश्वत, जीवन-मूल्यों को तलाशने में प्रज्ञा शिखर की सदियों का प्रत्यय बन गई है। उसमें युग सन्दर्भों के अनुकूल जीवन सत्य की पकड़, ऊर्ध्वगामी चेतना और अमानवीय हालातों से टकराने की ताकत है। प्राचीन इतिहास उनकी संस्कृति-केन्द्रित सांस्कृतिक मूल्य का एक महत्त्वपूर्ण विषय है। इसीलिए उनका काव्य भारतीय सांस्कृतिक सम्पन्नता का काव्य है। और मानवीय विलास के हर पहलू को साथ लेकर चला है।

नरेश मेहता की सांस्कृतिक चेतना की सबसे केन्द्रीय धारा उनकी उदात्तत्ता है। भारतीय संस्कृति और भारतीय चिन्तन का सबसे केन्द्रीयपक्ष भी उसकी उदात्तत्वा ही है। संकीर्णता, प्रतिशोध, हिंसा जैसी भावनाओं से क्रमशः उठते चले जाना भारतीय संस्कृति से क्रमशः संसृक्त होते जाना है। उदात्तता ही उसे उस महाकरुणा और विराट् संवेदना की अनुभुति से सिंचित करती है। जहाँ सारा विश्व अपनी मंगलिक छवियों से उसे सम्मोहित करता रहता है।''

सांस्कृतिक मूल्यों की अभिव्यक्ति ष्संस्कृति, किसी देश, जाति अथवा मानव के इन आन्तरिक गुणों की समष्टि का नाम है जो उसके आचार-विचार, कार्य-कलाप एवं जीवन-पद्धतियों में अभिव्यक्त होती है। मानव अपने सांस्कृति गुणों मूल्यों के कारण एक-दूसरे से चरित्र, धर्म, नैतिकता आदि में भिन्न व्यक्तित्व वाला होता है। प्रत्येक जाति, देश अथवा व्यक्ति के भी

भिन्न परिवेश में चलने के कारण, भिन्न-भिन्न सांस्कृतिक मूल्य होते हैं। सांस्कृतिक मूल्यों की अभिव्यक्ति, हमारे भावों, विचारों एवं व्यवहारों द्वारा होती है। हमारी संस्कृति के गुण या मूल्य हैं-दया, प्रेम, करुणा, सहानुभूति, सत्य, अहिंसा, परोपकार, आस्था, श्रद्धा, क्षमा, उदारता, विश्व-बन्धुत्व की भावना, त्याग एवं संयम तथा सदाचार आदि मनुष्य पदार्थत्व के स्थान पर चेतनत्व का अनुभव करे यही नरेश मेहता की आध्यात्मिक तथा सांस्कृतिक चेतना का आशय है। नरेश मेहता का काव्य मानवीय विलास के हर पहलू को साथ लेकर चलता है। कहने का आशय यह है कि नरेश मेहता का काव्य इसी सुद्ध भूमिका पर खड़ा हुआ है। इनका काव्य भारतीय सांस्कृतिक सम्पन्नता का काव्य है।

शोध पत्र (उद्देश्य)

1. नरेश मेहता के खंडकाव्यों में सांस्कृतिक मूल्यों की पहचान करना।
2. भारतीय परंपरा एवं मिथकों के उपयोग का विश्लेषण करना।
3. खंडकाव्य शैली में सांस्कृतिक चेतना की प्रस्तुति को समझना।

नरेश मेहता के खंडकाव्यों में सांस्कृतिक मूल्य

(1) कर्म मूल्य

'कर्म' भारतीय संस्कृति का मूलाधार एवं उसकी चेतना का प्राणतत्त्व है। निष्क्रिय जीवन को हमारी परंपरा में शून्य व निरर्थक माना गया है। भगवद्गीता में श्रीकृष्ण अर्जुन को उपदेश देते हुए स्पष्ट करते हैं कि संबंधों और मोह-माया की चिंता त्यागकर उसे स्वधर्मानुसार कर्म में प्रवृत्त होना चाहिए, अन्यथा वह आत्मिक अधःपतन का शिकार हो जाएगा। कर्म ही मानव का सच्चा धर्म है, जो उसे पुरुषार्थ की ओर उन्मुख करता है। सतयुग से कलियुग तक, प्रत्येक युग में यह सिद्धांत अक्षुण्ण रहा है कि मनुष्य अपने कर्मों के अनुसार ही फल का भागी होता है। कर्म के ही अनुसार उसकी गति, दिशा और स्थिति निर्धारित होती है। श्रीकृष्ण का यह अमोघ वाक्य 'कर्म करो, फल की चिंता मत करो' मानव जीवन का शाश्वत सूत्र है।

कवि नरेश मेहता के काव्य-संसार में भी कर्म का भावबोध अत्यंत प्रमुख है। उनके अनुसार कर्म न केवल संस्कृति का अविभाज्य अंग है, वरन् यह मानव अस्तित्व से अविच्छिन्न रूप से सम्बद्ध है।कर्म में मनुष्य का विश्वास अगर मनुष्य अपने कर्म और वचनों पर स्थिर रहता है तो उसे कोई भी ताकत विचलित नहीं कर सकती। वह अंततः अपने लक्ष्य को जरूर प्राप्त करता है। "संशय की एक रात"के राम कर्म में विश्वास रखते हैं। गीता में भी कर्म की ही प्रधानता है इसीलिए राम भी कहते हैं कि मनुष्य के कर्म कोई भी नहीं छीन सकता मनुष्य को कर्म में विश्वास करना चाहिए–

''किन्तु
किन्तु यह असम्भव है
बन्धु। यह असम्भव है
कर्म और वर्चस को
छीन सके कोई भी
जब तक हम जीवित है।''

यहाँ लक्ष्मण का कर्म पर विश्वास है। लक्ष्मण कर्म करने से कभी पीछे नहीं हटते। वे कर्मठ व्यक्ति हैं। वे लंका की चुनौती को स्वीकार करते हैं अपने कर्म को पहचानते हैं उन्हें युद्ध स्वीकार्य है। पर राम के माथे पर पड़ी चिन्ता की रेखाएँ स्वीकार्य -नहीं हैं। वे राम की सेवा करना अपना धर्म अपना कर्म समझते हैं। उनके रास्ते में आई बाधाओं को हटाने में अपने आपको कुर्बान करने के लिए भी तत्पर रहते हैं–

''लंका यदि ध्रुव पर भी होती तो
भाग नहीं पाती बन्धु!
लक्षमण के पौरुष से।

कर्म की चुनौती
मुझे स्वीकार है
अग्निकुण्ड की माथे पर
राम के माथे पर
चिन्ता की रेखा
देख नहीं सकता।''

कर्म के अनुसार ही मनुष्य की समृद्धि होती है कर्म के अनुरूप ही मनुष्य समाज में यश प्राप्ति करता है। कर्म करते समय मन में कोई विकार, शंका या संशय नहीं होनी चाहिए। कर्म ऐसा करो कि यश की प्राप्ति हो। इसी बात को दशरथ की छाया राम से कहती है–

''पुत्र मेरे!
संशय या शंका नहीं
कर्म ही उत्तर है
यश जिसकी छाया है
उस कर्म को करो।''

'कर्म मूल्य' में ष्अलंग-कर्मष में प्रवाद पर्व में राम कहते हैं कर्म तटस्थहै, इससे कोई मुक्त नहीं हो सकता। मनुष्य जैसे कर्म करता है वैसी ही उसे प्राप्ति होती है। कर्म के अधीन ही मनुष्य सब कुछ करता है कर्म से यदि कोई भागवा चाहे तो यह सम्भव नहीं है–

''कर्म के इस तटस्थ
भागवत अनुष्ठान से
कोई मुक्ति नहीं
कोई कृति नहीं।''

(2) अहिंसा मूल्य

भारतीय संस्कृति में अहिंसा को सर्वोच्च नैतिक मूल्य के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त है। महाकवि नरेश मेहता ने इस मूल्य को अत्यंत मार्मिकता से अभिव्यक्त करते हुए कहा है–''मुझे प्रतीत होता है कि भारतीय चेतना शेष मानवता से इस दृष्टि से भिन्न है कि हमारी सभ्यता की विकास यात्रा हिंसा से अहिंसा की ओर अग्रसर रही है, जबकि अन्य राष्ट्रों की यात्रा हिंसा से और भी घोर हिंसा की दिशा में बढ़ी है।''

यह कथन न केवल भारत के सांस्कृतिक मर्म को उद्घाटित करता है, अपितु यह भी दर्शाता है कि हमारे देश की आत्मा में करुणा, संयम और सहिष्णुता मूलभूत तत्व हैं। कई विचारकों की दृष्टि में अहिंसा केवल एक राजनीतिक नीति नहीं, बल्कि एक जीवन-दर्शन है, जिसे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने आधुनिक युग में रामराज्य के आदर्श के रूप में पुनर्स्थापित किया। गांधी की अहिंसा, शक्ति का प्रतीक बनकर राष्ट्र को नैतिक उन्नयन की ओर ले गई।

नरेश मेहता का खंडकाव्य 'संशय की एक रात' में भी राम की अहिंसा के प्रति गहन आस्था को बड़ी सुंदरता से चित्रित किया गया है। राम उस भूमि पर, जो युद्ध और रक्तपात से लथपथ हो चुकी है, अपनी सीता को प्राप्त करने के इच्छुक नहीं हैं। उनका दृढ़ विश्वास है कि केवल अहिंसा के पथ पर चलकर ही वे अपनी प्रिया को प्राप्त कर सकते हैं। जब राम देखते हैं कि उनके अहिंसावादी सिद्धांतों को यथोचित स्थान नहीं मिल रहा, तो वे पीड़ा से भरकर लक्ष्मण से कहते हैं–

''तो-
समर्पित है तुम्हें
तुम्हारे अज्ञात बलों को,

इस क्षण के द्वारा
वृष्टि भीगे उस महाकाल की
समर्पित है यह
धनुष, बाण, खड्ग, और शिरस्त्राण
मुझे ऐसी जय नहीं चाहिए,
बाणबिद्ध पाखी सा विवश
साम्राज्य नहीं चाहिए।
मानव के रक्त पर पग धरती आती
सोता भी नहीं चाहिए
सीता भी नहीं।''

(3) सत्य

नरेश मेहता की काव्य-कृतियाँ न केवल सौंदर्यबोध का प्रतिपादन करती हैं, बल्कि वे जीवन के मूलभूत सत्यों की पहचान भी कराती हैं। उनकी रचनाओं में सत्य एक केंद्रीय मूल्य के रूप में उभरकर सामने आता है। उन्होंने आधुनिक युग की जटिलताओं और अंतर्द्वंद्वों को प्राचीन सांस्कृतिक परिवेश के आलोक में प्रस्तुत किया है। ष्संशय की एक रातष् के राम जब यह उद्घोष करते हैं—''मुझे रक्त पर पग धरती हुई सीता नहीं चाहिए,'' तो वह केवल एक भावनात्मक आवेग नहीं, बल्कि गहन नैतिक प्रतिबद्धता की उद्घोषणा है।

सत्य जब व्यक्ति के घेरे के बाहर निकल कर मानवता के बहू आयामी संदर्भों से जुड़ जाता है तो वह सत्या मानवता का अथवा मानवता के लिए समर्पित सत्या कहलाता है। इसी सत्या की सत्ता के लिए राम कहते हे।

"मैं सत्या चाहता हूं
युद्ध से नहीं
खड़ग से भी नहीं
मानव का मानव से सत्य चाहता हूं।
क्या यह संभव है?
क्या यह नहीं है?''

सत्य की परख के लिए जरूरी नहीं किसी बड़ी ऐतिहासिक घटना की गवाही किसी बड़े राजपुरुष अथवा किसी बड़े पंडित की जरूरत होती है। सत्य तो सत्य। यह स्वतः सिद्ध होता है। उसकी सत्ता कहीं भी सम्भव है। वह भी साधारण न में भी उतना ही उजागर है जितना कि एक इतिहास पुरुष में।

''यह कोई आवश्यक नहीं कि
सत्य अपनी ऐतिहासिक अभिव्यक्ति के लिए
यह कोई आवश्यक नहीं कि सत्य
अपनी ऐतिहासिक अभिव्यक्ति के लिए
केवल राजपुरुषों या
पंडितों को ही चुने।"

'सत्य मूल्य' की श्रेष्ठता सर्वोपरिता है। सत्य देश-काल इतिहास इन सबसे ऊँचा है। यहाँ तक कि यह मूल्यों में श्रेष्ठ भी है नरेश मेहता के राम सत्य के मूल्य को प्राथिमकता देते हैं जैसे—

"इतिहास से भी बड़ा मूल्य है
सत्य

परात्पर सत्य, ऋत–
और
यही तुम्हारी चरित्र-मर्यादा है
ऋतम्भरा व्यक्तित्व है।''

(4) त्याग

त्याग भारतीय संस्कृति का एक ऐसा मौलिक तत्त्व है, जिसने हमारे समाज को नैतिक दिशा देने का कार्य किया है। भारतीय संस्कारों की विशेषता यही रही है कि वे व्यक्ति के अंतर्मन में समर्पण, सेवा और परहित की भावना का बीजारोपण करते हैं। यह त्याग केवल किसी एक दिशा तक सीमित नहीं होता; कभी वह परिवार के लिए होता है, कभी समाज के लिए, कभी राष्ट्र के लिए और कभी संपूर्ण मानवता के लिए। व्यक्ति जब आत्मकेंद्रित इच्छाओं को त्यागकर व्यापक हित की ओर उन्मुख होता है, तब वही त्याग उसके चरित्र का आदर्श बन जाता है।

नरेश मेहता जैसे कवियों ने अपने काव्य में इस मूल्य को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से उद्घाटित किया है। उनका मानना है कि जब तक कोई काव्य रचना सांस्कृतिक मूल्यों की प्रतिष्ठा नहीं करती, तब तक वह केवल शिल्प या भाव की अभिव्यक्ति मात्र बनी रहती है। किसी भी कवि की रचना तभी सार्थक होती है जब उसमें संस्कृति के मूलभूत तत्त्व जैसे त्याग, धर्म, कर्तव्यबोध अंतर्निहित रूप में विद्यमान हों।

(5) करुणा

भारतीय संस्कृति का एक मूल्य ष्करुणाष भी है। उसी करुणा में यह भाव शक्ति है कि वह भयानक से भयानक युयुत्सा को महाकरुणा में डूबो कर शान्त कर देती है। नरेश मेहता इस करुणा से आर्द्र थे इसका दर्शन उनके खंडकाव्य में होता है तुलसी के राम चाहे शील, सौन्दर्य और शक्ति के अपूर्व समन्वय रहे हों, परन्तु ष्संशय की एक रातष के राम का अत्यन्त करुणामय स्वरूप चित्रित हुआ है नरेश जी ने राम के व्यक्तित्व में इस महाकरुणा की अवतारणा का चित्रण बड़े ही मार्मिक ढंग से किया है। राम के भीतर इसी महाकरुणा का ज्वार उमड़ता है जब वे कहते हैं–

''बन्धु!
ऐसा युद्ध
ऐसी विजय
ऐसी प्राप्ति
सब मिथ्यात्व है।
नरसंहार के व्यामोह के प्रति
वितृष्णा से भर उठा हूँ।''

''बन्धु!'' यह शब्द आत्मीयता, क्लांत मन और करुण पुकार का संकेत है। यह युद्ध में घायल अंतःकरण की आवाज़ है, जो मित्र को संबोधित कर अपने भीतर की वेदना को बाँटना चाहता है।

कवि कहता है कि ऐसा युद्ध, ऐसी विजय और ऐसी प्राप्ति सब मिथ्या है। क्योंकि यह सब मनुष्य के रक्त और करुण चीत्कार की कीमत पर प्राप्त हुआ है। युद्ध से उत्पन्न नरसंहार, जिसे पहले राष्ट्र-गौरव समझा जाता था, अब कवि को अत्यधिक पीड़ा और वितृष्णा दे रहा है।

(6) विश्व बंधुत्व

सांस्कृतिक मूल्यों में विश्व बन्धुत्व की भावना का मूल्य सर्वोपरि है। मानव अपने जीवन में अगर सुख चाहता है। तो वह समाज में भी समता एवं शान्ति चाहता है। और समस्त विश्व में आनन्द की वृष्टि चाहता है जिनके अन्दर लोक हित (विश्व-बन्धुत्व) की भावना होती है।

आधुनिक युग में ऐसी भावनाएँ देखने को बहुत कम मिलती हैं। नरेश मेहता आधुनिक कवि हैं। परन्तु इनका काव्य

आधुनिकता को ओढ़े हुए प्राचीनता की अभिव्यक्ति करता है। इनके खण्डकाव्य "संशय की एक रात" में राम अपनी समस्या की विश्व की समस्या बनाना नहीं चाहते वह जनमानस को विपति में नहीं डालना चाहते वह बेगुनाहों के खून से लथपथ धरती पर पग रखती सीता की नहीं पाना चाहते। राम सारे काव्य में यही कहते हैं सीता मेरी व्यक्तिगत समस्या है में इसे विश्व की समस्या नहीं मानता—

''युद्ध नहीं होगा
क्योंकि सीता का हरण
राम की व्यक्तिगत समस्या है।''

निष्कर्ष

नरेश मेहता का काव्य भारतीय संस्कृति की गहराई, उदात्तता और आध्यात्मिक चेतना का जीवंत साक्ष्य है। उनके साहित्य में धर्म, सत्य, अहिंसा, श्रद्धा, तप, त्याग, करुणा और विश्व-बंधुत्व जैसे सांस्कृतिक मूल्यों की सशक्त उपस्थिति है। वे न केवल प्राचीन सांस्कृतिक परंपराओं को आधुनिक सन्दर्भों में प्रस्तुत करते हैं, बल्कि मानव को पदार्थ से चेतना की ओर अग्रसर करने का मार्ग भी प्रशस्त करते हैं।

उनकी सांस्कृतिक दृष्टि किसी एक जाति या सीमित भूगोल तक सीमित नहीं, बल्कि वह समग्र मानवता के लिए मंगलभाव से प्रेरित है। यही कारण है कि उनका काव्य जीवन-मूल्यों की खोज, युगबोध और मानवतावादी संवेदना से परिपूर्ण एक समन्वित सांस्कृतिक उद्‌बोधन बन जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

- श्री नरेश मेहता, "संशय की एक रात" लोकभरती प्रकाशन, संस्करण 2023, पृष्ठ 60
- श्री नरेश मेहता, "प्रवाद पर्व" लोकभरती प्रकाशन, संस्करण 2010, पृष्ठ 23
- श्री नरेश मेहता, "प्रवाद पर्व" लोकभरती प्रकाशन, संस्करण 2010, पृष्ठ 32
- श्री नरेश मेहता, "प्रवाद पर्व" लोकभरती प्रकाशन, संस्करण 2010, पृष्ठ 35
- श्री नरेश मेहता, "संशय की एक रात" लोकभरती प्रकाशन, संस्करण 2023, पृष्ठ पृष्ठ 16
- श्री नरेश मेहता, "संशय की एक रात" लोकभरती प्रकाशन, संस्करण 2023, पृष्ठ पृष्ठ 17
- श्री नरेश मेहता, "संशय की एक रात" लोकभरती प्रकाशन, संस्करण 2023, पृष्ठ 24
- श्री नरेश मेहता, "संशय की एक रात" लोकभरती प्रकाशन, संस्करण 2023, पृष्ठ पृष्ठ 31
- श्री नरेश मेहता, "संशय की एक रात" लोकभरती प्रकाशन, संस्करण 2023, पृष्ठ पृष्ठ 32
- श्री नरेश मेहता, "संशय की एक रात" लोकभरती प्रकाशन, संस्करण 2023, पृष्ठ पृष्ठ 54
- श्री नरेश मेहता, "संशय की एक रात" लोकभरती प्रकाशन, संस्करण 2023, पृष्ठ पृष्ठ 60

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

नागार्जुन की वैचारिकी में सामाजिकता-बोध

डॉ. मंटू कुमार साव
सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग
कालिम्पोंग कॉलेज, कालिम्पोंग- 734301
Email : shaw-mantoo@rediffmail.com

सारांश

नागार्जुन को प्रगतिशील काव्यधारा के आधार पर उनकी वैचारिकी का मूल्यांकन किया जाता है और मूलतः कवि के आधार पर साहित्य सृजन में एक तरह से पहचाना जाता हैं। इसके अलावा इनके उपन्यास को देखता जाता है। परन्तु काव्य-कथा साहित्य से इतर जब इनके कथेत्तर साहित्य पर नजर देते हैं तो सबसे पहले नागार्जुन के निबंध विधा की वैचारिकी से दर्शन होगा। जिसपर बहुत कम लिखा गया है। यह लेख नागार्जुन के निबंध विधा में छिपे वैचारिकी को सामने लाने का एक प्रयास है। वास्तव में नागार्जुन की काव्य-सृजन और कथा-भूमि की अनुहारिता में ही उनके निबंध भी प्राणवंत हैं।

प्रस्तावना

नागार्जुन की वैचारिकी किसी एक वाद से प्रभावित होकर जनवादी नहीं बनी है बल्कि कई वाद,कई युग और कई आंदोलनों से गुजरे हए नागार्जुन के रचना खण्डों में वैविध्यता के साथ एक प्रगतिशील वैचारिकी भी रही है। यही कारण है कि उनकी रचना में किसी वाद, आंदोलन के प्रति अंतर्विरोध या फिर संगति का होना स्वाभाविक-सा हो जाता है। कुछ लोग यह आरोप लगाते हैं कि नागार्जुन की विचारधारा अस्पष्ट है और अंतर्विरोधों से घिरी हुई है। नागार्जुन न तो विचार के दायरे गढ़ पाये हैं और न गढ़े हुए दायरे में अपने को रख पाये हैं। वे जिस विचारधारा को लेकर चलते हैं, वहाँ वह उसे युगीन समस्याओं के समाधान में सक्षम दीखते हैं और जहाँ अक्षम जान पड़ते हैं तो अपनी सोच की दिशा बदल देते हैं। वास्तव में उनकी वैचारिकी उत्पीड़ित जनता और शोषित तबके के लोगों से अपने को मुक्त नहीं कर पाते इसीलिए उनमें संस्थागत वैचारिक अस्थिरता है, किन्तु वर्गीय प्रतिबद्धता रचनाकार की राजनीतिक विचारधारा को स्पष्ट करती है और नागार्जुन की प्रतिबद्धता शोषित वर्ग और आम जन के साथ है।

बीज शब्द : चिन्तनोद्रभास, सिंहल-प्रवास, शख्सियत, राज्याश्रय, मशक्कत, भ्रष्टाचार, वैचारिकी, प्रतिबद्धता, लोकबन्धुत्व।

निबंध अभिव्यक्ति की बड़ी शक्तिमती विधा है, जिसमें जीवन-तृप्त, कला-द्विप्त, अभिजन-गंधी, साहित्यसाधकों जैसा लालित्योल्लास और चिन्तनोद्रभास ही नहीं, जीवन-संघर्षी, मूल-संधानी, लोकबन्धुत्व, शब्दकर्मी की जिजीविषा, भावोदिशा विचारोदिशा का अन्तर्भास देखने को मिलेगा। नागार्जुन जैसे कलमजीवी और साहित्यव्रती के लिए तो यह सब प्रकार से प्रग्राह्य और उपयोगी सिद्ध होता है। "बन्धन से मुक्ति का आग्रह यदि बाबा के व्यक्तित्व की केन्द्रीय पहचान है तो पूर्णतरू स्वच्छन्द विचाराभिव्यक्ति निबंध विधा की निजी मांग और वैशिष्ट्य है।"[1] सम्भवतः व्यक्तित्व और साहित्य की इस विधा की इस सूक्ष्म

अन्तर्एकता ने ही नागार्जुन को निबंध की ओर मुड़ने के लिए मजबूर किया। सच तो यह है कि नागार्जुन अपने विचारों की अभिव्यक्ति में तनिक भी संकोच नहीं करते हैं चाहे वह साहित्य की कोई भी विधा क्यों न हो। लेकिन अन्य विधाओं की तुलना में नागार्जुन अपनी बातों को सीधे-सीधे जन-सामान्य तक पहुँचाने के लिए निबंध को ज्यादा प्रश्रय देते हैं। वास्तव में " सिंहल-प्रवास के दौरान नागार्जुन वामपंथी विचारधारा के संवाहक बन चुके थे और वहीं 'लंकासम-समाज' के नेताओं से संपर्क गहरा होता गया। इधर भारत के किसान-आन्दोलन के नेता स्वामी सहजानंद से पत्र-व्यवहार चल रहा था। स्वामी सहजानंद के अतिरिक्त नागार्जुन का संपर्क सुभाषचंद्र बोस से भी हुआ था।"[2] महान विभूतियों से ही प्रभावित होकर ही नागार्जुन सम्पूर्ण मानवता के सहज प्रहरी बनकर अपनी आवाज बुलंद करते रहे हैं।

नागार्जुन के निबंध साहित्य में विषयगत विभिन्नता है। ''भाषा, साहित्य, इतिहास, समाज, भूगोल, संस्कृति, धर्म, साहित्यिक व्यक्तित्व आदि से सम्बन्धित विषयों पर तो उन्होंने लिखा ही, आम जन-जीवन की समस्याओं, यथार्थों, गैर-जरूरी-से लगने वाले प्रकरणों पर भी लिखा, जैसे मशक्कत की दुनिया, दिमागी गुलामी, सत्यानाश जल-प्रलय, बमभोलेनाथ, सर्कस रू कलकत्ते में आदि।"[3] उपर्युक्त सभी निबंधों में बिना किसी भाषिक कलावादी के नागार्जुन ने सर्वाधिक निबंध साहित्य और भाषा से सम्बन्धित लिखे हैं। 'उपन्यास ही क्यों' शीर्षक निबंध में आमजन के प्रति नागार्जुन की चिंता स्पष्ट भाव से दिख जाती है। वह मानता हैं कि आज के समय में किस तरह का उपन्यास पढ़ा जा रहा है। आमजन द्वारा जो किताबें पढ़ी जा रही हैं, उनमें पंचानवे फीसदी घासलेट उपन्यासों की संख्या ज्यादा है, जिसमें आम समस्या से इतर इश्क और जासूसी उपन्यासों की बाढ़-सी है। यही कारण है कि नागार्जुन अपने को 'मैं कवि हूँ अपनी जनता का' की भावभूमि पर खड़ा देखते हैं। वह कहते हैं कि "बड़ा साहित्यकार बनने की मेरी अभिलाषा नहीं है, क्योंकि उससे जन-सम्पर्क टूट जाएगा। मैंने साधारण जनता के बीच रहकर ही लिखना पसन्द किया है। मैं अपने को स्वयंसेवक मानकर पुस्तकें लिखता हूँ।"[4] वास्तव में एक रचनाकार के रूप में नागार्जुन सामाजिक विसंगतियों को समझते हैं और जनता के हक़ में अपनी बात रखते हैं। यही कारण है कि "नागार्जुन का व्यंग्य कहीं-कहीं अतितीक्ष्ण बनाकर औचित्य की सीमा का उल्लंघन कर उठता है।"[5]

'राज्याश्रय और साहित्य-जीविका' शीर्षक निबंध में नागार्जुन आगे लिखते हैं- "प्रेमचन्द ने एक पत्र में किसी को लिखा था कि "साहित्यकार को जीविका के लिए छोटी-मोटी नौकरी जरूर कर लेनी चाहिए। हर समझदार आदमी प्रेमचंद की इस बात का समर्थन करेगा। बंकिम, शरद, प्रेमचंद - कई साहित्यकार हो गये हैं जिन्होंने चाकरी भी की और साहित्य का निर्माण भी किया। शरद और प्रेमचंद ने तो बाद में नौकरी भी छोड़ दी, उसके बाद उनका सारा वक्त लिखने में ही बीता। ... बंगाल-महाराष्ट्र-गुजरात-तमिलनाडु-आंध्र-केरल-मैसूर-पंजाब आदि कई क्षेत्रों में इस कोटी के साहित्यकार मिलेंगे।"[6] नागार्जुन ऐसी रचना को नकार देते हैं जो विज्ञापन, राजदरबारी, उच्चाधिकारियों-मिनिस्टरों के लिए तैयार किया गया भाषण या फिर व्यक्ति प्रशंसा-पुराण हो। वह इसे जनहित के लिए लाभकारी नहीं मानते।" नागार्जुन की पूरी शख्सियत में अखिल भारतीय प्रभाव जज्ब होते चले गए हैं। उन्हें भारत के हर प्रदेश के रूप-रंग-गंध, भाव और भाषाएँ उनकी अपनी माँ-बोली मैथिली के मुकाबले हेय, फूहड़, करख्त, बडबोली उठाईगीर नहीं लगतीं।"[7] वास्तव में नागार्जुन के निबन्धों में उनका व्यक्तित्व नहीं बल्कि समूचा जन-चरित्र झलकता है।

'एक व्यक्ति : एक युग' शीर्षक निबंध में नागार्जुन लेखनी की ईमानदारी और समाज के प्रति समर्पण का भाव दिखाते हुए राहुल सांकृत्यायन के बारे में लिखते हैं कि "प्रतिष्ठा और सम्मान के पीछे वह कभी नहीं दौड़ा। बड़े से बड़े संकट की परवाह नहीं की। केवल स्वरनस्थ रहकर ही अनागत की आगवनी करना उसे असह्य रहा, रतजगा करके उसने अपने सपनों को रूप दिया और आकार प्रदान किया, फिर उसने प्राण-प्रतिष्ठा की है। बहुधा ऐसा अवसर आया जब कि अपना प्रिय औजार एक ओर रख वह उठा और स्वाधीनता-कामी सैनिकों की अगली कतार में जा खड़ा हुआ। एकाधिक बार उसका शरीर क्षत-विक्षत हुआ, स्वतन्त्रता के शत्रुओं ने उसका सर तक फोड़ डाला था।"[8] वास्तव में नागार्जुन महापंडित राहुल सांकृत्यायन के निशद-विशाल, प्रशस्त-प्रोज्ज्वल व्यक्तित्व एवं कृतित्व को पूरी समाहिति से उत्कलित कर देते हैं। 'आइने के सामने' और 'विषकीट' निबंध भी इसी तरह के भावचिंतन से जुड़े हुए हैं, जिनमें व्यक्तित्व को सामाजिक-सांस्कृतिक-साहित्यिक

समस्याओं-समारोहों को एक साथ करके दिखाने का प्रयास किया है। व्यक्ति केन्द्रित होने के बाद भी वह समाज से जुड़ा हुआ है। सामाजिक समस्याओं को लेकर नागार्जुन का निबंध साहित्य हमेशा प्रतिगामी शक्तियों को चुनौती देता नजर आता है।

'मशक्कत की दुनिया' शीर्षक निबंध में जहाँ आध्यात्मिकता की धज्जियाँ उड़ाते हैं और कहते हैं" यों तो दुनिया के हरेक कोने का आदमी अपने जीवन-भर सुविधा और आराम खोजता रहता है और उसकी तमाम हरकतें केवल सुखपूर्वक रहने के लिए, बेहतर जिंदगी बसर करने के लिए ही होती हैं। और यह बात न तो बुरी है और न अस्वाभाविक ही, लेकिन यह एक कटु सत्य है कि पिछली दस-बारह सदियों से हमारी खोखली आध्यात्मिकता दिन-प्रतिदिन हमें भाग्य के भरोसे छोड़ कम-से-कम हाथ-पैर चलाकर ज्यादा-से-ज्यादा पाने की घातक सीख देती आयी है और आज सारी दुनिया मेहनत से जी चुराने वाली हमारी विराट जाति के आध्यात्मिक जगद्-गुरुत्व पर चुटकियाँ ले रही है।"[9] वही 'अन्नहीनम् क्रियाहीनम्' निबंध में नागार्जुन ने सूखे की मार सहती बिहार की जनता की पीड़ा और इस समस्या के प्रति शासक वर्ग की उदासीनता को तीखे व्यंग्य के साथ बहुत मार्मिक रूप से चिंहित किया है। लेखक की मौसी पोस्टकार्ड में यथार्थ का बयान करते हुए लिखती हैं- "बबुआ, इस बार चुटकी भर भी धान नहीं देख सकूँगी। हथिया डाका डाल गया है। खेतों में अबके जो दरारें फटी हैं, बेहद डरावनी लगती हैं। तुम तो देहात के दुख-सुख को आधार बनाकर पोथी तैयार करते हो, अपनी निगाहों से देखकर इधर का हाल-समाचार मालूम कर जाओ बेटा।"[10] बिहार की इस स्थिति को देखकर लेखक को कहना पड़ता है- "अन्दर से बार-बार यही एक आवाज आने लगी कि जनता अन्नहीन है और शासक वर्ग क्रियाहीन और विधिहीन यानी कि बेशऊर (बुड़बक) कौन है? ऑफिसर वर्ग और कर्मचारीगण।"[11] 'फर्स्ट क्लास फर्स्ट' निबंध में लड़कियों को जीवन साथी चुनने की स्वतंत्रता से जुड़े सवालों को उठाया गया है।

'भ्रष्टाचार का दानव' निबंध में नागार्जुन ने भारतीय समाज व्यवस्था के समक्ष सबसे बड़ी चुनौती के रूप में भ्रष्टाचार को उभारने का प्रयास किया है। "भ्रष्टाचार के खिलाफ बहुत कुछ कहा जा रहा है। हमारे बड़े-बड़े नेता और जन-समाज के विशिष्ट व्यक्ति भ्रष्टाचार पर कड़ी से कड़ी राय प्रकट करते रहते हैं। समाचार-पत्रों के कालम भ्रष्टाचार-विरोधी मन्तव्यों से भरे रहते हैं। छोटी गोष्ठियों से लेकर सभाओं तक में भ्रष्टाचार-विरोधी बातें उछाली जाती हैं।"[12] निबंध के अन्त में इन सभी पर व्यंग्य करते हुए कहते हैं कि "साधारण जनता के जीवन की दुर्दशा के लिए माल-मलाई चाभने वाले हवाई सन्त और सत्तासीन बेईमान राजनेता सबसे ज्यादा जिम्मेदार हैं।"[13] उनका मानना है कि यह भ्रष्टाचार हमारे मौजूदा समाज की तहों में घुला-मिला है। और आगे कहते हैं कि भ्रष्टाचार को वह व्यवस्था की गड़बड़ी के रूप में न देखकर अपने नैतिक पतन के रूप में देखते हैं।

'पेट का धर्म : इन्सान का धर्म' भाषिक स्तर पर एक छोटी टिप्पणी है जिसमें करोड़ों निरूस्व-सर्वहारा जनों के मूल धर्म (पेट-धर्म) का यथार्थ रूप में चित्रण किया गया है। इसमें एक स्थान पर लिखा गया है कि सनातन काल से यह तथ्य मान लिया गया है कि पेट का धर्म ही सबसे बड़ा धर्म होता है। वास्तव में नागार्जुन यथार्थवादी हैं और फेनिल आदर्शवाद के विरोधी हैं। उन्होंने इस टिप्पणी में धर्मान्तरण के मामले को आधार बनाकर अमानवीय हिन्दू-धर्मवादियों को सिरे से फटकारा है। धर्म की छतरी के नीचे भूखे इन्सान का तड़प-तड़प कर मर जाना नागार्जुन को बर्दाश्त नहीं होता है। वह इसे बड़ा पाप मानते हैं। ऐसी स्थिति में वह कहते हैं- "तुम ईसाई बन जाओ, बौद्ध बन जाओ, चाहे जैसे हो, पेट भरो। मजहब और इन्सानियत को लात मारो। तुम अपने को सच्चे अर्थों में आजाद कर दो! आखिर सर्वहारा सर्वहारा ही होता है, उसका कोई धर्म नहीं होता। जीती-जागती इन्सानियत और समूची दुनिया में फैली-सर्वहारा जनों की बिरादरी के लिए अखूट कुर्बानी ही इसका सच्चा धर्म होता है।"[14]

'मशक्कत की दुनिया' और 'बम्भोलेनाथ' शीर्षक निबंधों में नागार्जुन बड़े ही सहज ढंग से श्रम की महत्ता को उजागर करते हैं। समाज में निर्लिप्त रहने वाले ढोंग करते उसमें लिप्त रहने वाले साधुओं-पंडितों की तुलना में गन्दगी साफ करने वाला एवं घृणित समझा जाने वाला मेहतर को महान माना है, क्योंकि मेहतर का जीवन श्रम पर आधारित होता है। निःसंदेह दलितों, शोषितों, निम्न एवं हेय समझे जाने वाले लोगों के पक्ष में हर जगह - हर समय खड़ा रहना नागार्जुन की साहित्य

रचना का प्रमुख लक्ष्य है।

'भूख, गरीबी, अशिक्षा और बेरोजगारी' शीर्षक निबंध बाबरी मस्जिद ढहा देने के बाद लिखा गया है। नागार्जुन इस घटना से बहुत आहत हैं और हिन्दुत्ववादी नजरिये को भयानक नाद के रूप में परिभाषित करते हुए कहते हैं कि- 'गर्व से कहो। हम हिन्दू हैं'। इस तथ्य का नागार्जुन ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य को आधार बनाकर खण्डन करते हैं। वह कहते हैं कि विवेकानन्द ने पहली बार कहा था कि 'गर्व से कहो। हम हिन्दू हैं'। उनके सामने प्रश्न यह था कि दुनिया में सभ्य देशों के समक्ष अंग्रेज शासक भारतीयों को जाहिल-अनपढ़-संस्कारविहीन घोषित करते रहते थे। तभी क्षुब्ध होकर उस पुनर्जागरण काल में 1892 में विवेकानन्द ने जोर देकर कहा था कि 'गर्व से कहो। हम हिन्दू हैं'। परन्तु आज इसका सार्थक और प्रासंगिक अर्थ बदल गया है। आज विवेकानन्द द्वारा भारतीय मानवतावादी चिंतन घने कोहरे में छिप-सा गया है। नागार्जुन के लिए भारत की बुनियादी समस्या बाबरी-अयोध्या मसला नहीं है बल्कि रोटी, कपड़ा और मकान के साथ आम जन की वैज्ञानिक समझदारी के विकास से है। भारी मानसिकता में छटपटाते हुए नागार्जुन आगे कहते हैं कि -राजनीति स्वार्थसाधन की सीढ़ियाँ प्रदान करती है हमको। सत्तान्धता में दक्षिणपंथी, वामपंथी और मध्यपंथी सब समान है।[15] यही कारण है कि नागार्जुन ने वर्ण-व्यवस्था और राजनीति-व्यवस्था की जगह श्रम-व्यवस्था को स्थापित कर प्रगतिशील साहित्य भूमि को स्थापित करने का प्रयास किया है और यह भी मानते हैं कि आर्थिक उत्पादन और पारिश्रमिक तथा लाभ पर समाज का पूर्ण अधिकार हो।

निष्कर्षतः नागार्जुन का निबंध की भूमि आकार में छोटे होने के बावजूद लोकधर्मिता का एक व्यापक परिदृश्य बनाए हुए हैं। विभिन्नता और रचना के कई स्तर होने के बाद भी सामाजिक-राजनीतिक और सांस्कृतिक समस्याओं का समाधान ढूँढ़ती नजर आती है। वास्तव में नागार्जुन की वैचारिकता को समझने में उनका निबंध साहित्य भी ज्यादा कारगर साबित होगा।

संदर्भ

1. राय, डॉ. आशुतोष, नागार्जुन का गद्य साहित्य, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण-2006, पृष्ठ-178
2. डॉ. सत्यनारायण, नागार्जुन : कथा और कथाकार, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-2010, पृष्ठ- 6
3. राय, डॉ. आशुतोष, नागार्जुन का गद्य साहित्य, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण-2006, वही पृष्ठ- 179
4. त्रिपाठी, रामशंकर, नागार्जुन निबंध निकाय, कोशल पब्लिशिंग हाउस, फैजाबाद, प्रथम संस्करण 2012, पृष्ठ-71
5. मदान, डॉ. इंद्रनाथ, आधुनिका कविता का मूल्यांकन, हिंदी भवन, इलाहाबाद, 1962, पृष्ठ- 18
6. त्रिपाठी, रामशंकर, नागार्जुन निबंध निकाय, कोशल पब्लिशिंग हाउस, फैजाबाद, प्रथम संस्करण 2012, वही, पृष्ठ -71-72
7. आलोचना, अंक 56-57, पृष्ट- 235
8. शोभाकान्त, नागार्जुन रचनावाली, खण्ड-6, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-2003, पृष्ठ 154
9. वही, पृष्ठ-90-91
10. वही, पृष्ठ-192
11. वही, पृष्ठ-192
12. वही, पृष्ठ-249-250
13. वही, पृष्ठ-252
14. वही, पृष्ठ-286-287
15. वही, पृष्ठ-289

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

कुँवर नारायण की कविता में मिथकों का अतिक्रमण : एक समकालीन दृष्टिकोण

डॉ. अनिता कुमारी जाट
असिस्टेंट प्रोफेसर, राजकीय महाविद्यालय कालवाड़ (विद्या सम्बल)

कुँवर नारायण हिंदी साहित्य के ऐसे महत्वपूर्ण कवि हैं जिन्होंने परंपरा और आधुनिकता के मध्य एक विचारशील पुल का निर्माण किया। उनका काव्य मिथकीय कथाओं, ऐतिहासिक संदर्भों और दार्शनिक प्रश्नों के माध्यम से समकालीन जीवन की जटिलताओं की पड़ताल करता है। उनकी कविताओं में मिथकों का अतिक्रमण केवल एक कलात्मक शैली भर नहीं है, बल्कि यह एक ऐसा सृजनात्मक हस्तक्षेप है जो परंपरा की सीमाओं को पार कर आधुनिक चेतना को स्थान देता है।

भारतीय साहित्यिक परंपरा में मिथकों का एक विशिष्ट स्थान रहा है। मिथक न केवल धार्मिक या सांस्कृतिक कहानियों का संकलन हैं, बल्कि वे मानवीय अनुभवों और सामूहिक स्मृतियों के संरक्षक भी हैं। परंतु कुँवर नारायण इन्हें अपरिवर्तनीय या 'स्थायी सत्य' के रूप में नहीं देखते, बल्कि इनका समकालीन पुनर्पाठ करते हैं। वे मिथकों को आधुनिक संदर्भों में पुनर्स्थापित कर उन्हें जीवन्त बना देते हैं।

कुँवर नारायण का खंडकाव्य "आत्मजयी" कठोपनिषद की नचिकेता-कथा पर आधारित है। यह रचना मृत्यु और आत्मा जैसे शाश्वत विषयों पर आधारित होते हुए भी पूर्णतः आधुनिक चेतना की अभिव्यक्ति है। नचिकेता की जिज्ञासा, उसका यमराज से प्रश्न करना और उसकी दृढ़ता इस बात का प्रमाण है कि वह किसी भी दार्शनिक उत्तर को आंख मूंदकर स्वीकार नहीं करता।

"मैं जानना चाहता हूँ... कि मृत्यु क्या है?"[1]

इस पंक्ति के माध्यम से कुँवर नारायण ने पारंपरिक मिथकों का अतिक्रमण करते हुए उन्हें आधुनिक दृष्टिकोण से पुनर्परिभाषित किया है, जो उनकी कविताओं की एक प्रमुख विशेषता हैन केवल प्रश्नात्मकता की भावना दर्शाती हैं, बल्कि यह भी इंगित करती हैं कि यह चेतना परंपरा के अंधानुकरण से आगे निकलकर तर्क और विवेक की ओर बढ़ रही है। यहाँ नचिकेता किसी धार्मिक ग्रंथ का पाठक नहीं, बल्कि आधुनिक मानव का प्रतीक है जो ज्ञान के लिए स्वयं प्रयास करता है।

नचिकेता संसार के धार्मिक कर्मकाण्ड, राजकीय वैभव और अपने अन्दर के मिथ्या तत्त्वों को पहचान लेता है। वह अपने सरोकार को व्यापक विचार को बहुल और युयुत्सा को प्रखर करना चाहता है। वह सत्य के लिए लडता है, और अपने पिता से कहता है–

"असहमति को अवसर दो। सहिष्णुता को आचरण दो
कि बुद्धि सिर ऊँचा रख सके
उसे हताश मत करो काइयाँ स्वार्थों से हरा भरा कर।
अविनय को स्थापित मत करो
उपेक्षा से खिन्न न हो जाए नहीं
मनुष्य की साहसिकता।" [2]

इस तरह नचिकेता प्राचीन मिथकों का अतिक्रमण करता है, और अपने पिता को स्वार्थ न करने और सत्य के मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करता है। 'आत्मजयी' में कुँवर नारायण के वास्तविक जीवन के तीखे एहसास उनकी विचार प्रक्रिया अनुशासित हैं कुँवर नारायण के अनुसार अमर जीवन का अर्थ अमर जीवन मूल्य है, जो व्यक्ति जगत का अतिक्रमण करके सार्वकालिक और सार्वजनिन बन जाते है

कोई दूसरा नहीं में कुँवर नारायण ने मिथकीय, ऐतिहासिक और सांस्कृतिक प्रतीकों को व्यक्तिगत संवेदना के साथ जोड़कर प्रस्तुत किया है। यहाँ 'राम', 'कृष्ण', 'अर्जुन' जैसे पात्र केवल देवता नहीं हैं, बल्कि मानवीय द्वंद्वों से जूझते संवेदनशील पात्र हैं।

कोई दूसरा नहीं' संग्रह की 'महाभारत अयोध्या 1992' तथा क्रौच वध कविताओं में मिथकों का स्पष्ट प्रयोग दिखता है, इन मिथकों के माध्यम से कवि ने समकालीन राजनीति में अंधेरा, स्वार्थ, चुनावी बेईमानी जो मिथकों का अतिक्रमण करती सी लगती है। 'महाभारत' कविता में चुनाव क्षेत्र को लेकर उनका आपसी संघर्ष और जीत के लिए देश का विभाजन स्पष्ट नजर आता है—

''न धर्मक्षेत्रे न कुरूक्षेत्र
सीधे सीधे चुनाव क्षेत्रे-
जीत की प्रबल इच्छा से
इकट्ठा हुए महारथियों के
ढपोरशंखी नाद से
युद्ध का श्री गणेश।
एक ओर रथ पर
शान्त भाव से गीता पकड़े
श्रीकृष्ण
दूसरी ओर एक हाथ से गाडीव
और दूसरे से अपना सिर पकड़े गुडाकेश
देख रहे
भारत से महाभारत होता हुआ एक देश। [3]

यहाँ अर्जुन (गुडाकेश) केवल पौराणिक पात्र नहीं, बल्कि हर उस व्यक्ति का प्रतीक बन जाता है जो जीवन में किसी नैतिक द्वंद्व से गुजर रहा है। इस प्रकार मिथक का अतिक्रमण करते हुए कवि समकालीन मनुष्य की चिंता को केंद्र में रखता है।

''कुँवर नारायण मिथकों को पूज्य नहीं बनाते, बल्कि उन्हें प्रश्न करते हैं, पुनर्परिभाषित करते हैं और उनके माध्यम से आधुनिक समाज को संबोधित करते हैं। वे मिथकों को मनुष्यता, विवेक और नैतिकता के धरातल पर पुनर्स्थापित करते हैं। उनकी यह शैली उन्हें हिंदी साहित्य में विशिष्ट बनाती है।''[4]

इस तरह कुँवर नारायण की कविता में मिथकों का अतिक्रमण उनकी सबसे मौलिक विशेषताओं में से एक है। वे परंपरा के सम्मान के साथ उसे चुनौती देने का साहस भी रखते हैं। उनके काव्य में मिथक न तो केवल अलंकार हैं, न ही धार्मिक प्रतीक बल्कि वे विमर्श के जीवंत उपकरण हैं। समकालीन दृष्टिकोण के साथ प्रस्तुत उनके मिथकीय पात्र हमें हमारी ऐतिहासिक चेतना और वर्तमान संकटों के बीच एक संवाद रचने का अवसर प्रदान करते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. कुँवर नारायण, "आत्मजयी'', राजकमल प्रकाशन, 1970, पृ 20 -40
2. रचना और समालोचना , डॉ. हरदयाल, ज्ञान गंगा प्रकाशन 2003 पृष्ठ 67
3. कुँवर नारायण संसार, सं. यतीन्द्र मिश्र, वाणी प्रकाशन, 2002, पृ. 136
4. डॉ. प्रवीण कुमार, "काव्य-भाषा की कसौटी और कुँवर नारायण का काव्य-लोक'', अपनी माटी पत्रिका, 2023

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

अभिजात्य एवम् सामान्य वर्ग की छात्राओं की शैक्षिक अभिप्रेरणा का अध्ययन

डॉ. महेश कुमार शर्मा
सहायक प्रोफेसर, प्राचार्य : डी.एल.एड.
(पूर्व शोध निर्देशक व परीक्षा नियंत्रक) शिक्षा संकाय, आई.ए.एस.ई.
(मानित विश्वविद्यालय), गाँधी विद्या मन्दिर, सरदारशहर, चूरु
मोबा. : 9460563985

प्रस्तावना

''वर्ग ऐसे व्यक्तियों का समूह है जो व्यवसाय, धन, शिक्षा, विचारों, भावनाओं, मनोवृत्तियों और व्यवहारों में एक-दूसरे से असमान होते हैं। इन्हीं असमानताओं के आधार पर समाज का श्रेणियों में विभाजित होना और इन श्रेणियों द्वारा वर्गों का रूप ले लेना समाज में वर्ग विभाजन का आधार है। इसी आर्थिक असमानता के कारण मानव समाज ने स्वयं को भी तीन वर्गों में विभक्त कर लिया है। जैसे- निम्न वर्ग, मध्यम (सामान्य) वर्ग, उच्च (अभिजात्य) वर्ग। निम्न वर्ग से अभिप्राय उस वर्ग से है जिनकी आय एवं शिक्षा कम होती है तथा जिनका जीवन अभावग्रस्त होता है। अर्थात् गरीबी रेखा से नीचे जीवनयापन करने वाला वर्ग निम्न वर्ग है। मध्यम या सामान्य वर्ग से तात्पर्य उस वर्ग से है जिसके पास न तो अधिक सम्पत्ति है और न ही उन्हें अधिक अधिकार प्राप्त हैं, अर्थात् जो उच्च वर्ग और निम्न वर्ग के बीच का वर्ग है। इस वर्ग में प्रबन्धक, कुशल कारीगर, अफसर, वकील, डॉक्टर, इन्जीनियर आदि आते हैं। अभिजात्य वर्ग या उच्च वर्ग वह वर्ग है जो सत्ता का उपभोग करते हैं तथा पूर्ण रूप से भौतिकवादी हैं। जैसे- उद्योगपति, पूँजीपति, राजनीतिज्ञ आदि। चूँकि हमारा समाज विभिन्न वर्गों में विभाजित है, फिर भी कोई व्यक्ति अपने गुणों, शिक्षा के आधार पर इनमें से किसी वर्ग की सदस्यता ग्रहण कर सकता है। इस अध्ययन में समाज के इन वर्गों में से दो वर्गों (सामान्य वर्ग तथा अभिजात्य वर्ग) की छात्राओं की शैक्षिक अभिप्रेरणाओं का तुलनात्मक अध्ययन कर यह जानने का प्रयास किया है कि किस वर्ग की छात्राओं में शैक्षिक अभिप्रेरणा अधिक है तथा उनका का स्तर कैसा है।

अध्ययन का महत्व :

अभिप्रेरणा मुख्य रूप से शिक्षार्थी के अपने मूल्यांकन पर बल देती है। अपने कार्य व अपनी योग्यता के सम्बन्ध में उसे समझने अपनी पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक स्थिति के सम्बन्ध में उसका ध्यान आकर्शित करती है। शिक्षार्थी को इस योग्य बनाती है कि वे अपने कार्य क्षेत्र में अपनी भूमिका के सम्बन्ध में अपना योगदान तय कर सके, वह आगे बढ सकें। अभिप्रेरणा के कारण व्यवहार में सक्रियता, लक्ष्योन्मुखता तथा निरन्तरता प्रदर्शित होती है और लक्ष्य की प्राप्ति तक व्यवहार में निरन्तरता बनी रहती है।

अभिप्रेरणा का सम्बन्ध उन कारकों से है जो मानव शरीर को गतिमान करते हैं। मानव व्यवहार को नियन्त्रित, निर्देशित तथा रूपांतरित करने में जिन कारकों की भूमिका होती है उनमें अभिप्रेरणा अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। बिना किसी प्रेरणा से प्रेरित हुआ व्यक्ति किसी कार्य को नहीं करता। इस दृष्टि से अभिप्रेरणा एक ध्यानकर्षण एवं प्रलोभन की क्रिया है जिसके परिणामस्वरूप व्यक्ति के अन्दर किसी कार्य को करने की इच्छा एवं जिज्ञासा उत्पन्न होती है। वस्तुतः अभिप्रेरणा अंग्रेजी शब्द का हिन्दी अनुवाद है जिसकी उत्पत्ति लैटिन भाषा के शब्द मोटम (Motum) या मोवेयर से हुई है। जिसका अर्थ है (जव move) गति करना अर्थात् जो भी कारक जीवन को गति देता है, कार्य कराने के लिए उत्तरदायी होता है। इस प्रकार अभिप्रेरणा के शाब्दिक अर्थ में हमें किसी अनुक्रिया को करने का बोध होता है। अभिप्रेरणा का तात्पर्य व्यक्ति की उस आन्तरिक स्थिति से है जो किसी विशेश परिस्थिति में व्यक्ति को अपने लक्ष्य तक पहुँचाने के लिए क्रियाशील करता है। अभिप्ररेणा-प्राणी के शरीरयन्त्र की चालक शक्ति है इसके अभाव में वह कार्य नहीं कर सकता है।

अध्ययन का औचित्य

प्रस्तुत विशय का शोध हेतु चयन इसलिए औचित्यपूर्ण है कि जिससे हम जान सकेंगे कि आज की शिक्षा प्रणाली का विभिन्न वर्गों की छात्राओं की शैक्षिक अभिप्रेरणा पर क्या प्रभाव पड़ रहा है। अतः शोधकर्त्री ने यह महसूस किया है कि समाज में बालिकाओं के विकास के लिए समुचित व्यवस्था नहीं है, उनकी शैक्षिक अभिप्रेरणा तथा उनके लिए समुचित विद्यालय वातावरण की भी समुचित व्यवस्था नहीं है। इसलिए 'ोधकत्री ने प्रस्तुत समस्या का चयन किया है।

समस्या कथन

''अभिजात्य एवम् सामान्य वर्ग की छात्राओं की शैक्षिक अभिप्रेरणा का अध्ययन''

"A Study of Educational Motivation of Girls Students of Elite & General Groups."

अध्ययन के उद्देश्य

1. अभिजात्य एवम् सामान्य वर्ग की छात्राओं की शैक्षिक अभिप्रेरणा का अध्ययन करना।
2. अभिजात्य एवम् सामान्य वर्ग की शहरी छात्राओं की शैक्षिक अभिप्रेरणा का अध्ययन करना।
3. अभिजात्य एवम् सामान्य वर्ग की ग्रामीण छात्राओं की शैक्षिक अभिप्रेरणा का अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पनाएँ

1. अभिजात्य एवम् सामान्य वर्ग की छात्राओं की शैक्षिक अभिप्रेरणा में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
2. अभिजात्य एवम् सामान्य वर्ग की शहरी छात्राओं की शैक्षिक अभिप्रेरणा में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
3. अभिजात्य एवम् सामान्य वर्ग की ग्रामीण छात्राओं की शैक्षिक अभिप्रेरणा में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

परिसीमन

1. शोध के क्षेत्र में राजस्थान राज्य के चूरू जिले की तहसील सरदारशहर और चूरू को सम्मिलित किया गया है।
2. माध्यमिक स्तर की छात्राओं में अभिजात्य एवं सामान्य वर्ग की 200 छात्राओं को चयनित किया गया है।

शोधविधि

प्रस्तुत अध्ययन में सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है क्योंकि अनुसंधान की यह एक वैज्ञानिक विधि है। इस विधि द्वारा प्राप्त निष्कर्ष वैध एवं विश्वसनीय होते हैं।

अध्ययन में प्रयुक्त उपकरण

शैक्षिक अभिप्रेरणा मापनी :-

डॉ॰ टी॰ आर॰ शर्मा द्वारा निर्मित शैक्षिक अभिप्रेरणा मापनी का प्रयोग किया गया है।

अध्ययन में प्रयुक्त सांख्यिकी

प्रस्तुत शोध अध्ययन में प्रयुक्त सांख्यिकी मध्यमान (M), प्रमाणिक विचलन (D) एवं क्रांतिक अनुपात मान (C.R. Value) की गणना की जायेगी।

समंकों का सारणीयन एवं विश्लेषण

प्रस्तुत शोधकार्य में अनुसंधानकत्री ने संकलित एवं व्यवस्थित आंकड़ों का विश्लेशण जिस प्रकार किया है, उसका परिकल्पनानुसार विवरण निम्न प्रकार है -

सारणी संख्या - T.IV.1

अभिजात्य एवम् सामान्य वर्ग की छात्राओं की शैक्षिक अभिप्रेरणा के मध्यमानों के अन्तरों की सार्थकता

छात्राएँ	संख्या (N)	माध्य (Mean)	मानक विचलन (S.D.)	क्रांतिक अनुपात (CR.Value)	सार्थकता स्तर	
					.05	.01
अभिजात्य वर्ग	200	12.51	3.00	0.42	सार्थक अन्तर नहीं हैं।	
सामान्य वर्ग	200	12.39	2.87			

Table value at .05 level is 1.96 on df 398

विश्लेषण

उपर्युक्त सारणी में गणना द्वारा प्राप्त मान तालिका मान से कम है। इस आधार पर परिकल्पना को स्वीकृत किया जाता है। अर्थात् अभिजात्य एवम् सामान्य वर्ग की छात्राओं की शैक्षिक अभिप्रेरणा में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

सारणी संख्या - T.IV.2

अभिजात्य एवम् सामान्य वर्ग की शहरी छात्राओं की शैक्षिक अभिप्रेरणा के मध्यमानों के अन्तरों की सार्थकता

शहरी छात्राएँ	संख्या (N)	माध्य (Mean)	मानक विचलन (S.D.)	क्रांतिक अनुपात (CR.Value)	सार्थकता स्तर	
					.05	.01
अभिजात्य वर्ग	100	12.33	2.82	0.51	सार्थक अन्तर नहीं हैं।	
सामान्य वर्ग	100	12.54	2.87			

Table value at .05 level is 1.96 on df 198

विश्लेषण

उपर्युक्त सारणी में गणना द्वारा प्राप्त मान तालिका मान से कम है। इस आधार पर परिकल्पना को स्वीकृत किया जाता है। अर्थात् अभिजात्य एवम् सामान्य वर्ग की शहरी छात्राओं की शैक्षिक अभिप्रेरणा में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

सारणी संख्या - T.IV.3

अभिजात्य एवम् सामान्य वर्ग की ग्रामीण छात्राओं की शैक्षिक अभिप्रेरणा के मध्यमानों के अन्तरों की सार्थकता

शहरी छात्राएँ	संख्या (N)	माध्य (Mean)	मानक विचलन (S.D.)	क्रांतिक अनुपात (CR.Value)	सार्थकता स्तर	
					.05	.01
अभिजात्य वर्ग	100	14.07	2.46	1.59	सार्थक अन्तर नहीं हैं।	
सामान्य वर्ग	100	13.67	2.45			

Table value at .05 level is 1.96 on df 198

विश्लेषण

उपर्युक्त सारणी में गणना द्वारा प्राप्त मान तालिका मान से कम है। इस आधार पर परिकल्पना को स्वीकृत किया जाता है। अर्थात् अभिजात्य एवम् सामान्य वर्ग की ग्रामीण छात्राओं की शैक्षिक अभिप्रेरणा में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

प्रस्तुत अध्ययन की शैक्षिक उपयोगिता

इस अध्ययन के बाद बालिका शिक्षा के लिये प्रोत्साहन योजनाएँ लागू हो सकेगी। बालिकाओं के लिए उचित स्नेह, सही दिशा, उत्तम शिक्षा, निःशुल्क पाठ्यपुस्तकों का वितरण, छात्रवृत्तियाँ, प्रतिभावान बालिकाओं के प्रोत्साहन हेतु गार्गी पुरस्कार, प्रियदर्शिनी पुरस्कार योजना, बालिका शिक्षा फाउन्डेशन की स्थापना, छात्रावासों की स्थापन, छात्रावासों की स्थापना आदि योजनायें व्यापक करने पर बल दिया जा सकता है। शैक्षिक तकनीकी साधन उपलब्ध करवाये जा सकेंगे। बालिका शिक्षा का उत्थान करने के लिये समाज में व्याप्त संकीर्ण मानसिकता में बदलाव लाया जाना संभव है। बालिका शिक्षा हेतु स्वस्थ वातावरण, सुविधा, स्वास्थ्य हेतु विशेष प्रशिक्षण तथा समाज में बालिकाओं के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण का विकास और 'बालक बालिका एक समान' का सिद्धान्त प्रतिपादित करने पर बल दिया जा सकता है।

हिन्दी संदर्भ साहित्य

1. मेमोरिया, श्रीमती सरिताः ''शिक्षा का नैतिकता पर प्रभाव'', बोर्ड शिक्षण पत्रिका खण्ड 40-41
2. शर्मा, वन्दना एवं राजकुमारीः ''शिक्षा मनोविज्ञान एवं मापन'', 2006 राधा प्रकाशन, आगरा, पृष्ठ संख्या-92
3. सारस्वत, डॉ. मालतीः शिक्षा मनोविज्ञान की रूपरेखा (2006), आलोक प्रकाशन लखनऊ पेज -451
4. श्रीवास्तव जे.पी. एवं मित्तल एम.एल. : 'आधुनिक भारतीय शिक्षा' (1991) ईगल बुक इण्टरनेशनल, मेरठ, पृ.सं. 24
5. श्रीवास्तव, डी.एन., एवं वर्मा, प्रीति : ''आधुनिकः सामान्य मनोविज्ञान, विनोद पुस्तक मंदिर आगरा, 2001, पृ.सं. 490
6. अग्रवाल जे.सी. : ''स्वतन्त्र भारत में शिक्षा का विकास' 2000, आर्य बुक डिपो, 30, नाईवाला, करोल बाग, नई दिल्ली, पृ.सं. 252
7. पाण्डेय रामशकल :''शिक्षा मनोविज्ञान''(2007) विनोद पुस्तक मंदिर आगरा पृ. संख्या-133-136
8. भटनागर, आर.पी. : ''शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्व'', 1973, द्वितीय संस्करण विनोद पुस्तक मंदिर आगरा पृ.

संख्या-107
9. श्री वास्तव, डी.एन. और वर्मा प्रीति : ''शिक्षा अनुसंधान में सांख्यिकी विधियाँ, (2004) विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा
10. हकीम, एम.ए. और अस्थाना विपिनः ''मनोविज्ञान की शोध विधियाँ'' (1994) विनोद पुस्तक मंदिर आगरा पृ. संख्या-169
11. यादव, एम.आर. : ''अनुसंधान परिचय'', 2005, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, पृ.सं. 74
12. व्यास, हरिशचन्द्र : ''हम और हमारी शिक्षा'' (2001), पंचशील प्रकाशन चौड़ा रास्ता, जयपुर, पृ.सं. 17
13. त्रिवेदी आर.एन. एवं शुक्ला डी.पी.ः रिसर्च मैथ्डोलॉजी' (2008) कॉलेज बुक डिपो जयपुर पेज 321

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Beyond Utility: The Intrinsic Value of Justice in the Human Experience

Dr. Gauranga Das
Assistant Professor, Department of Philosophy,
Kalimpong College, Kalimpong, West Bengal,
India, Pin Code: 73430
Email: gdasindianphilosophy@gmail.com

Abstract:

The idea of justice is usually explained in terms of its practical advantages, such as how it reduces conflict, encourages cooperation, or establishes social order. This article contends that justice has a deep inherent worth that is ingrained in the human experience, even though these utilitarian features are indisputable and essential to society's operation. We argue that the pursuit and experience of justice is not just a means to an end, but an end in and of itself, directly promoting psychological flourishing, personal fulfillment, and a sense of purpose. We base this on interdisciplinary insights from philosophy, psychology, anthropology, and even neuroscience. We examine how justice fulfills the basic human demands for equity, dignity, and respect and how its absence causes great suffering regardless of the short-term material effects. Beyond just consequentialist explanations, this article promotes a deeper comprehension of justice's role in creating a genuinely meaningful and fulfilling human existence by emphasizing its inherent worth.

Keywords: Justice, Intrinsic Value, Human Experience, Psychological Well-being, Meaning, Dignity, Fairness, Flourishing, Non-consequentialism, Moral Psychology.

1. Introduction: Reclaiming Justice's Inherent Worth

Discussions surrounding justice often gravitate towards its practical utility. We discuss how justice prevents crime, facilitates economic exchange, and maintains political stability. These are valid and important functions, often highlighted by social contract theories (Hobbes, 1651; Locke, 1689) or utilitarian approaches (Mill, 1863). Even while these utilitarian viewpoints are correct, they run the risk of ignoring something deeper: the inherent worth of justice in the human condition. This essay seeks to refocus the discussion on the reasons that justice is important for what it is and how it essentially improves both individual and societal human lives, rather than merely what it does.

We contend that a deeper, innate understanding of justice's moral correctness and its relationship to fundamental elements of human dignity, meaning, and psychological well-being drives people's desire for it rather than just calculating gains or avoiding harms. We will examine this by

looking at anthropological insights into the universal human meaning of justice, psychological evidence of justice as an end in itself, and philosophical reasons for intrinsic value.

Methodology:

This study will employ a mixed-methods approach, integrating qualitative and quantitative research strategies to comprehensively examine the influence of bioethics on healthcare outcomes. This approach allows for both in-depth exploration of nuanced ethical considerations and the statistical analysis of their impact on measurable outcomes.

This comprehensive methodology aims to provide a robust and nuanced understanding of how bioethics influences healthcare outcomes, contributing valuable insights for improving ethical practice and patient care.

2. Philosophical Underpinnings: Justice as a Non-Consequentialist Good

Philosophers have been debating the inherent validity of moral ideas, such as justice, for centuries. Deontological and virtue ethics traditions place an emphasis on the intrinsic moral obligations and the nature of deeds themselves, whereas consequentialist theories (such as utilitarianism) judge actions according to their results.

2.1. Deontological Perspectives: Duty and Rights

Immanuel Kant, a prominent deontologist, argued that moral actions are those performed out of duty, based on universalizable maxims, irrespective of their consequences (Kant, 1785). From this perspective, justice is not valuable because it produces happiness or order, but because it is an unconditional moral imperative. Treating individuals as ends in themselves, rather than merely as means, is a cornerstone of Kantian ethics and directly implies the intrinsic value of respecting their rights and ensuring fair treatment. A just act is inherently right, regardless of whether it leads to a "better" outcome in a utilitarian sense.

Similarly, rights-based theories argue that individuals possess inherent moral rights—to life, liberty, property, and fair treatment—simply by virtue of being human (Locke, 1689; Dworkin, 1977). Because it upholds individual dignity and autonomy, the realization of these rights is inherently good rather than only being beneficial for maintaining social harmony. When justice is served, it is more than just a successful transaction; it is a recognition of each person's intrinsic value, regardless of any potential societal gain.

2.2. Virtue Ethics: Justice as a Constituent of the Good Life

Aristotelian virtue ethics posits that the good life (eudaimonia, often translated as human flourishing) is achieved through the cultivation of virtues, including justice (Aristotle, c. 350 BCE). Justice is an essential component of a good, moral life and not only a means of promoting social harmony. Because it is the proper thing to do, a just person acts justly, which immediately advances their own development as a moral being. For the individual, the integrity and inner condition of acting justly are inherently important. According to Aristotle, living well is the same as living justly, and this good cannot be equated with material results.

3. Psychological Evidence: Justice as a Human Need

Beyond philosophical debates, psychological research offers convincing proof that the experience

and pursuit of justice are intricately linked to basic human needs and psychological health, indicating an innate motivation.

3.1. The Need for Fairness and Equity

Psychological studies across diverse cultures consistently demonstrate a pervasive human preference for fairness, often even at a personal cost. The "ultimatum game" and similar economic games show that individuals are willing to reject unfair offers, even if it means foregoing a monetary gain, indicating a strong intrinsic aversion to injustice (Fehr & Gächter, 2002). This suggests that the principle of fairness is not merely a learned convention but taps into deeper cognitive and emotional structures, possibly rooted in evolutionary advantages for cooperation (Tomasello, 2014).

The experience of unfairness can lead to significant psychological distress, including anger, resentment, feelings of betrayal, and a diminished sense of self-worth (Folger, 1984). Conversely, the restoration of justice, even symbolic justice, can provide a profound sense of relief, validation, and psychological repair, indicating that justice itself fulfills a fundamental need for balance and order in one's personal and social world (Okimoto & Wenzel, 2009).

3.2. Dignity, Respect, and Identity

A core intrinsic value of justice lies in its affirmation of human dignity and respect. When individuals are treated justly, it communicates that they are seen, heard, and valued as moral agents. Injustice, by contrast, is often experienced as an affront to one's dignity, a denial of one's worth, or a violation of one's inherent rights (Waldron, 2012). The desire for justice, therefore, is often a desire for recognition, for one's humanity to be acknowledged and respected, irrespective of any immediate utilitarian gain from that recognition.

Moreover, justice plays a crucial role in identity formation. Being a recipient of justice, or an agent of justice, contributes to one's self-concept as a worthy and moral individual. Collective identity is also shaped by shared experiences of justice and injustice, fostering solidarity among those who seek redress or those who uphold fairness. Social identity theory suggests that group membership is intrinsically valuable, and a group's pursuit of justice contributes to the positive social identity of its members (Tajfel & Turner, 1979).

3.3. Meaning-Making and Psychological Flourishing

The pursuit and experience of justice contribute significantly to an individual's sense of meaning and purpose in life. Engaging in struggles for justice, advocating for the wronged, or contributing to a more equitable society can provide a powerful sense of direction and significance that extends beyond personal gain (Steger, 2012). When justice is achieved, it can imbue life with a sense of moral coherence and order, affirming a belief in a just world, or at least the possibility of one. This contribution to meaning is inherently valuable.

Conversely, living in a pervasively unjust environment, where one's efforts are consistently undermined by unfair systems, can lead to existential despair, cynicism, and a profound sense of meaninglessness, irrespective of material comfort (Frankl, 1946). This underscores that justice is not merely about external outcomes but about the internal, subjective experience of a life worth living, a life that aligns with one's moral compass.

4. Anthropological and Cross-Cultural Perspectives: A Universal Human Aspiration

The fact that justice has been present in almost all human civilizations and cultures throughout history serves as more evidence of its inherent worth. The basic human desire for justice, retribution, and the punishment of injustice seems to be a deeply rooted part of the human condition, even though particular forms of justice may differ.

4.1. Universal Moral Grammar?

Some theories propose a "universal moral grammar" that underpins human moral judgments, suggesting that basic principles of fairness and harm aversion are innate and not purely culturally constructed (Hauser, 2006). The underlying ability and preference for justice may be a species-wide characteristic, even though the way this grammar is expressed is influenced by culture. This lends credence to the idea that justice is a basic component of human sociality, similar to an innate sense of equity, rather than merely a taught skill.

4.2. Rituals of Redress and Reconciliation

Across diverse cultures, elaborate rituals and practices for conflict resolution, redress, and reconciliation exist, often independent of purely utilitarian outcomes. Restorative justice practices, prevalent in many indigenous cultures, prioritize repairing harm and restoring relationships over mere punishment, emphasizing the intrinsic value of social harmony and communal well-being, even when direct material benefits are not the primary goal (Braithwaite, 1999). The emotional release, group healing, and dignity restoration attained by these procedures demonstrate the inherent worth of justice as a way to heal both the individual and the societal fabric.

5. Implications for Societal Design and Individual Action

Beyond just practical issues, acknowledging the inherent worth of justice has significant ramifications for how we construct our society and live our personal lives.

5.1. Beyond Cost-Benefit Analyses in Policy

If justice is intrinsically valuable, then policy decisions cannot be solely based on cost-benefit analyses. While efficiency and utility are important, they should not always trump fundamental principles of fairness and human dignity. Policies concerning social welfare, criminal justice, or environmental protection, for example, must be evaluated not just for their economic impact but for their adherence to principles of justice and their effect on human dignity and well-being. This calls for a more ethically nuanced approach to governance, where the inherent rightness of an action or policy is considered alongside its consequences (Dworkin, 1977).

5.2. Fostering a Culture of Justice

Recognizing the inherent worth of justice promotes the development of a "culture of justice" in which equity is prized for its own sake. This entails supporting institutions that protect due process and human rights, even when doing so is difficult or expensive, as well as advancing moral education and critical thinking about power and inequality. Because it upholds values of inherent worth, such a culture understands that a just society is not only stable but also beneficial, allowing its people to lead more satisfying lives. This necessitates a change in perspective from considering justice as a tool to achieve social order to considering it as a goal that helps create a more prosperous society.

5.3. The Power of Moral Action

For people, realizing the inherent worth of justice validates the importance of moral behavior. Even in little ways, pursuing justice may be incredibly fulfilling and profoundly meaningful, adding to one's sense of moral character and purpose. Because the pursuit of justice is a profound human good and a commitment to principles that go beyond immediate personal advantage, it offers a framework for understanding why people might devote their lives to social causes, frequently in the face of overwhelming odds and with little personal material gain. This innate need for fairness has the potential to be a potent catalyst for progress.

6. Conclusion: The Enduring Heart of the Human Quest

The deepest meaning of justice is lost when it is reduced to its instrumental benefits, even though its utilitarian functions are indisputable and essential to society's operation. According to this essay, justice has a deep inherent worth that is entwined with our humanity. It fulfills our basic desires for justice, upholds our dignity, supports our mental health, and gives our lives purpose.

The inherent value of justice appears as a recurring and potent subject in everything from philosophical defenses of obligation and rights to psychological proof of an innate preference for justice and cross-cultural manifestations of redressal rites. Understanding this intrinsic value forces us to accept justice's deep, innate goodness and to move beyond its calculational aspects. By doing this, we create more stable communities and give everyone a more satisfying and truly human experience. A monument to what makes us uniquely human, the pursuit of justice is a fundamental search for a life of meaning and dignity rather than just a practical requirement.

References :

Aristotle. (c. 350 BCE). Nicomachean Ethics. (Many editions available).

Batson, C. D. (2011). Altruism in Humans. Oxford University Press.

Braithwaite, J. (1999). Restorative Justice: Stronger and Safer Communities. Justice for Children and Youth, 9(1), 1–7.

Dworkin, R. (1977). Taking Rights Seriously. Harvard University Press.

Fehr, E., & Gächter, S. (2002). Altruistic punishment in humans. Nature, 415(6868), 137–140.

Folger, R. (1984). The Sense of Injustice: An Interdisciplinary Analysis. Plenum Press.

Frankl, V. E. (1946). Man's Search for Meaning. (Original German publication).

Hauser, M. D. (2006). Moral Minds: How Nature Designed Our Universal Sense of Right and Wrong. Ecco.

Hobbes, T. (1651). Leviathan.

Kant, I. (1785). Groundwork of the Metaphysics of Morals.

Locke, J. (1689). Two Treatises of Government.

Mill, J. S. (1863). Utilitarianism.

Okimoto, T. G., & Wenzel, M. (2009). Perceived injustice and psychological well-being: The moderating effects of justice concerns. Journal of Personality and Social Psychology, 97(6), 1029–1043.

Steger, M. F. (2012). Meaning in Life. Oxford University Press.

Tajfel, H., & Turner, J. C. (1979). An integrative theory of intergroup conflict. Journal of Social Psychology, 33(3), 47–63.

Tomasello, M. (2014). A Natural History of Human Morality. Harvard University Press.

Waldron, J. (2012). Dignity, Rank, and Rights. Oxford University Press.

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

The Relevance of Sanskrit to Botany: A comparative study

Naresh Kumar
Research Scholar
E-mail: khajurianaresh70@gmail.com
8082871693

Prof. Sushma Devi
Supervisor:
Sanskrit Department, University of Jammu,
Jammu-180006

Abstract: In this research paper the relevance of Sanskrit and Botany is being discussed that how these both subjects are related to one another and Sanskrit plays a crucial role in describing various plants their medicinal properties in Sanskrit literature. In Aayurveda, various plants (herbs, shrubs etc.) are used to cure many ailments. So, in this research paper it will be discussed in detail about the relevance of Sanskrit to the modern Botany.

Keywords: Sanskrit, Botany, Ayurveda, Charak samhita, Sushruta Samhita etc.

Introduction

Sanskrit, the ancient language of India, has a rich history and significance in various fields of knowledge. One such field is botany, the study of plants. Sanskrit has been used for centuries as the language of science, and its relevance to botany is undeniable. The Sanskrit language is considered to be the mother of many modern languages, including botany terminology. In this research paper, we will explore the relevance of Sanskrit to botany and its contribution to the study of plants.

History of Sanskrit in Botany

The origin of Sanskrit can be traced back to the 2nd millennium BCE, making it one of the oldest languages in the world. It has been the primary language for religious and scientific texts in ancient India, and its influence on the development of other languages is well documented. Sanskrit has been a significant language in the study of botany since ancient times. The Rigveda, one of the oldest Vedic texts, contains descriptions of various plants and their medicinal properties in Sanskrit. The Atharvaveda, another Vedic text, also contains detailed descriptions of plants, their uses, and methods of cultivation in Sanskrit. These texts not only provided knowledge about plants but also helped in the development of Sanskrit vocabulary related to botany.

Contribution of Sanskrit to Botany Terminology

Sanskrit has played a crucial role in the development of botany terminology. The ancient Indian scholars had a deep understanding of plants and their medicinal properties. They classified plants based on their properties, uses, and characteristics, which gave rise to a vast collection of Sanskrit botanical terms. Many of these terms are still used in modern botany, and their Sanskrit origins can

be traced back to ancient texts like the Charaka Samhita, Sushruta Samhita, and the Bhavaprakasha Nighantu.

One of the significant contributions of Sanskrit to botany terminology is the naming of plants. In Sanskrit, plants are named based on their characteristics, habitat, and uses, making it easier to identify and classify them. For example, the Sanskrit name for the mango tree is "Aamra," which means "that which gives pleasure." This name reflects the delicious taste of the fruit and its significance in Indian culture. Similarly, the name for the neem tree is "Nimba," which means "to give good health," reflecting its medicinal properties.

Sanskrit has also contributed to the naming of plant parts and their functions. The Sanskrit term for the root of a plant is "Mula," meaning "source" or "origin." The term for the stem is "Stana," meaning "support," and the term for the leaves is "Patra," meaning "that which falls." These names not only describe the physical structure of the plant part but also its function in the plant's growth and survival.

The Sanskrit language has also given rise to many terms related to plant reproduction, such as "Bijam," meaning "seed," "Pushpam," meaning "flower," and "Phalam," meaning "fruit." These terms are used in modern botany to describe the different stages of a plant's life cycle and its reproductive processes.

Classification of Plants

The ancient Indian texts also provide a detailed classification of plants based on their properties and uses. The Charaka Samhita, an ancient Ayurvedic text, categorizes plants into three groups - Sthavara (immobile plants), Vruksha (trees), and Oshadhi (herbs). Furthermore, plants are classified based on their medicinal properties, such as a stringent, bitter, sweet, and pungent. This classification has helped in understanding the therapeutic uses of plants and their effects on the human body.

Medicinal Properties of Plants

Sanskrit texts are a treasure trove of information on the medicinal properties of plants. The Rigveda, one of the oldest texts in Sanskrit, mentions the medicinal use of plants such as turmeric, ginger, and sandalwood. The Ayurvedic texts, which are written entirely in Sanskrit, contain detailed descriptions of the use of various plants in the treatment of diseases. For instance, the Charaka Samhita has a separate section dedicated to the medicinal properties of plants and their use in treating specific ailments. This knowledge has been passed down through generations and is still widely used in Ayurveda, a traditional Indian system of medicine.

Conservation of Plant Species

Sanskrit texts also emphasize the importance of preserving plant species. The Atharva Veda mentions the need to protect plants and forests to maintain the balance of nature. The Rigveda also contains hymns dedicated to the preservation of nature. This emphasis on conservation is crucial in today's world, where many plant species are on the verge of extinction due to human activities.

Impact on Modern Botany

The knowledge of plants and their medicinal properties in Sanskrit texts has had a significant impact

on modern botany. Many of the plants and their therapeutic uses mentioned in these texts have been scientifically proven to be effective. For instance, turmeric, which has been used in Ayurveda for centuries, has been found to have anti-inflammatory and antioxidant properties. Similarly, the use of ashwagandha, a herb mentioned in the Ayurvedic texts, has gained popularity in modern medicine for its stress-relieving properties. The study of Sanskrit has also helped in the identification and classification of new plant species, contributing to the expansion of botanical knowledge.

Sanskrit has played a crucial role in the study of plants, their properties, and their uses. The precise terminology, detailed classification, and extensive knowledge of plants in Sanskrit texts have contributed to the development of botany.

Impact of Sanskrit on Ayurveda

Ayurveda, the ancient Indian system of medicine, is closely related to botany. It is based on the concept of using plants and natural substances to treat various ailments. Sanskrit has had a significant impact on the development of Ayurveda, as many of its terms and principles are derived from the Sanskrit language. The Sanskrit names of medicinal plants are still used in Ayurvedic texts, and many Ayurvedic practitioners use Sanskrit terminology to describe the properties and uses of these plants.

The ancient Ayurvedic texts, such as the Charaka Samhita and Sushruta Samhita, were written in Sanskrit and contain detailed descriptions of hundreds of medicinal plants. These texts also mention the various methods of preparing and administering these plants for medicinal use. The knowledge of these plants and their properties has been passed down through generations, and Sanskrit continues to be an essential language in the practice of Ayurveda today.

Conclusion

In conclusion, the relevance of Sanskrit to botany is undeniable. Its influence on the development of botany terminology and the study of plants has been significant. The ancient Indian scholars' deep understanding of plants and their medicinal properties has contributed to the vast collection of Sanskrit botanical terms. These terms are still used in modern botany and have also influenced other languages. Sanskrit's impact on Ayurveda, the ancient Indian system of medicine, is also noteworthy. The language continues to be used in the practice of Ayurveda, and its importance in the study of plants cannot be overstated. The use of Sanskrit in botany has not only preserved the knowledge of plants from ancient times but also highlights the importance of this ancient language in the field of science.

References

1. "Relevance of Sanskrit in Botanical Nomenclature" by Dr. K. N. Nair, published in the Journal of Sanskrit Studies in 1995.
2. "The Influence of Sanskrit on Botanical Nomenclature" by Dr. R. C. Srivastava, published in the Journal of the Asiatic Society of Bombay in 1982.
3. "Sanskrit and Botanical Nomenclature" by Dr. N. P. Unni, published in the Journal of the Kerala Sanskrit Academy in 1976.
4. "Sanskrit in Botany" by Dr. M. K. Sridharan, published in the Proceedings of the 2nd International

Sanskrit Conference in 1992.
5. "The Role of Sanskrit in Botanical Terminology" by Dr. S. S. Gokhale, published in the Indian Journal of Traditional Knowledge in 2003.
6. "Sanskrit and Botany: A Historical Perspective" by Dr. G. S. Murthy, published in the Journal of Sanskrit Tradition in 2008.
7. "Sanskrit and its Contribution to Botanical Science" by Dr. R. S. Vaidya, published in the Indian Journal of History of Science in 1991.
8. "Botanical Nomenclature: A Study in the Influence of Sanskrit on Modern Science" by Dr. A. K. Sinha, published in the Journal of Indian Botanical Society in 1985.
9. "The Importance of Sanskrit in Botany" by Dr. V. P. Shukla, published in the Arya Vijnana Journal in 1997.
10. "Sanskrit and Botany: A Symbiotic Relationship" by Dr. S. N. Joshi, published in the Journal of Sanskrit Linguistics in 2006.
11. "Contribution of Sanskrit to Botanical Terminology" by M. S. Thirumurugan, published in the Journal of Ayurveda and Integrative Medicine in 2013.
12. "Sanskrit Names of Plants in the Flora of India" by R. D. Dixit, published in the Indian Journal of History of Science in 1972.
13. "Sanskrit Names of Medicinal Plants" by M. S. Thirumurugan, published in the International Journal of Ayurvedic Medicine in 2016.
14. "Sanskrit Plant Names and their English Equivalents" by K. Ramamoorthy, published in the Journal of Ayurveda and Integrative Medicine in 2014.
15. "Sanskrit Names of Plants Mentioned in the Charaka Samhita" by P. K. Warrier, published in the Indian Journal of Traditional Knowledge in 2004.
16. "Sanskrit Names of Medicinal Plants and their Modern Equivalents" by A. G. Kulkarni, published in the Journal of Ayurveda and Holistic Medicine in 2018.
17. "Sanskrit Plant Names in the Rigveda" by P. V. Sharma, published in the Indian Journal of History of Science in 1977.
18. "Vedic Botany and Taxonomy" by J. P. Srivastava, published in the Journal of Vedic Studies in 1993.
19. "Sanskrit Plant Names and their Botanical Equivalents" by V. D. Sharma, published in the Indian Journal of History of Science in 1988.
20. "Sanskrit Names of Plants in the Rigveda and Atharvaveda" by M. L. Bhargava, published in the Annals of the Bhandarkar Oriental Research Institute in 1977.

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

भारतीय काव्यशास्त्र में रस का आत्मत्व रूप : एक समीक्षात्मक अध्ययन

वीणा शर्मा
शोध छात्रा

प्रोफेसर सुषमा देवी
शोध निर्देशिका
संस्कृत विभाग
जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू।
दूरभाष सं. 6006590191, 9086003189

भारतीय काव्यशास्त्र में रस को काव्य का प्राणतत्व माना गया है। भरतमुनि से लेकर आचार्य मम्मट एवं आचार्य विश्वनाथ तक सभी ने रस को काव्य की आत्मा के रूप में प्रतिष्ठित किया है। भारतीय आस्तिक दर्शनों की पृष्ठभूमि में पञ्चभूतों से निर्मित शरीर में आत्मा को प्रधान माना गया है। यह आत्मा विशुद्ध, अजर, अमर, नित्य, आनन्दमय, चिन्मय, विज्ञानमय एवं ब्रह्मरूप है। इसी आत्मा को उपनिषदों में रसरूप भी कहा गया है जिसको प्राप्त करके प्राणी आनन्दमय हो जाता है।

रसौ वै सः। रस ह्येवायं लब्धानन्दी भवति।[1] काव्य में भी रस का यही स्वरूप प्रतिपादित किया गया है। शब्दार्थ शरीर रूप काव्य में रस ही अद्वितीय है अन्य गुण तथा अलङ्कार इसको अलंकृत करते हैं।

सर्वप्रथम आचार्य भरतमूनि ने काव्य के रस का विवेचन प्रस्तुत किया था। यद्यपि इन्होंने नाट्य की दृष्टि से रसों की विवेचना की थी, तथापि नाट्य एवं काव्य में बाह्य रूप को छोड़कर अन्य कोई भिन्नता नहीं है, काव्य में भी उन रसों की स्थिति निहित रहती है। भरत मुनि का कथन है कि काव्य में रस के बिना कोई थी अर्थ प्रवर्तित नहीं होता।

न हि रसादृते कश्चिदर्थः प्रवर्तते।[2]

आचार्य भरत के बाद भी आचार्यों ने रस को ही काव्य का प्रधान के तत्त्व प्रतिपादित किया है। 'अग्निपुराण' में कहा गया है कि न तो भाव से हीन रस होता है और न ही रस से रहित भाव होते हैं, भाव ही रसों को अनुभव का विषय बनाते हैं–

न भावहीनोऽस्ति रसो न भावो रसवर्जितः।
भावयन्ति रसानेभिर्भाव्यन्ते च रसा इति।।[3]

एवमेव ध्वनिकार आनन्दवर्धन ने यद्यपि 'काव्यस्यात्मा ध्वनिः' कह कर ध्वनि को काव्य की आत्मा प्रतिपादित किया है तथापि वे रसध्वनि को ही सबसे प्रधान मानते है। ध्वनि तीन प्रकार की है– वस्तुध्वनि. अलंकारध्वनि तथा रसध्वनि। इनमें रसध्वनि, रस, भाव, रसाभास, भावाभास, भावशान्ति भावोदय, भावसन्धि एवं भाव शबलता को धवनिकार ने ध्वनि की भी आत्मा प्रतिपादित किया था।

रसभावतदाभासभावशान्त्वादिरक्रमः।
ध्वनेरात्माङ्गिभावनेन भासमानो व्यवस्थितः।।[4]

आनन्दवर्धन ने रस को अभिव्यङ्ग्य ही मान कर उसका ध्वनि के रूप में प्रतिपादन किया। अन्य ध्वनिवादी आचार्यों ने भी ध्वनि को काव्य की आत्मा मान कर रस को सबसे प्रधान ध्वनि कहा।

प्रतिहारेन्दुराज ने उद्भट के 'काव्यालङ्कारसंग्रह' पर लघुवृत्ति नाम की टीका लिखी, यद्यपि वे अलङ्कारवादी आचार्य थे, तथापि उन्होंने काव्य में रस को आत्मा के स्वरूप में प्रतिपादित किया था। उनके कथनानुसार रस से युक्त काव्य ही जीवित रह सकता है, अतः रस ही काव्य की आत्मा है।

रसाधिष्ठितं काव्यं जीवद्रूपतया यतः।
कथ्यते तद्रसादीनां काव्यात्मत्वं व्यवस्थितम्।।[5]

आचार्य अभिनवगुप्त ने 'नाट्यशास्त्र' की अभिनवभारती टीका तथा ध्वन्यालोक की प्राचीन टीका में रस का विशद वर्णन प्रस्तुत करते हुए प्राचीन आचार्यों के मतों को भी उद्धृत किया है। उनके अनुसार काव्य में रस सदा व्यङ्ग्य होता है अतः इसको रस ध्वनि कहते हैं। यही रसध्वनि मुख्य रूप से काव्य की आत्मा है–

स च काव्यव्यापारैकगोचरो रसध्वनिरिति।
स च रसध्नेरेवेति स एव मुख्यतया आत्मा।।[6]

यद्यपि ध्वनि वस्तु अलंकार रसादि के भेद से तीन प्रकार की होती है तथापि वस्तु एवं अलंकार ध्वनियों का पर्यवसान रस-ध्वनि में ही होता है। वस्तु ध्वनि एवं अलंकार ध्वनि वाच्यार्थ से उत्कृष्ट होती है, इसलिए सामान्यतः ध्वनि को काव्य की आत्मा कहा गया है। वस्तुतरू काव्य की आत्मा ही रस ध्वनि है।

तेन रस एव वस्तुत आत्मा। वस्त्वलंकारध्वनी तु सर्वथा रसं प्रति पर्यवस्येते इति वाच्यादुत्कृष्टौ तावित्यभिप्रायेण ध्वनिःश्काव्यस्यात्मेति सामान्येनोक्तम्'।[7]

आचार्य मम्मट ने व्यङ्ग्य अर्थ को वस्तु, अलंकार एवं रस, इस प्रकार तीन प्रकार का मानते हुए रस के प्रधानत्व को स्पष्ट शब्दों में प्रतिपादित किया है। यह रस रूप ही काव्य में अङ्गी होता है, जिसके गुण नियत धर्म हैं।

ये रसस्याङ्गिनो धर्माः----------।[8]

रुय्यक के अनुसार रस आदि ही काव्य के प्राण हैं। वे अलङ्काररूप नहीं हो सकते। अलंकार तो उपकारक होते हैं, परन्तु रस आदि प्रधान होने से उपस्कार्य हैं।। अतः रस आदि प्रतीयमान होते हुए वाक्यार्थ होते हैं और वे ही काव्य का जीवन हैं। वाक्यार्थ को जानने वाले सहृदय रस के इसी रूप को स्वीकार करते हैं–

रसादयस्तु जीवितभूता नाङ्गारत्वेन वाच्याः।
अलङ्काराणामुपकारकत्वाद् रसादीनां च प्राधान्येनोपकार्यत्वात्।
तस्माद व्यङ्ग्य एव वाक्यार्थीभूतः
काव्यजीवितम् इति। एष एव च पक्षो वाक्यार्थविदां सहृदयानामावर्तकः।[9]

आचार्य विश्वनाथ ने रस का विस्तृत विवेचन करके उसको काव्य में सबसे प्रधान माना है। विश्वानाथ का काव्य लक्षण है–

'वाक्यं रसात्मकं काव्यम्'।[10]

इससे रस का काव्य की आत्मा होना स्वयं सिद्ध होता है।

'अलंकारकौस्तुभ' में कवि कर्णपूर ने शब्दार्थ शरीर काव्य में ध्वनि को प्राण तथा रस को आत्मा माना है।

शरीरं शब्दार्थो ध्वनिरसव आत्मा किल रसः ॥[11]

केशवमिश्र ने काव्य में रस को ही आत्मस्थानीय माना है। उनका कहना है कि नीरस काव्य में रसिक जन आनन्द को उसी प्रकार प्राप्त नहीं करते, जिस प्रकार अच्छे से पका होने पर भी भोजन नमक के बिना स्वादिष्ट नहीं होता।

साधुपाके विना स्वाद्यं भोजने निर्लवणं यथा।
तथैव नीरसं काव्यं स्थान्नो रसिकतुष्टये।।[12]

निष्कर्षः

भारतीय काव्यशास्त्र में रस को काव्य की आत्मा के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। रस न केवल भावों की अभिव्यक्ति का माध्यम है, बल्कि वह पाठक के भीतर गहन अनुभूति उत्पन्न करता है। आचार्य भरतमुनि से लेकर अभिनवगुप्त तक के आचार्यों ने इस के आत्मत्व स्वरूप को प्रतिपादित करते हुए यह सिद्ध किया है कि काव्य की वास्तविकता उसकी रसात्मकता में ही निहित है। इस प्रकार, रस भारतीय काव्य की आत्मा ही नहीं, उसकी जीवन शक्ति भी है। रस के बिना काव्य निष्प्राण होता है, जबकि रसयुक्त काव्य पाठक को आत्मानुभूति के स्तर तक ले जाता है।

सन्दर्भ-ग्रन्थः

1) तैतिरीय उपनिषद् - 3.7
2) नाट्ध्यशास्त्र - 6.33
3) अग्निपुराण - 319.12
4) धन्यालोक - 2.3
5) काव्यालंकार सारसंग्रह, लघुवृत्ति पृष्ठ संख्या -83
6) ध्वन्यालोक लोचनटीका पृष्ठ संख्या -18
7) धन्यालोक, लोचनटीका, पृष्ठ संख्या -31
8) काव्यप्रकाश -8.66
9) अलंकारसर्वस्व, पृष्ठ संख्या - 10
10) साहित्यदर्पण - 1.3
11) अलंकारकौस्तुभ - 1.1
12) अलंकारशेखर -पृष्ठ संख्या 75

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

भारत में नेपाली सैनिकों की भूमिका का सांस्कृतिक मूल्यांकन

डॉ. जितेन्द्र कुमार
सहायक आचार्य
रक्षा एवं स्त्रातजिक अध्ययन विभाग
दी. द. उ. गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर
मो. न. - 8182834300

सारांश

भारत और नेपाल के बीच ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और सैन्य दृष्टिकोण से गहरे संबंध हैं, जिनकी जड़ें प्राचीन काल से जुड़ी हुई हैं। इन संबंधों का सबसे महत्वपूर्ण हिस्सा भारतीय सेना में नेपाली सैनिकों का योगदान है, विशेष रूप से गोरखा रेजीमेंट के सैनिकों की भूमिका। गोरखा सैनिकों का भारतीय सेना में योगदान न केवल सैन्य दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है, बल्कि उनका सांस्कृतिक योगदान भी भारतीय समाज में एक स्थायी प्रभाव डाल चुका है। गोरखा सैनिकों का भारतीय सेना और भारतीय समाज में योगदान अत्यधिक महत्वपूर्ण है। उनके सैन्य साहस और सांस्कृतिक योगदान ने भारतीय समाज में एक स्थायी छाप छोड़ी है। गोरखा रेजीमेंट के सैनिकों की वीरता और उनके सांस्कृतिक समावेश ने भारतीय समाज को एक समृद्ध, विविधतापूर्ण और सहिष्णु रूप में बदल दिया है। गोरखा सैनिकों की पहचान ने भारतीय संस्कृति में अपनी विशेष जगह बनाई है, और उनका योगदान भारतीय सेना और समाज की मजबूती और विविधता को सुदृढ़ करता है। गोरखा सैनिकों के योगदान को केवल सैन्य दृष्टिकोण से नहीं, बल्कि सांस्कृतिक, सामाजिक और राष्ट्रीय दृष्टिकोण से भी महत्वपूर्ण माना जाना चाहिए। उनकी वीरता, अनुशासन और सांस्कृतिक पहचान भारतीय समाज और सेना को एक नई दिशा प्रदान करती है और यह योगदान आने वाली पीढ़ियों के लिए प्रेरणास्त्रोत बनेगा। इस शोध का उद्देश्य गोरखा सैनिकों के सांस्कृतिक योगदान और उनकी पहचान का मूल्यांकन करना है और यह दिखाना है कि उन्होंने भारतीय सैन्य और सांस्कृतिक परंपराओं में किस प्रकार से योगदान किया है।

मुख्य शब्द :- भारत और नेपाल, गोरखा रेजीमेंट, भारतीय सेना और समाज, राष्ट्रीय दृष्टिकोण।

प्रस्तावना- भारत और नेपाल के ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और सैन्य संबंध गहरे और दृढ़ हैं। इन संबंधों का सबसे महत्वपूर्ण और विशिष्ट हिस्सा भारतीय सेना में नेपाली सैनिकों का योगदान है, विशेष रूप से गोरखा रेजीमेंट के सैनिकों की भूमिका। गोरखा सैनिकों ने भारतीय सैन्य बल को मजबूती प्रदान की है और उनके योगदान का भारतीय समाज में एक गहरा प्रभाव पड़ा है। गोरखा सैनिकों का सांस्कृतिक और सैन्य योगदान भारतीय सेना और समाज में एक स्थायी छाप छोड़ चुका है। इस शोध लेख का उद्देश्य गोरखा सैनिकों की सैन्य वीरता और सांस्कृतिक पहचान का मूल्यांकन करना है और यह देखना है कि उन्होंने भारतीय सेना और भारतीय समाज के विभिन्न पहलुओं में किस प्रकार योगदान दिया है।

शोध के उद्देश्य और महत्व- इस शोध का मुख्य उद्देश्य गोरखा रेजीमेंट के सैनिकों की ऐतिहासिक और सांस्कृतिक

भूमिका का मूल्यांकन करना है।

- गोरखा रेजीमेंट की ऐतिहासिक और सैन्य भूमिका का विश्लेषण।
- गोरखा सैनिकों की सांस्कृतिक पहचान और उनका भारतीय समाज में समायोजन।
- गोरखा सैनिकों की भूमिका भारतीय समाज में संस्कृति, धर्म और सामाजिक समावेशन पर।
- गोरखा सैनिकों के योगदान का भारतीय सेना और समाज पर सांस्कृतिक प्रभाव।

गोरखा सैनिकों का ऐतिहासिक योगदान- गोरखा रेजीमेंट का गठन 1815 में हुआ था, और इसके बाद से गोरखा सैनिकों ने भारतीय सेना में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। ब्रिटिश शासन के समय से लेकर आज तक, गोरखा सैनिकों ने भारतीय सेना को अपनी वीरता, साहस और अनुशासन से कई युद्धों में जीत दिलाई। गोरखा सैनिकों की वीरता का उदाहरण भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में भी देखा गया था। 1857 के विद्रोह से लेकर 1965 और 1971 के युद्धों तक, गोरखा सैनिकों ने भारतीय सेना की ताकत और वीरता को बढ़ाया। गोरखा सैनिकों का योगदान केवल लड़ाई तक सीमित नहीं था। वे भारतीय सेना के अनुशासन, रणनीतिक कौशल और सैन्य तकनीकी क्षमता के प्रतीक बन गए। 1962 में भारत-चीन युद्ध में भी गोरखा सैनिकों ने अद्वितीय वीरता का प्रदर्शन किया, जिसके लिए उन्हें उच्च सैन्य पुरस्कारों से सम्मानित किया गया।

गोरखा सैनिकों का सांस्कृतिक योगदान- गोरखा सैनिकों के सांस्कृतिक योगदान को भारतीय समाज में व्यापक रूप से सराहा गया है। गोरखा सैनिकों की अपनी भाषा, संस्कृति, धार्मिक परंपराएँ और सामाजिक रीति-रिवाज भारतीय समाज में एक नए आयाम को लेकर आए। गोरखा सैनिकों के पारंपरिक पर्वों, जैसे दशहरा और तिहार, भारतीय संस्कृति में घुल-मिल गए हैं। उनकी लोक कला, संगीत और नृत्य भारतीय कला और संस्कृति का अभिन्न हिस्सा बन गए हैं। गोरखा सैनिकों की धार्मिक प्रथाएँ, जैसे पशुपतिनाथ पूजा और शिव पूजा, भारतीय हिंदू संस्कृति में एक अलग स्थान रखती हैं। उनकी संस्कृति ने भारतीय समाज में एक समृद्ध और विविधतापूर्ण तत्व जोड़ा है, जिसे आज भारतीय समाज में बहुत सम्मान मिलता है।

गोरखा सैनिकों का भारतीय समाज में समायोजन- भारतीय समाज में गोरखा सैनिकों के समायोजन की प्रक्रिया सरल नहीं रही है। भारतीय समाज में भाषाई, सांस्कृतिक और धार्मिक भिन्नताएँ थीं, जिनका सामना गोरखा सैनिकों को करना पड़ा। हालांकि, धीरे-धीरे गोरखा सैनिकों ने अपनी पहचान बनाई और भारतीय समाज के विभिन्न हिस्सों में अपनी सांस्कृतिक धरोहर का संरक्षण किया। गोरखा सैनिकों के परिवारों ने भारतीय समाज के साथ जुड़ने के बाद अपनी सांस्कृतिक पहचान बनाए रखी और उन्होंने भारतीय समाज में अपनी जगह बनाई। विशेष रूप से उत्तर-पूर्वी भारत और नेपाल सीमा क्षेत्र में गोरखा सैनिकों के परिवारों ने भारतीय संस्कृति में अपनी एक अलग पहचान बनाई। उनका जीवन, उनकी परंपराएँ और उनकी शादियाँ भारतीय समाज के हिस्से बन गईं। गोरखा सैनिकों के परिवारों ने भारतीय समाज के साथ अपने सांस्कृतिक और सामाजिक संबंध बनाए, और उन्होंने अपनी धार्मिक परंपराओं, शादी परंपराओं, और भाषाई विशेषताओं को भारतीय समाज में प्रस्तुत किया। इस प्रक्रिया ने भारतीय समाज में विविधता को स्वीकारने और समृद्ध बनाने में योगदान दिया।

गोरखा सैनिकों के सांस्कृतिक और सामाजिक प्रभाव- गोरखा सैनिकों का भारतीय समाज में सांस्कृतिक और सामाजिक प्रभाव बहुत महत्वपूर्ण रहा है। उनके द्वारा पेश की गई सामाजिक और सांस्कृतिक मान्यताएँ भारतीय समाज में समावेशन, बहुलता और सहिष्णुता की भावना को बढ़ावा देती हैं। गोरखा सैनिकों का जीवन और उनके परिवार भारतीय समाज में विविधता और समाजिक समरसता का प्रतीक बन गए हैं। गोरखा सैनिकों के योगदान ने भारतीय समाज में एकजुटता और सामूहिकता की भावना को उत्पन्न किया है। उनकी संस्कृति ने भारतीय समाज को विभिन्न परंपराओं, रीति-रिवाजों और विश्वासों को समझने का अवसर दिया और भारतीय संस्कृति की विविधता को और अधिक समृद्ध किया।

गोरखा सैनिकों का भारतीय सेना पर प्रभाव- गोरखा सैनिकों का भारतीय सेना में योगदान सिर्फ युद्धों तक सीमित नहीं रहा है। उनके अनुशासन, साहस और समर्पण ने भारतीय सेना को एक नई दिशा दी है। उनकी वीरता ने भारतीय सैन्य परंपराओं को एक मजबूत आधार प्रदान किया है। गोरखा सैनिकों के अद्वितीय नेतृत्व, कौशल और रणनीतिक विचार ने भारतीय सेना के संगठनात्मक ढांचे को प्रगति और सुधार की दिशा में प्रेरित किया है। गोरखा रेजीमेंट में भर्ती होने वाले

सैनिकों का उच्च सैन्य प्रशिक्षण भारतीय सेना को बेहतर रणनीतिक क्षमता, साहस और आत्मविश्वास प्रदान करता है। इसके परिणामस्वरूप भारतीय सेना ने न केवल युद्धों में अपनी ताकत दिखाई है, बल्कि सैन्य रणनीतियों और अभियानों में भी सफलता प्राप्त की है। गोरखा रेजीमेंट के सैनिकों ने युद्ध के मैदान में अपनी वीरता और साहस का परिचय दिया, जिससे भारतीय सेना को मजबूती मिली। इसके अलावा, गोरखा सैनिकों का भारतीय समाज में समायोजन, उनके सांस्कृतिक योगदान, और समाज में उनके योगदान ने भारतीय समाज में विविधता को प्रोत्साहित किया है। गोरखा सैनिकों का जीवन केवल सैन्य दृष्टिकोण से ही नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और सामाजिक दृष्टिकोण से भी प्रेरणादायक रहा है। उनका अनुशासन, उनकी सांस्कृतिक पहचान और उनके साहस ने भारतीय समाज को एक नए दृष्टिकोण से देखा। उनकी सांस्कृतिक पहचान भारतीय सेना और भारतीय समाज में एक स्थायी धरोहर बन चुकी है।

निष्कर्ष- गोरखा सैनिकों का भारतीय सेना और भारतीय समाज में योगदान अतुलनीय है। उनके सैन्य साहस और वीरता ने भारतीय सेना को मजबूत किया, जबकि उनके सांस्कृतिक योगदान ने भारतीय समाज में एक समृद्ध विविधता को बढ़ावा दिया। गोरखा सैनिकों की सांस्कृतिक परंपराएँ, उनकी धार्मिक पहचान और उनके परिवारों का भारतीय समाज में समायोजन यह दर्शाता है कि किस प्रकार उन्होंने भारतीय समाज को एक बेहतर और विविधतापूर्ण रूप में परिवर्तित किया है। गोरखा सैनिकों का योगदान केवल सैन्य दृष्टिकोण से ही नहीं, बल्कि सांस्कृतिक, सामाजिक, और राष्ट्रीय दृष्टिकोण से भी अत्यधिक महत्वपूर्ण है। उनका योगदान भारतीय सेना और समाज के लिए एक अमूल्य धरोहर है और यह भविष्य में भी हमारे समाज और संस्कृति में अपनी छाप छोड़ता रहेगा। भारत और नेपाल के बीच गोरखा सैनिकों का योगदान न केवल सैन्य दृष्टिकोण से अत्यधिक महत्वपूर्ण है, बल्कि सांस्कृतिक और सामाजिक दृष्टिकोण से भी इसका गहरा प्रभाव रहा है। गोरखा सैनिकों ने भारतीय सेना को न केवल सैन्य क्षमता में वृद्धि दी, बल्कि उन्होंने भारतीय समाज में अपनी सांस्कृतिक पहचान बनाई। उनका योगदान आज भी भारतीय सेना और समाज में जीवित है और इसे भविष्य में भी संजोकर रखा जाएगा। गोरखा रेजीमेंट के सैनिकों का योगदान भारतीय समाज में सांस्कृतिक विविधता और राष्ट्रीय एकता के प्रतीक के रूप में हमेशा याद किया जाएगा। उनके सैन्य साहस, वीरता, और सांस्कृतिक योगदान ने उन्हें भारतीय समाज में एक विशेष स्थान दिलवाया है, जो भारतीय सेना और संस्कृति का एक अभिन्न हिस्सा बन चुका है।

सुझाव- इस शोध के परिणामस्वरूप यह कहा जा सकता है कि गोरखा सैनिकों का योगदान भारतीय समाज के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण है। भविष्य में इस विषय पर और अधिक शोध किया जाना चाहिए ताकि गोरखा सैनिकों की सांस्कृतिक परंपराओं, सैन्य योगदान, और उनके सामाजिक समायोजन को और गहराई से समझा जा सके। गोरखा सैनिकों के सांस्कृतिक पहचान, समाजिक समायोजन, और सैन्य योगदान के जटिल रिश्तों को उजागर करता है। यह शोध भारतीय समाज में गोरखा सैनिकों के योगदान को एक महत्वपूर्ण दृष्टिकोण से प्रस्तुत करता है और इसे समाज की सांस्कृतिक विविधता और राष्ट्रीय एकता के प्रतीक के रूप में सामने लाता है।

संदर्भ सूची

1. Baral, L. R. (2012). Nepaln`India relations: Continuity and change. Institute of Foreign Affairs (IFA).
2. Ojha, H. R. (1999) Nepal and the Gurkhas: A historical study- Ratna Pustak Bhandar.
3. Sharma, D. (2012) Gorkhas in the Indian Army: A legacy of loyalty- Journal of Defence Studies, 45n`61.
4. Singh, S. (2010) Bharat &Nepal sambandh: Aitihasik aur samkalin pariprekshya, India & Nepal relations: Historical and contemporary perspectives, Publications Division Government of India.
5. थापा, आ. (2017). गोरखा : इतिहास, संस्कृति और सैन्य परंपरा. काठमांडू विश्वविद्यालय प्रेस।
6. सिंह, शि. (2010). भारत-नेपाल संबंध : ऐतिहासिक और समकालीन परिप्रेक्ष्य. प्रकाशन विभाग, भारत सरकार।
7. शर्मा, द. (2012). भारतीय सेना में गोरखाओं की भूमिका : एक निष्ठा की विरासत. जर्नल ऑफ डिफेंस स्टडीज़, 6(4),

45. 61
8. उप्रेती, बी. सी. (2006). भारत नेपाल संबंध समस्याएँ, नीतियाँ और गतिशीलता. कलिंगा पब्लिकेशन्स।
9. ओझा, एच. आर. (1999). नेपाल और गोरखा एक ऐतिहासिक अध्ययन. रत्न पुस्तक भंडार।
10. राज्यसभा सचिवालय. (2015). भारत-नेपाल संबंध और गोरखा सैनिकों की स्थिति. नई दिल्ली भारत की संसद।
11. रक्षा मंत्रालय, भारत सरकार. (एन.डी.). भारतीय सेना गोरखा रेजिमेंट का इतिहास. प्राप्त किया गया https://mod-gov-से।
12. कांसेकर, वी. बी. एस. (2001). भारत-नेपाल खुली सीमा संभावनाएँ, समस्याएँ और चुनौतियाँ. इनसेक जर्नल।
13. उप्रेती, बी. सी. (2003). भारत-नेपाल संबंध सामरिक और सांस्कृतिक दृष्टिकोण, हिमालयन रिव्यू, 29(2), 112.130
14. सब्बा, टी. बी. (1992). दार्जिलिंग में गोरखालैंड आंदोलन जातीयता और विकास, हर-आनंद पब्लिकेशन्स।
15. गैलनर, डी. एन. (2007). नेपाल में जाति, जातीयता और असमानता. इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, 42(20), 1823.1828

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

भारतीय परिपेक्ष्य में सामाजिक आंदोलन का अवधारणात्मक स्वरूप

डॉ. अग्नि देव
सह आचार्य-राजनीति विज्ञान
बाबू शोभाराम राजकीय कला महाविद्यालय, अलवर

आमतौर पर सामाजिक आंदोलनों के बारे में कुछ न कहते हुए भी, यहाँ तक कि वे आंदोलन जिनका प्रत्यक्षतः राजनीतिक चरित्र रहा है जो स्पष्टतः सरकार के विरुद्ध किये गये हैं, उन्हें भी भारतीय राजनीतिक वैज्ञानिकों ने मोटे रूप में अपने शैक्षणिक विषय के क्षेत्र से परे रखा है। भारत में राजनीतिक विज्ञान मुख्यतः कार्यकारी, विधायी, दलों और चुनावों जैसे राजनीतिक संस्थाओं के अध्ययन तक सीमित रहा है।

सामाजिक आंदोलन सिर्फ तब खड़े होते हैं जब लोग इन असमानताओं और अन्यायों के प्रति सजग होते हैं और उन्हें उखाड़ फेंकने के लिए संघर्ष करते हैं। दरअसल सामाजिक आंदोलन के लिए उपजाऊ जमीन तब उपलब्ध होती है जब प्रतिकूल परिस्थितियों में जी रहे लोगों को वर्तमान समाज व्यवस्था का बेहतर विकल्प दिखने लगता है। तब मौजूदा संस्थाओं के औचित्य पर ही प्रश्न उठ जाता है और इस बदलाव की संभाव्यता दिख जाती है।'

आम जनता की राजनीति, उनकी आकांक्षाओं और मांगों, उनकी समस्याओं को मुखर करना तथा औपचारिक संस्थात्मक ढाँचे से बाहर उनकी मांगों की कार्यप्रणाली को अधिकाशंतः राजनीतिक विज्ञान के विद्वानों द्वारा उपेक्षा की गई है। तथापि, विकास संबंधी नीतियाँ और जनकल्याण संबंधी योजनाएं, उनका कार्यान्वयन, आदि भारतीय राजनीतिक विज्ञान के शिक्षण और शोध कार्यक्रम का हिस्सा हैं। किन्तु, इन नीतियों के निर्माण की प्रक्रियाओं की अपेक्षा उनका ध्यान मुख्यतः योजनाओं के उद्देश्यों और सरकार की भूमिका, और उनके मूल्यांकन पर अधिक केन्द्रित है।

उदाहरणार्थ, भूमि संबंधी नीति को उससे संबंधित उन संघर्षों का बिना विश्लेषण किये पढ़ाया जाता है जिनके कारण राज्य और राजनीतिक दलों को इस नीति को अपनाने के लिये बाध्य होना पड़ा है। श्रीमती इंदिरा गाँधी की 'गरीबी हटाओ' की नीत्ति का विश्लेषण 1960 के दशक के ग्रामीण और नगरीय गरीबों द्वारा किये गये ढेर सारे संघों के संदर्भ में नहीं किया जाता है। बहुधा यह भुला दिया जाता है कि आम जनता की राजनीति को बिना समझे राज्य को पूरी तरह से नहीं समझा जा सकता है। दलित वर्ग के दृष्टिकोणों, विश्वासों, आकांक्षाओं और विचारों का अध्ययन हमें अपनी संकल्पनाओं को परिभाषित और पुनर्परिभाषित करने में हमारी मदद कर सकता है।

दरअसल इस विधा को अपनाने का एक बड़ा कारण भारतीय राजनीति विज्ञान की विरासत है। यद्यपि इस विषय के औपचारिक स्वरूप की विरासत पश्चिमी रही है, तथापि राजनीति की अवधारणा जिस पर प्रमुख बुद्धिजनों द्वारा लिखा गया है, वह सभी स्थानों पर समान है. यह सांस्कृतिक सीमाओं को लांघती है। राजनीति को समझने, विश्लेषण करने और सैद्धांतीकरण करने का बौद्धिक कार्य उतना ही पुराना है जितना की सामूहिक जीवन के गठन की विधा है जब विधि-विधान,

नियम और अधिनियम, सत्ता का विभाजन, संसाधनों का वितरण तथा शासन करने हेतु औपचारिक संस्थाओं के अस्तित्व का विकास हुआ था।

गीता और महाभारत राजनीति के शोध-प्रबंध हैं। इन ग्रंथों में शासकों और नागरिक गणों के कर्तव्यों और दायित्वों का विस्तृत विवेचन किया गया है। कौटिल्य का अर्थशास्त्र भी राजनीतिक संहिता का एक प्रलेखित ग्रंथ है। सुकरात और प्लेटों की कृतियां बहुप्रसिद्ध हैं और इन्हें हमारे देश में राजनीति विज्ञान के विद्यार्थियों को व्यापक रूप से पढ़ाया जाता है। किन्तु, ये सभी ग्रंथ मुख्यतः शासकों की राजनीति और धार्मिक सत्ता तक सीमित है। राजनीति का इस प्रकार का अवधारणीकरण आधुनिक शिक्षा व्यवस्था में एक शैक्षिक विषय के रूप में राजनीतिक विज्ञान के अध्यापन और शोध के विषय क्षेत्र के निर्माण में एक प्रमुख विमर्श के रूप में छाया हुआ है।

यदि थोड़ा और पीछे की तरु मुड़ कर देखें तो ब्रिटिश परम्परा के प्रभाव के ग्लस्वरूप भारत में राजनीति विज्ञान राजनीतिक दर्शनशास्त्र, औपचारिक सरकारी संस्थाओं और अन्तर्राष्ट्रीय संबंधों के अध्ययन तक सीमित था। संस्थाओं के काम करने सहित आनुभाविक अध्ययनों का उद्भव 1950 के दशक के बाद में हुआ है जो व्यवहारात्मक सम्प्रदाय, जिसका विकास अमेरिका में हुआ है. से प्रभावित रहा है। विज्ञानवादी आधारित विश्लेषण तथा क्यों के प्रश्न को विस्मृत कर दिया गया। राजनीति वैज्ञानिकों द्वारा अपनाई गई राजनीति की अवधारणा, जो अमेरिकी और ब्रिटिश परम्पराओं से प्रभावित रही है, कही संकीर्ण है। यह अवधारणा एक ऐसी राजनीतिक व्यवस्था तक सीमित है जिसके प्रकार्य नियम बनाना, नियम लागू करना और न्याय करना मात्र है।'

दूसरा, कई राजनीतिक वैज्ञानिकों के लिये, 'राजनीति' का अर्थ समाज में किसे, क्या, कब और कैसे मिलता है। दूसरों के लिये, राजनीति की परिभाषा, मूल्यों का आधिकारिक रूप में आबैटन करना है। अधिकारिता के अर्थ को स्पष्ट करते हुए डेविड ईस्टन बताते हैं कि एक नीति तब स्पष्ट रूप में अधिकारिक होती है जब यह भावना उपस्थित होती है कि इस नीति का निश्चित तौर पर पालन किया जाना चाहिये या पालन किया जाना आवश्यक है न कि नीतियां चाहे वे औपचारिक या प्रभावशाली हो. उन्हें बाध्यकारी स्वीकार किया जाता है। अतः ये परिभाषाएं सरकार और राज्य के प्रकायों या शासक वर्ग अथवा अभिजनों की राजनीति तक राजनीति के अध्ययन को परिभाषित करती हैं। इसलिये कोई आश्चर्य नहीं कि अमेरिका और ब्रिटेन के कुछ विश्वविद्यालयों में राजनीति या राजनीति विज्ञान के विभागों के स्थान पर सरकार या सार्वजनिक कानून और भारत में राजनीति विज्ञान और प्रशासन या लोक प्रशासन के विभाग हैं। ये परिभाषाएँ राजनीति के अध्ययन को सरकार और राज्य के प्रकार्यों तक परिमित करती हैं।

तीसरा, द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद की उदारवादी विचारधारा और संरचनात्मक प्राकार्यात्मक उपागम के वर्चस्व के कारण सामाजिक विज्ञान साहित्य में संघर्ष और परिवर्तन की अपेक्षा संतुलन और सामंजस्य पर अधिक जोर दिया गया। राजनीति विज्ञान, यद्यपि मुख्यतः सत्ता और संघर्ष से संबंधित विषय है, हर भी इसमें सामाजिक परिवर्तन हेतु समाजगत संघर्ष जैसे मुद्दों पर शोध नहीं हुआ है। राजनीति वैज्ञानिकों की मुख्यतः रूचि, जनता और शासकों के बीच के संघर्षों की अपेक्षा सत्ता अभिजनों के बीच होने वाले आंतरिक संघषों के अध्ययन में ही अधिक रही है। उनके अनुसार, समाजगत संघर्षों का समाधान सरकार और राजनीतिक संस्थाओं द्वारा किया जाना आवश्यक है। उनका चिंता का क्षेत्र तब शुरू हो जाता है जब संघर्ष सरकार के राजनीतिक घेरे में प्रवेश कर जाता है। उनकी दृष्टि में, संघर्ष के कारणों की अपेक्षा संघर्ष का समाधान अधिक महत्वपूर्ण है।

अधिकांश राजनीतिक विज्ञानी अपनी विचारधारा की दृष्टि से उदारबादी हैं और भारत की स्वतंत्रता के लगभग दो दशकों तक उन्होंने भारत के संविधान को परमपावन माना है। उन्हें अभी तक विश्वास है कि विद्यमान राजनीतिक संस्थाएँ सभी सामाजिक संघषों का समाधान कर सकती है। दरअसल इन संघर्षों के समाधान के अगणित संवैधानिक साधन हैं। राजनीति वैज्ञानिकों का तर्क है कि व्यक्तियों को सीधी कार्यवाही करने की अपेक्षा विविध संवैधानिक विधियों की खोज करनी चाहिए। किसी 'खतरनाक स्थिति' में भी जिसमें संघर्ष की स्थिति का समाधान करने में संवैधानिक व्यवस्था अकल हो जाती है, उदारवादी राजनीतिक वैज्ञानिक सामाजिक विवेक के रास्ते को अपनाते हुए, सामाजिक संघर्षों के समाधान के लिये अधिक तर्क संगत

और अधिक मानवीय तरीकों की खोज करने में विश्वास करते है। उनका विश्वास है कि लोगों को आज्ञाकारिता की आदत विकसित करनी चाहिये और सता का सम्मान करना चाहिये। प्रजातंत्र तब समाप्त हो जाता है जब सत्ता आम जनता के हाथ में चली जाती है। राजनीतिक वैज्ञानिक यह सलाह देते रहते हैं कि जनता पर अंकुश होना आवश्यक है।

यह सही है कि वे तब हतप्रभ हो जाते हैं जब वे यह देखते हैं कि समाज में फैले असंतोष के साथ तालमेल बिठाने में राजनीतिक संस्थाएं अधिकाधिक रूप में अरूल हो जाती है। उदारवादी और रेडिकल दोनों प्रकार के राजनीतिक वैज्ञानिकों का एक छोटा सा भाग इस विषय की इस संकुचित परिभाषा को स्वीकार नहीं करता है। उन्होंने उदारवादी और मार्क्सवादी ढांचों के परे जाकर सामाजिक रूपान्तरण को अधिक अच्छे ढंग से समझने के लिये सामाजिक आंदोलनों के क्षेत्र की खोजबीन शुरू कर दी है। कहना न होगा कि सामाजिक आंदोलन की कोई ऐसी एक सर्वमान्य परिभाषा नहीं है जो सभी विषयों के विद्धानों को या किसी एक विषय के भी सभी विद्वानों को स्वीकार्य हो।

'प्रजातंत्र', 'जनता', 'लोकप्रिय,' 'समानता', जैसे कई अनेक पदों के साथ 'आंदोलन' पद (शब्द) का बहुधा विभिन्न सामाजिक आंदोलनकारियों, राजनीतिक नेताओं और विद्वानों, जिन्होंने 'आंदोलनो' पर लिखा है, विभिन्न रूप में प्रयोग किया है। कुछ विद्वानों ने 'आंदोलन' के पद का प्रयोग 'संगठन' या 'संघ के पदों के अदल-बदल के रूप में किया है। कुछेक व्यक्ति इस पद का प्रयोग किसी ऐतिहासिक प्रवृति या झुकाव के लिये करते हैं। राजनीतिक नेताओं और सामाजिक सुधारकों द्वारा अपने कार्यकलापों को 'आंदोलन' कहना, एक फैशन बन गया है, यद्यपि उनके कार्यकलाप एक दर्जन से भी कम लोगों को लेकर किसी संगठन के निर्माण तक सीमित होते हैं। कुछ व्यक्ति जन मुद्दों की प्रेस विज्ञप्तियां देकर आंदोलनों की शुरूआत करने की बात करते हैं। टी.डी. वेल्डन के स्मरणीय वर्गीकरण का प्रयोग करते हुए 'आंदोलन' का पद कई अन्य शब्दों की भाति एक 'हुर्रा शब्द' बन गया है।"

यहीं एक और महत्वपूर्ण बात जोड़ने की जरूरत है कि 'सामाजिक आंदोलन' का पद यूरोपीय भाषाओं में उन्नीसवी शताब्दों के प्रारंभिक वर्षो में प्रचलन में आया। यह सामाजिक उथल-पुथल का समय था। राजनीतिक नेतागणों और लेखकों जिन्होंने इस पद का प्रयोग किया, वे शोषित वर्गो के उत्थान के प्रति चिन्तित थे और मूल्य व्यवस्था के साथ-साथ संस्थाओं और या सम्पति संबंधों को बदलकर एक नये समाज की रचना करना चाहते थे। उनका वैचारिक दृष्टिकोण उनकी परिभाषा में झलकता है। तथापि, 1950 के प्रारंभ से विभिन्न विद्वानों ने सामाजिक आंदोलनों की अवधारणा की सारगर्भित परिभाषाएं देने का प्रयास किया। पॉल विक्लिनसन ने 'सामाजिक आंदोलन' को निम्नलिखित अवधारणा प्रस्तुत की है–

एक सामाजिक आंदोलन किसी भी दिशा में साधन, यहां तक की हिंसात्मक असंवैधानिक साधन द्वारा, क्रांति या 'यूटोपियन (आदर्श लोक) समुदाय स्थापित करने के रूप में, परिवर्तन लाने का एक संकल्पित सामूहिक प्रयास है। अतः सामाजिक आंदोलन स्पष्टतः ऐतिहासिक आंदोलनों, प्रवृत्तियों और झुकावों से भिन्न होते हैं। फिर भी, इस बात का ध्यान दिया जाना महत्वपूर्ण है कि इस प्रकार की प्रवृत्तियां और झुकाव तथा मानवीय व्यवहार के अचेतन या अतार्किक कारकों का प्रभाव सामाजिक आंदोलन का विश्लेषण और स्पष्ट करने में कही महत्वपूर्ण हो सकते है।

एक सामाजिक आंदोलन में न्यूनतम मात्रा में संगठन होना आवश्यक है। यह संगठन एक डीले वाले, अनौपचारिक या आंशिक मात्रा से लेकर अत्यधिक संस्थानौक्त और नौकरशाहीकृत आंदोलन या कॉर्पोरेट समूह के रूप में हो सकता है। वास्तव में, यह बताया गया है कि सामाजिक आंदोलन संबंधी साहित्य प्राकृतिक इतिहास, आंदोलन विकास के प्रतिरूपों (मॉडल्स) या सिद्धांतों से संबंधित है। ऐसे मॉडल्स आंदोलन की संरचना में होने वाले परिवर्तनों का आभास देने का प्रयास करते हैं। ये परिवर्तन प्रारंभिक सामाजिक असंतोष और उत्तेजना की स्थिति तथा करिश्माई नेतृत्व के उभार से लेकर सत्ता को हथियाने के क्रांतिकारी आंदोलन का रूप ले सकते हैं।

एक सामाजिक आंदोलन की परिवर्तन और इसके संगठन के उद्देश्यों के प्रति प्रतिबद्धता, चेतन संकल्प शक्ति, आंदोलन के उद्देश्यों और विश्वासों के प्रति आदर्शात्मक प्रतिबद्धता और सदस्यों तथा अनुसरणकर्ताओं की सक्रिय सहभागिता पर आधारित होती है। संकल्पशीलता और आदर्शात्मक प्रतिबद्धता के रूप में सामाजिक आंदोलन का इस प्रकार का विशिष्ट चित्रण

इस क्षेत्र के अग्रणी विद्वानों द्वारा लगभग सर्वसम्मति से स्वीकार किया गया है। उदाहरणार्थ, हेबरले ने इन विश्वास व्यवस्थाओं को ऐसे लोगों की सामूहिक इच्छा की अभिव्यक्ति माना है जो इन्हें स्वीकार करते हैं। वे इस बात पर जोर देते हैं कि यह संकल्पशीलता का तत्व ही है जो विश्वासों को सामाजिक रूप में प्रभावक बनाता है। सामूहिक रूप से काम करने वाली चेतना संकल्पशीलता सामाजिक आंदोलनों में विचारधाराओं के मूर्तरूप को प्रस्तुत करती हैं।'

पॉल विक्लिनसन द्वारा प्रस्तुत उपरोक्त अवधारणा कोई संक्षिप्त परिभाषा प्रस्तुत करने का दावा नहीं करती। यह अत्यंत विस्तृत है जिसमें संस्थाओं की सीमाओं के अन्तर्गत (जैसे चुनावों में मत देना या स्मरण पत्र देना) संबैधानिक साधनों के द्वारा किसी भी दिशा में परिवर्तन लाने को सम्मिलित किया जाता है। 'न्यूनतम मात्रा में संगठन' का होना एक समस्या है। निश्चित तौर पर यह कहना बड़ा कठिन है कि यह 'न्यूनतम मात्रा' कितनी हो। एक व्यक्ति को इस विषय पर भी आश्चर्य हो सकता है कि सामाजिक आंदोलन की शुरूआत क्या प्रतिबद्ध सदस्यों के द्वारा किसी संगठन की स्थापना के साथ होती है या जैसे जैसे आंदोलन आगे बढ़ता है संगठन समय के साथ धीरे-धीरे विकसित होता जाता है। इस प्रकार की परिभाषा में उपद्रव और विद्रोह को सम्मिलित नहीं किया जा सकता जिनमें शुरूआत में कोई संगठन नहीं होता है। विल्किनसन की कार्यवाहक अवधारणा की ये कठिनाइयां होते हुए भी इसका स्वतः शोध का अपना मूल्य है।

यहां यह कहना उचित होगा कि भारत में सामाजिक आंदोलनों के अध्ययनों में भारतीय संदर्भ में अवधारणा को परिभाषित करने के अभी कोई व्यवस्थित प्रयास नहीं हुए है।

घनश्याम शाह के अनुसार उद्देश्य, विचारधारा, कार्यक्रम, नेतृत्व और संगठन सामाजिक आंदोलनों के महत्वपूर्ण निर्णायक घटक है। ये अन्तनिर्भर हैं जो एक-दूसरे को प्रभावित करते हैं। हर भी रणजीत गुहा की चेतावनी पर ध्यान दिया जाना जरूरी है। उन्होंने कहा है कि यहापि ये निर्णायक तत्व तथाकथित स्वतः सूर्त विद्रोह सहित सभी प्रकार के आंदोलनों या बगावतों में मिलते हैं, तथापि असंरचित से लेकर पूर्णतः संगठित आंदोलनों में इनके रूप भिन्न होते हैं। उन्होंने कुछ इतिहासकारों के इस विचार को चुनौती दी है. जिन्होंने यह मत व्यक्त किया है कि कृषक विद्रोह स्वतः सूर्त होते हैं और इनमें राजनीतिक चेतना और संगठन का अभाव होता है। इस प्रकार के विद्रोहों में न तो नेतृत्व का और न ही उद्देश्य का, न ही एक कार्यक्रम के कुछ रूतत्वों का अभाव होता है. फिर भी ये सभी विशेषताएं बीसवीं शताब्दी के ऐतिहासिक दृष्टि से अधिक उन्नत आंदोलनों की परिपक्वता और परिष्कृत रूप की तुलना में उनके समकक्ष कहीं नहीं ठहर पाती है।"

विश्लेषण के इस मुकाम पर उन अध्ययनों पर भी ध्यान देना प्रासंगिक जान पड़ता है जिनमें असंस्थागत संवैधानिक या संविधानेत्तर सामूहिक राजनीतिक क्रियाओं का विश्लेषण किया गया है जो सामाजिक और राजनीतिक परिवर्तन हेतु नागरिक और राजनीतिक समाज को प्रभावित करती हैं। सामूहिक क्रियाएं, जो प्रस्थिति में परिवर्तन और सामाजिक गतिशीलता को प्राप्त करने हेतु की गई हैं, उन्हें इनसे अलग रखा गया है। वे क्रियाएं जो कानून रूप में स्वीकृत हैं और जिन्हें सम्पूर्ण समाज को या समाज के किसी हिस्से को किसी समय विशेष पर बांधने वाली क्रियाओं के रूप में व्यापक रूप में स्वीकार किया गया है संस्थागत क्रियाएं होती है। ऐसी क्रियाओं में विभाजन, समर्थन, चुनाव में मत देना, प्रचार करना तथा न्यायालयों में कानूनी लड़ाईयां लड़ने को सम्मिलित किया जाता है।

फिर भी, कभी-कभी इन विधियों के साथ अन्य सामूहिक क्रियाओं को भी सम्मिलित कर उन्हें दांवपेंच के रूप में प्रयोग किया जाता है। ऐसे मामलों में, ऐसी क्रियाओं को घनश्याम शाह सामाजिक आंदोलन का हिस्सा मानते है। कभी-कभी, प्रभु समूहों और राज्य की प्रभुसत्ता, निर्देशों और आदेशों के पालन में बाधा डालने की क्रियाओं को सामाजिक आंदोलन मान लिया जाता है। बाधा डालना निश्चित तौर पर विरोध की ही एक अभिव्यक्ति है। किन्तु जब तक ऐसी क्रियाएं व्यक्तिगत स्तर पर होती हैं और सामूहिक क्रिया का रूप धारण नहीं करतीं, यह आंदोलन नहीं है। डेविड चायले के शब्दों में, यह 'गैर-कानूनी जन विरोध है।"

'गैर-कानूनी' शब्द कई प्रश्नों को जन्म देता है। यह कानून और संविधान की व्याख्या का विषय है। एक विशिष्ट क्रिया (कार्यवाही) को उन व्यक्तियों द्वारा गैर कानूनी ठहराया जा सकता है जो सत्ता में है और जो यथास्थिति का समर्थन करते हैं

किन्तु उसी क्रिया (कार्यवाही) को उन व्यक्तियों द्वारा कानून सम्मत बताया जा सकता है जो सामाजिक परिवर्तन लाना चाहते हैं। रजनी कोठारी ने 'प्रत्यक्ष कार्यवाही' को इस प्रकार परिभाषित किया है, "यह संविधानेत्तर राजनीतिक विधि है जो समूह क्रिया का रूप ले लेती है (और) यह सत्तासीन सरकार के विरूद्ध किसी राजनीतिक परिवर्तन लाने के उद्देश्य से की गई होती है।

'संविधानेत्तर' शब्द परिप्रेक्ष्य का विषय है। कोठारी की 'राजनीतिक परिवर्तन' की 1960 की अवधारणा संकीर्ण है जो सरकार के परिवर्तन तक सीमित है। (उसके बाद से उन्होंने इस अवधारणा में परिवर्तन कर दिया है) दरअसल राजनीतिक शक्ति केवल सरकार तक सीमित नहीं होती; यह समाज के कई स्तरों में चंटी होती है। वे सभी व्यक्ति जो 'राजनीतिक परिवर्तन' के लिये प्रयास करते हैं, वे केवल सरकार के विरूद्ध ही संघर्ष नहीं करते हैं। व्यक्तियों की सामाजिक कार्यवाही (क्रिया) कई स्तरों-प्रबल संस्कृति, जाति, वर्ग और विचारधारा के विरूद्ध होती है।

अब एक नजर अ-संस्थानीकृत सामूहिक क्रिया पर भी डालना जरूरी है जिसके कई रूप हो सकते हैं, जैसे विरोध, उपद्रव, हड़ताल, सत्याग्रह, घेराव, दंगे आदि। यदि हम पूर्वोक्त उल्लिखित परिभाषा का अनुसरण करें, तब विरोधों और उपद्रवों को सही रूप में सामाजिक आंदोलन नहीं कहा जा सकता। किन्तु बहुधा, एक सामाजिक आंदोलन एक समयावधि में विकसित होती है। शुरूआत में ऐसे प्रदर्शनों का कोई संगठन और परिवर्तन संबंधी कोई 'विचारधारा' नहीं होती। उदाहरणार्थ, जब गुजरात में एक इंजीनियरिंग कॉलेज के विद्यार्थियों ने भोजनशाला के बिल के प्रति विरोध प्रदर्शित किया, तब यह उनकी एक अपेक्षाकृत स्वतः स्फूर्त क्रिया थी। किन्तु, इसी विरोध प्रदर्शन ने बाद में गुजरात में सन् 1974 में नव निर्माण आंदोलन का रूप ग्रहण कर लिया।

यही नहीं, एक विशिष्ट सामूहिक क्रिया कुछ विद्धानों के लिये मात्र एक विरोध प्रदर्शन हो सकता है, जबकि दूसरों के लिये यह एक आंदोलन होता है। यह विश्लेषण और परिप्रेक्ष्य के स्तर पर निर्भर करता है। उदाहरणार्थ, 1950 के दशक में भाषाई प्रान्तों के निर्माण की मांग को लेकर समाज के एक वर्ग द्वारा की गई सामूहिक क्रिया को कुछ लोगों द्वारा एक 'विरोध प्रदर्शन' माना गया और कुछ के द्वारा एक 'आंदोलन' मात्र था। इन्हीं विद्वानों ने बाद में 'विरोध प्रदर्शन' को 'आंदोलन' माना। घनश्याम शाह विरोध, प्रदर्शन, उपद्रव, हड़ताल आदि को एक 'आंदोलन' या अधिक सुस्पष्ट रूप में समाज के किसी विशिष्ट वर्ग या संस्तर द्वारा किए गए सामाजिक आंदोलन का एक अंग मान कर चलते हैं।

निष्कर्ष

बहुधा, राजनीतिक वैज्ञानिक और समाजशास्त्री 'सामाजिक' और 'राजनीतिक' आंदोलनों के बीच अंतर नहीं करते हैं। समाजशास्त्री मानते हैं कि सामाजिक आंदोलनों में उन आआंदोलनों को भी सम्मिलित किया जाता है जिनका स्पष्ट उद्देश्य राजनीतिक परिवर्तन लाना होता है और यह सही भी है। सामाजिक आंदोलन संबंधी दो ग्रंथ, जिनका सम्पादन एम.एस.ए. राव ने किया है, उनमें ऐसे दो अध्ययनों को सम्मिलित किया गया है (1) नक्सलवादी आंदोलन जिसका उद्देश्य राज्य सत्ता को हथियाना है और (2) उच्च प्रस्थिति प्राप्त करने हेतु पिछड़ी जाति का आंदोलन। रोडल्फ हेबरले कहते हैं कि सभी आंदोलनों के राजनीतिक निहितार्थ होते हैं, चाहे उनके सदस्य राजनीतिक शक्ति प्राप्त करने की कोशिश नहीं करते हैं। राजनीतिक वैज्ञानिक भी 'सामाजिक आंदोलन' शब्द का प्रयोग करने से परहेज नहीं करते हैं।

सन्दर्भ

1. घनश्याम शाह, भारत में सामाजिक आंदोलन, रावत पब्लिकेशन जयपुर, 2009. पृ. 1
2. उपरोक्त, पृ. 2
3. जी. अल्मीड एण्ड जे, कोलमैन, द पॉलिटिक्स ऑफ डिवालंपिंग एरियाज, प्रिसंटन पूनिवर्सिटी प्रेस, प्रिंसटन, 1960

4. एस.पी. अध्पर (सं.) द पॉलिटिक्स ऑफ मास वापलेंस इन इंडिया, मानकटलाज, बाम्बे, 1966, पृ.33
5. आर. श्रीनिवासन, "डिमोक्रेसी एण्ड द रिवोल्ट ऑफ द मासेज" इन एस.पी. अय्यर (एडीटेड) र पॉलिटिक्स ऑफ मास वामलेंस इन इंडिया, पूर्वोक्त
6. टी.डी. बेलड्न, द वोकैबुलरी अऑफ पॉलिटिक्स, पेनग्यून बुक्स, लंदन, 1955
7. पॉल विल्किनसन, सोशल मूवमेंट, पाल माल, लंदन, 1971. 7. 27
8. प्रताप चन्द्रा, "स्टही ऑफ आइडियोलॉजिकल डिसकोस इन एनसिएण्ट इंडिया सर्व फॉर ए सुटेबल मॉडल'', इन एस. सी. मल्लिक (एडीटेड) डिससेन्ट, प्रोटेस्ट एण्ड रिफर्काम इन इंडियन सिविलाइजेशन, इंडियन इंस्टीटयूट ऑफ एडवांस स्टडीज, शिमला, 1977
9. रणजीत गुहा, एप्लमेंट्री आसपेक्ट्स ऑफ पौजेन्ट इनसरजेंसी इन कोलोनियल इंडिया, ऑक्स्फोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, दिल्ली, 1983, पृ.10
10. घनश्याम शाह, पूर्वोक्त पृष्ठ।
11. डेविड बागले, "द पेडागाँगी ऑफ डिमोक्रेसी कांवरसिव पब्लिक प्रोटेस्ट इन इंडिया'' द अमेरिकन पॉलिटिकल साइंस रिव्यू, वॉल्यूम 56 (3), सितम्बर 1962
12. रजनी कोठारी, "डाइरेक्ट एक्सन ए पैर्टन ऑफ पॉलिटिकल विर्हवियर'', क्वेस्ट, वाल्यूम 24, जनवरी-मार्च 1960, पृ. 27.

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

ई-गवर्नेंस की सफलताऐं, सीमाऐं एवं सम्भावनाऐं

डॉ. कौशल कुमार सैन
सह आचार्य- राजनीति विज्ञान
बाबू शोभाराम राजकीय कला महाविद्यालय, अलवर

सारांश : ई-गवर्नेन्स से अभिप्राय सरकार द्वारा सेवाओं एवं सूचनाओं को जनता द्वारा प्रयुक्त किए जाने वाले साधनों का प्रयोग कर जन साधारण को उपलब्ध कराए जाने से है। इस प्रकार के सूचना प्रदाता साधन सूचना प्रौद्योगिकी में प्रयोग से सरकार को जनता एवं अन्य अभिकरणों को सूचनाओं के प्रसार हेतु प्रक्रिया को दक्ष, त्वरित एवं पारदर्शी बनाने तथा प्रशासनिक गतिविधियों के निष्पादन में सुविधा रहती है। सूचना और संचार प्रौद्योगिकी केवल विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति करके कार्य संस्कृति के परिवर्तन को बढ़ा सकती है। नागरिकों को सरकारी सेवाओं की बेहतर डिलीवरी, व्यापार और उद्योग के साथ बेहतर सरकारी संपर्क, सूचना तक पहुँच और निर्णय लेने के लिए भागीदारी के माध्यम से नागरिक सशक्तीकरण को बढावा देती है। ई-गवर्नेंस केवल तकनीकी उपकरणों को पेश करने या उनका उपयोग करने से नहीं है। बल्कि यह मूल रूप से नागरिकों को बेहतर सेवा प्रदान करने के लिए तथा सरकारी प्रक्रियाओं और कार्यों को एकीकृत करने के लिए मानसिकता और कार्य संस्कृति में बदलाव करती है।

प्रशासन में सूचना प्रौद्योगिकी का समन्वित प्रयोग करना ई-गवर्नेस का पर्याय है। लोक प्रशासन में इस प्रकार का प्रयोग सर्वप्रथम सन् 1969 में अमेरिकी रक्षा विभाग द्वारा कुछ कम्प्यूटरों को लोकल एरिया नेटवर्क से जोड़कर किया गया था। एडवांस रिसर्च प्रोजेक्ट एडमिनिस्ट्रेशन नेटवर्क नामक यह परियोजना ही विस्तारित होकर वर्ल्ड वाइड वेब का रूप ले चुकी है।

अमेरिका में दिसम्बर 2002 में पारित ई.शासन अधिनियम 2002 के माध्यम से सूचना प्रौद्योगिकी एवं लोक सेवाओं का एकीकरण हो चुका है। देश-विदेश के अधिसंख्य सरकारी विभागों, अभिकरणों तथा संगठनों की अपनी इंटरनेट वेबसाइटें खुल गई हैं। इन वेबसाइटों के माध्यम से सरकारी संगठन तुलनात्मक रूप से अधिक पारदर्शी, संवेदनशील और जनोन्मुख सिद्ध हुए हैं। जैसाकि वर्तमान युग में सूचना आर्थिक विकास की कुंजी है इसलिए पूरी व्यवस्था सूचना के चारों ओर घूमती रहती है। वास्तव में ई-शासन एक विस्तृत संकल्पना है जो मात्र शासकीय व्यवस्था से संबंध नहीं रखती अपितु इसमें राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, तकनीकी, प्रशासनिक तथा अन्य आयाम भी शामिल हैं। यदि संकीर्ण अर्थ में देखा जाए तो इलेक्ट्रॉनिक कम्प्यूटर एवं सूचना विज्ञान के क्षेत्र में विकसित हुई युक्तियों का प्रशासन में प्रयोग करना ही ई-गवर्नेस है। जबकि इसके विपरीत विस्तृत दृष्टिकोण में इसका अर्थ किसी भी संगठन, समाज या तंत्र के विविध पक्षों को नियंत्रित, विकसित, पोषित एवं समन्वित रखने के क्रम में सूचना प्रौद्योगिकी का प्रयोग करना ई.गवर्नेस है। यह ई-नागरिक व्यवस्था का व्यापक प्रसार है।

शब्द संक्षेप : ई गवर्नेस, ई लोकतंत्र, ई पंचायत, सूचना प्रौद्योगिकी, ई मित्र, डिजिटल पहल।

भूमिका

आज पंचायतों से लेकर लोकसभा चुनावों में इलैक्ट्रोनिक मतदान मशीनों का इस्तेमाल हो रहा है तो वहीं इंटरनेट ने

भी गांवों में क्रांति लाई है। मध्यप्रदेश के धार आदिवासी जिले में चल रही परियोजना ज्ञानदूत और हिमांचल प्रदेश की लोकमित्र, राजस्थान की ई-मित्र, कुछ ऐसी परियोजनाएँ है जो नागरिको को मंडी के भाव, जाति प्रमाणपत्र, जन्म मृत्यु प्रमाणपत्र, बिजली. पानी टेलीफोन के भुगतान आदि की सुविधाएं प्रदान कर रही है। आजादी के 60 वर्षों में भारत ने करीब हर मोर्चे पर सम्मानजनक प्रगति की है और लोकतंत्र की बुनियाद भी यहां लगातार मजबूत हुई है। पर अगर विशिष्ट उपलब्धियों पर फोकस किया जाए तो पता चलता है कि सूचना प्रौद्योगिकी क्षेत्र में भारत के तेजी से बढ़ते कदमों को विकसित राष्ट्र भी हैरानी से देख रहे है। वर्तमान युग सूचना प्रौद्योगिकी का युग है। इस क्रांति में अंतरिक्ष अनुसंधान विशेषकर उपग्रह विमोचन, उपग्रह संप्रेसण और उपग्रह स्पेक्ट्रम आदि की महत्वपूर्ण भूमिका है। आज मोबाइल टेलीफोनए ई-मेल, एसटीडी, आईएसडी, इन्टरनेट, कम्प्यूटर वेबसाइट और केबल टीवी आदि हमारे जीवन के आवश्यक अंग बन गए है। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं कि आज मानव जीवन के हर क्षेत्र में सूचना प्रौद्योगिकी के पैर दृढ़ता से जमते जा रहे हैं। इसी दिशा को कार्यरूप देने एवं भारत के समग्र एवं त्वरित विकास हेतु सूचना संचार प्रौद्योगिकी की संम्भावना का उपयोग करने के लिए एक राष्ट्रव्यापी आन्दोलन प्रारम्भ किया गया क्योकि सूचना संचार प्रौद्योगिकी में ज्ञान प्रवाहित करके ग्रामीण विकास प्रक्रिया में जान फूंक देने की विशाल संभावना है। आज की लोकतांत्रिक सरकारों पर राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कुशल एवं पारदर्शी प्रशासन देने के दबाव बढ़े है। सूचना का अधिकार इसी कड़ी का एक अंग है। इसके अलावा बैंकिगं एवं निजी क्षेत्र के व्यापारिक संस्थाओं ने भी इंटरनेट आधारित संचार को किसानों, उपभोक्ताओं और सामान्य लोगो के बीच लोकप्रिय बनाया है। आज मानव जीवन के हर क्षेत्र में सूचना प्रौद्योगिकी के पैर दृढ़ता से जमते जा रहे है। आज ई-कॉमर्स, ई-प्रशासन, ई-रजिस्ट्रेशन, ई-मेल, ई-बैंकिग, ई-सर्विस, ई-चौपाल, ई-मैरिज, ई-होटल, टेलीमेडिसिन, डिजीटल लाइब्रेरी, आन लाइन चुनाव परिणाम, बजट एवं परीक्षा परिणाम जैसी अनेक गतिविधियों को सफलतापूर्वक अंजाम दिया जाने लगा है।

शोध विषय के उद्देश्य

प्रस्तुत शोध में ई-गवर्नेंस की सफलताएं, सीमाएं और संभावनाएं विषय का व्यावहारिक अध्ययन किया गया है जिसके अन्तर्गत ई-गवर्नेंस की सफलताएं, सीमाएं और संभावनाओं का सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक परिदृश्य में समीक्षा करना अनिवार्य है। यह समीक्षा वर्तमान भारतीय परिदृश्य में की जानी आवश्यक है। प्रस्तुत शोध में व्यावहारिक अनुभवात्मक विश्लेषणात्मक पद्धति का प्रयोग किया गया है। अध्ययन में स्पष्टता एवं प्रमाणिकता लाने के लिए सूचनाओं का संकलन द्वितीयक स्रोतों के माध्यम से किया गया है। इस महत्त्वपूर्ण विषय पर विभिन्न पुस्तकों शोध जनरल, शासकीय तथा अशासकीय प्रकाशन, समाचार पत्र पत्रिकाओं आदि का प्रयोग किया गया है ताकि पर्याप्त आगत मिल सके।

ई-गवर्नेंस की संभावनाऐं

सरकार के निर्णयों में सुधार। सरकार के प्रति लोगों के विश्वास में वृद्धि करना। सरकार की जवाबदेही एवं पारदर्शिता बढ़ाना। सूचना युग में नागरिकों को उन्नत व्यवस्था प्राप्त करना। नई चुनौतियों का सामना करने में गैर सरकारी संगठनों, व्यवसायियों एवं इच्छुक नागरिकों को प्रभावी रूप से शामिल करना। ग्रामीण क्षेत्र में रहने वाले लोग भी देश-विदेश के घटनाक्रम से भली-भाँति परिचित हो सकेंगे। इसके माध्यम से योजनाओं एवं दस्तावेजों का सुव्यवस्थित रख रखाव संभव हो सकेगा। सूचना का अधिकार एवं ई.प्रशासन मिलकर देश के विकास में क्रांतिकारी परिवर्तन ला सकेंगे। विभिन्न योजनाओं या परियोजनाओं की जानकारी एक आम आदमी तक इंटरनेट के माध्यम से पहुंचायी जा सकती है ताकि वे उसके बारे में जान सकें एवं लाभान्वित हो सकें। ज्ञान आधारित भारत के निर्माण में ई.गवर्नेंस एक महत्वपूर्ण कारक है।

ई-गवर्नेंस की सफलताएं

ई-गवर्नेंस से प्रशासनिक नेतृत्व एवं तकनीकीका एकीकरण हो जाता है। सरकारी विभागों या अभिकरणों से संबंधित

सूचनाएं एवं सेवाएं इंटरनेट पर उपलब्ध होना एवं स्वयं सरकार द्वारा सूचना प्रौद्योगिकी की आधुनिक तकनीकों का प्रशासनिक कृत्यों में प्रयोग करना ई-गवर्नेस का व्यावहारिक स्वरूप है। ई-शासन की अवधारणा मूल रूप से बेहतर सरकार की मान्यता को पल्लवित करती है जिसके तहत नौकरशाही का छोटा आकार, प्रशासन में सच्चरित्रता, लोक सेवाओं के प्रति जवाबदेही, जनता में प्रशासन के प्रति विश्वसनीयता जगाना तथा प्रशासनिक कार्यों में पारदर्शिता लाना इत्यादि शामिल हैं। यह प्रशासन में सूचना प्रौद्योगिकी का प्रयोग करती है और इसमें ई.गवर्नेस शामिल है। यह अभिशासन की स्थापना की एक पद्धति है। इस व्यवस्था से कागजी कार्यवाही में कमी आती है तथा विलम्बशाही पर रोक लगती है। ई-गवर्नेस द्वारा टेलीकॉन्फ्रेंस संभव हुआ है जिससे प्रशासन में दक्षता आई है। इसमें एक ही कार्य की पुनरावृत्ति नहीं होती और निर्धारित इलेक्ट्रॉनिक कार्यक्रमों के रूप में प्रोग्राम विकसित कर दिया जाता है।

वर्तमान में सूचना प्रौद्योगिकी के युग में लोकतंत्र ई लोकतंत्र में परिवर्तित होता दिखाई दे रहा है जिसमें सरकारी कर्मचारियों को प्रशिक्षण द्वारा उनमें रचनात्मकता का विकास होता है जिससे शासन में अधिक पारदर्शिता एवं दायित्वशीलता देखने को मिलती है। ई-लोकतंत्र सामाजिक निर्माण में सभी वयस्क नागरिकों की भागीदारी से ही संभव हो पाया है। विभिन्न साइटों और विचारों का प्रतिनिधित्व करने वाले सभी इंटरनेट साइटों, समूहों और सामाजिक नेटवर्क की एक विस्तृत विविधता के माध्यम से सामाजिक समावेश की एक संरचना भी प्रदान की जाती है। ई लोकतंत्र व्यक्तिगत राय व्यक्त करने की क्षमता के माध्यम से व्यक्ति की जरूरतों के प्रति संवेदनशीलता को पूरा करता है। इस प्रकार ई.लोकतंत्र समाज के सभी वर्गों द्वारा राज्य के अभिशासन में भाग ले सकने की क्षमता के माध्यम से लोकतंत्र की विकास की दिशा में भी सूचना और संचार प्रौद्योगिकी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। समन्वित रूप से ई-लोकतंत्र पारदर्शिता, उत्तरदायित्व की भावना एवं सहभागिता बढ़ाने की प्रक्रिया है। लोकतंत्र एवं प्रभावी शासन को प्रोत्साहित करने हेतु शासन में ई.लोकतंत्र के प्रमुख लक्ष्य निम्नलिखित हैं— सरकार की निर्णयन क्षमता में सुधार। सरकार के प्रति नागरिकों के विश्वास को बढ़ाना। सरकार की उत्तरदायित्वता एवं पारदर्शिता में वृद्धि करना। जन-इच्छा को सूचना युग में समायोजित करने की क्षमता। गैर सरकारी संगठनों, व्यापार एवं सार्वजनिक चुनौतियों से लड़ने हेतु नए मार्गों की खोज में रुचि रखने वाले नागरिकों की प्रतिभा का समुचित उपयोग करना।

ई-पंचायत

भारत में पंचायतीराज के माध्यम से लोकतंत्र का विकेंद्रीकरण किया गया है। यह शासन का प्रमुख क्रियान्वित निकाय होता है जिस पर पूरी विकासात्मक योजना की सफलता निर्भर करती है। इस संदर्भ में ई-पंचायत एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। इसके लिए पंचायत से संबंधित सभी मामलों, नियमों, सरकारी योजनाओं से संबंधित सभी सूचनाओं आदि का कम्प्यूटर द्वारा संग्रहण कर उनका सहज लाभ आम आदमी तक पहुंचाया जा सकता है। दरअसल ई-पंचायत से अर्थ इलेक्ट्रॉनिक पंचायत से है। इसके अंतर्गत सूचना और संचार की आधुनिक तकनीक का उपयोग कर पंचायत को कम्प्यूटरीकृत किया जाता है। इसका मुख्य उद्देश्य पंचायत स्तर पर शासन प्रबंधन में गुणात्मक और मात्रात्मक सुधार करना है। ई.पंचायत के माध्यम से बेहद तेजी से और कम समय में सूचना का प्रसार होता है जिसका लाभ ग्रामीण जीवन की निरंतर हो रही प्रगति को मिल सकेगा। जहाँ ई-पंचायत का प्रारंभ हो गया है वहां ग्रामीण क्षेत्रों के शासन प्रबंधन में महत्वपूर्ण सुधार देखा गया है, जो पंचायत के सुधार और अर्थव्यवस्था को सकारात्मक रूप से प्रभावित कर रहा है इससे पंचायत स्तर पर पारदर्शिता, शांति, सुरक्षा एवं समानता लाने में मदद मिल रही है।

उल्लेखनीय है कि जिस प्रकार महिलाओं के प्रवेश ने पंचायत स्तर पर पुरुष वर्ग के आधिपत्य को कमजोर किया है ठीक उसी प्रकार इस स्तर पर कम्प्यूटर एवं इंटरनेट का प्रवेश सामाजिक और आर्थिक क्षेत्रों में ई-क्रांतिकारी बदलाव लाने का कार्य करेगा। वर्तमान में पंचायत को राज्य संचित निधि से व्यय राशि आवंटित की जाती है, लेकिन इसकी सही जानकारी आम लोगों तक नहीं पहुंच पाती। ई-पंचायत के माध्यम से वित्तीय अनियमिता को समाप्त किया जा सकता है। इसका सकारात्मक परिणाम लोगों के प्रति व्यक्ति आय के रूप में देखने को मिलेगा। ई-पंचायत तकनीक द्वारा लोगों में राजनीतिक

अधिकार के प्रयोग की शिक्षा से सामाजिक जागरूकता आएगी जिससे लोगों में नागरिक गुणों का विकास होगा, जनता और शासक में एक.दूसरे की परेशानियों को समझने की भावना उत्पन्न होगी, जिससे परस्पर सहयोग का विचार उत्पन्न होगा। यह सामाजिक और आर्थिक उत्थान के लिए बहुत बड़ी क्रांति होगी। ई.पंचायत के माध्यम से भूमि संबंधी दस्तावेजों, नक्शों एवं सरकारी कानूनों और आदेशों की किसानों को सहज प्राप्ति कराई जा सकती है।

भारत में ई-गवर्नेंस की प्रमुख पहलें

डिजिटल इंडिया के अन्तर्गत कई कार्यक्रमों की पहल भारत में की गई है जैसे ब्रॉडबैंड के अंतर्गत तीन उप घटकों द्वारा सभी ग्रामीणों के लिए ब्रॉडबैंड, सभी शहरियों के लिए ब्रॉडबैंड और राष्ट्रीय सूचना संरचना को शामिल किया गया। मोबाइल कनेक्टिविटी नामक पहल का ध्यान देश में नेटवर्क की पहुंच और कनेक्टिविटी के अंतराल को कम करने पर केंद्रित है। मोबाइल कवरेज से वंचित गांवों को चरणबद्ध तरीके से मोबाइल कवरेज मुहैया कराया गया है, दूरसंचार विभाग इस परियोजना का नोडल विभाग बनाया गया है। पब्लिक ई-शासन प्रौद्योगिकी के माध्यम से सरकारी तंत्र में सुधार किया गया है अर्थात् सरकारी सेवाओं के वितरण को अधिक प्रभावी बनाने के लिए सरकारी प्रक्रियाओं को सरल और अधिक कुशल बनाया गया है। इसलिए विभिन्न सरकारी डोमेन और सभी मंत्रालयों या विभागों द्वारा इसे कार्यान्वित किया जाना चाहिए। देश में ई.शासन, मोबाइल शासन और सुशासन की जरूरत को ध्यान में रखते हुए तथा गवर्नेस के कायाकल्प के लिए ई-क्रांति दृष्टिकोण को शामिल किया गया है। इसके अंतर्गत आठ उप घटक हैं। डिजिटल इंडिया कार्यक्रम के अंतर्गत विभिन्न प्रोजेक्ट उत्पाद शुरू किए गए हैं या किए जाने हैं. जैसे डिजिटल लॉकर सिस्टम इससे दस्तावेजों के चोरी होने का डर नहीं रहेगा। इसके माध्यम से पैनकार्ड, आधार कार्ड एवं अन्य जरूरी दस्तावेज ऑनलाइन सुरक्षित रखे जा सकेंगे। साथ ही इन्हें ऑनलाइन शेयर किया जा सकता है। ई-हस्ताक्षर नागरिकों को डिजिटल रूप से दस्तावेज हस्ताक्षर करने की अनुमति देता है। ई.अस्पताल योजना के अंतर्गत मरीज देश के किसी भी कोने में बैठकर ऑनलाइन रजिस्ट्रेशन करवा सकेंगे। नेशनल स्कॉलरशिप पोर्टल के अन्तर्गत छात्रों की स्कॉलरशिप की व्यवस्था ऑनलाइन होती है कोई भी छात्र स्कॉलरशिप के लिए ऑनलाइन आवेदन कर सकता है। इसका वितरण भी ऑनलाइन ही होता है। भारत नेट द्वारा भारत सरकार ने देश की सभी ग्राम पंचायतों को जोड़ने के लिए भारत नेट नामक उच्च गति डिजिटल राजमार्ग शुरू किया है। यह ऑप्टिकल फाइबर का इस्तेमाल करने वाला विश्व का सबसे विशाल ग्रामीण ब्रॉडबैंड कनेक्टिविटी प्रोजेक्ट है।

ई-गवर्नेंस की सीमाऐं

ई गवर्नेंस में प्रयुक्त होने वाली तकनीकी अत्यधिक व्यय साध्य होती है। ई गवर्नेंस से तात्पर्य सरकार की सूचना एवं सेवाओं तक सभी नागरिकों की पहुंच संभव होना। यह लोकतंत्र के लिए अच्छा है लेकिन सभी नागरिकों की पहुंच सरकारी सूचनाओं तथा सेवाओं तक संभव नहीं हो पाती है। ई-गवर्नेंस में कंप्यूटर, सीसीटीवी ट्रैकिंग तंत्र, टीवी जैसे उपकरणों का प्रयोग शामिल होता है। भारत जैसे देश में इस प्रकार की तकनीक को अपनाना सरकार एवं नागरिकों के लिए काफी कठिन हो सकता है। सरकार द्वारा नीति निर्माण काफी समय से जटिल प्रक्रिया रही है। क्योंकि सरकार द्वारा अपनाई जाने वाली नीति निर्माण की प्रक्रिया में अभी भी परम्परागतता दिखाई देती है। शासकीय अवसंरचना में शक्ति का केन्द्रीयकरण राजनीतिक नेताओं के हाथों में निहित रहता है जो कि विस्तृत नीतिगत प्राथमिकताएं निर्धारित करते हैं तथा इन प्राथमिकताओं और विद्यमान कार्यक्रमों एवं वैधानिक आवश्यकताओं के आधार पर संसाधनों का आवंटन करते हैं।

किसी भी परियोजना में पहला कदम परियोजना की योजना बनाना है। परियोजना की सफलता इस बात पर निर्भर करेगी कि इसे किस कौशल और विशेषज्ञता के साथ योजनाबद्ध है। अक्सर यह महसूस किया जाता है कि सरकारी विभाग सैकड़ों करोड़ रुपये की ई-गवर्नेंस परियोजनाओं के लिए परियोजना योजना तैयार करने में कुछ लाख रुपये खर्च करने से कतराते हैं। योजनाएँ स्पष्ट उद्देश्यों के बिना बनाई जाती हैं। वित्तीय नियंत्रण के लिए कोई मापदंड नहीं हैं। कभी.कभी

प्रक्रियागत और विभागीय बाधाएँ होती हैं कभी कभी कानूनी बाधाएँ और कभी.कभी संवैधानिक बाधाएँ भी होती हैं। जमीनी हकीकत को समझे बिना सलाहकार ऐसे समाधान सुझाते हैं जो निरर्थकए अव्यवहारिक और अप्राप्य होते हैं। नतीजतन उनकी रिपोर्ट सरकारी अधिकारियों की अलमारियों में धूल फाँकती रहती है। यह नहीं समझा जाता है कि ई.गवर्नेंस कार्यक्रम के सफल कार्यान्वयन के लिए कार्यक्रम प्रबंधन इकाई को प्रधानमंत्री या राष्ट्रपति के अधीन रखा जाना चाहिए ताकि सफल कार्यान्वयन हो सके। इस कार्यक्रम प्रबंधन इकाई के लिए टीम में विभिन्न सरकारी पृष्ठभूमि के अनुभव वाले व्यक्ति शामिल होने चाहिए।

ई-गवर्नेंस में सफलता का श्रेय तो हर कोई लेता है और असफलता की जिम्मेदारी कोई नहीं लेता। ई.गवर्नेंस की कुछ परियोजनाएं ऐसी हैं जो कुछ रुकावटों के कारण समाप्त हो सकती हैं और समय समय पर उन्हें नई टीमों को सौंप दिया जाता है। नई टीमें पहले से ही गिरे हुए सिस्टम को बनाने के बजाय आम तौर पर दोषारोपण का खेल शुरू कर देती हैं कि पिछली टीम ने ऐसा किया है। पहली टीम दूसरी को और दूसरी पहली को दोष देती है। दोषारोपण का खेल परियोजना की पूरी विफलता में समाप्त होता है।

सुझाव

-आईटी में मानकीकरण, परीक्षण और गुणवत्ता को बढ़ावा देना तथा आईटी अनुप्रयोग और कार्यों के लिए प्रक्रिया का मानकीकरण करना चाहिये।

-इंटरनेट, आई टी आदि सक्षम सेवाओं को ज्यादा से ज्यादा बढ़ावा दिया जाए।

-ई.गवर्नेंस, ई.कॉमर्स, ई.मेडिसिन, ई.इंफ्रास्ट्रक्चर आदि को बढ़ावा देने में अन्य विभागों को सहायता प्रदान की जाए।

-प्रौद्योगिकी शिक्षा और सूचना प्रौद्योगिकी आधारित शिक्षा को और अधिक बढ़ावा दिया जाए।

निष्कर्ष

ई-गवर्नेन्स का लक्ष्य दीर्घकालिक विकास के लिए आधारशिला रखना और उसे गति प्रदान करना है। इस योजना का उद्देश्य सही शासन और संस्थागत तंत्र बनाना, मुख्य बुनियादी ढाँचा और नीतियाँ स्थापित करना तथा शासन के लिए भारत सरकार ने राष्ट्रीय ई-गवर्नेंस कार्य योजना को मंजूरी दी है। इस योजना का उद्देश्य देश में ई-गवर्नेंस केंद्रित और व्यवसाय-केंद्रित वातावरण बनाने के लिए केंद्र, राज्य और एकीकृत सेवा स्तरों पर कई परियोजनाओं को लागू करना है। योजना को सैद्धांतिक रूप से मंजूरी दे दी गई है और समग्र कार्यक्रम सामग्री कार्यान्वयन दृष्टिकोण और शासन संरचनाओं को समर्थन दिया गया है। प्रशासनिक स्तर पर की गई कार्यवाहियों से यह देखा जा सकता है कि केंद्रीय मंत्रालयों,विभागों और राज्यों तथा संघ राज्य क्षेत्रों के स्तर पर ई-गवर्नेंस की शुरुआत को सर्वाच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिये। केंद्र और राज्यों में कार्यान्वयन के लिए एक राष्ट्रीय ई-गवर्नेंस कार्य योजना तैयार की जानी चाहिये। यह कहा जा सकता है कि बेहतर प्रशासन के लिए ई-गवर्नेंस वर्तमानकी आवश्यकता है।

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

राम मनोहर लोहिया का समाजवादी-सांस्कृतिक चिंतन

डॉ. दयाचंद
सहायक आचार्य-राजनीति विज्ञान
बाबू शोभराम राजकीय कला महाविद्यालय, अलवर

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के समय में बौद्धिक स्तर पर ऐसे समर्थ कई नेता हुए जिन्होंने सांस्कृतिक विषयों पर सोचने और लिखने के साथ इस संबंध में अपने मौलिक विचार प्रस्तुत किये। इनमें लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक, जवाहर लाल नेहरू, का. पी. सी. जोशी और डॉ. राम मनोहर लोहिया का नाम विशेष रूप से लिया जा सकता है। 'गीता रहस्य' तिलक की अमूल्य कृति है जिसने आजादी की लड़ाई लड़ने वालों को गहरे रूप से प्रभावित किया था।

गाँधी, सहजानन्द सरस्वती और विनोबा भावे ने तिलक का अनुसरण करते हुए 'गीता की अपनी-अपनी व्याख्याएँ की और स्वतंत्र पुस्तकें भी लिखीं। फाँसी के तख्ते पर झूलते समय पं. राम प्रसाद बिस्मिल के हाथ में गीता थी। गणपति उत्सव और शिवाजी उत्सव की शुरुआत कर तिलक ने हिन्दुओं में राष्ट्रीय भावना भरने की भरपूर कोशिश की। जहां गणपति पौराणिक देवता थे, वहाँ मराठा साम्राज्य के संस्थापक शिवाजी ऐतिहासिक व्यक्ति थे। तिलक को इस सोच और प्रयास से हिन्दुओं में राष्ट्रीयता का भाव जागा।

जवाहरलाल नेहरू सिर्फ एक व्यक्ति नहीं थे। वह एक मूर्तमान मानक थे, भारतीय मानस में आधुनिक आदर्श थे। वह एक ऐसी जीवन देखने को एक दृष्टि का प्रतिनिधित्व करते थे, इसमें इनकी संस्कृति भी शामिल थी। वे मूलतः एक राजनीतिक नेता थे, लेकिन उससे भी बढ़कर लेखक थे। जनतांत्रिक भारत और भारत की आहत चेतना के क्षितिज पर कोई भी नेता इस प्रकार नहीं छाया हुआ है जैसे जवाहरलाल नेहरू; इसका स्पष्ट कारण यही है कि नयी भारतीय सभ्यता के निर्माण से सम्बद्ध नीतियाँ, कार्यक्रम, प्रक्रियाएँ और अन्य कामों को शुरू करने में जैसी प्रमुख भूमिका उन्होंने निभायी, वैसी किसी और ने नहीं। वह एक महान राजनीतिक प्रचारक और भारतीय जनता के अथक पक्के शिक्षक भी थे। उनके लेखों, वक्तव्यों व भाषणों ने दशकों तक जनमत का निर्माण किया और राष्ट्रीय जीवन के कई महत्वपूर्ण मसलों पर जनमत का नेतृत्व किया। उनकी दिलचस्पी व्यापक थी, लगभग हर विषय में वह गहरी दिलचस्पी लेते थे, मानों विश्वकोष के हर विषय में इतिहास, साहित्य और संस्कृति से लेकर भौतिक एवं प्राणि विज्ञानों तक, पर्यावरण से प्रविधि तक, चराचर जगत तक। वह एक विश्व मानव थे, मानवतावादी और सर्वदेशीय, उनके लिए कोई भी बेगाना या पराया नहीं था।

भारतीय और विश्व इतिहास के लेखक के रूप में नेहरू का व्यक्तित्व मुक्ति संघर्ष के नेता और उनके प्रधानमंत्री वाले व्यक्तित्व से बहुत बड़ा है। इतिहासकार नेहरू की इतिहास दृष्टि को दो अर्थों में विश्लेषित करते हैं, एक तो इतिहासकार या इतिहास लेखक की दृष्टि से नेहरू के व्यक्तित्व का विवेचन और दूसरा स्वयं इतिहास को विवेचित करने की उनकी दृष्टि या विचारधारा का अध्ययन।

पहले अर्थ में नेहरू ने एक सक्रिय राजनीतिक योद्धा का जीवन बिताते हुए अपने कुल लगभग दस वर्षों के जेल जीवन में इतिहास के दो ग्रंथ 'विश्व इतिहास की झलक' और 'हिन्दुस्तान की कहानी' की रचना की। नेहरू ने 'विश्व इतिहास की

झलक 1930-40 के बीच अपनी पुत्री इन्दिरा के नाम लिखे गये पत्रों के रूप में लिखी। बाद में वे पत्र पुस्तकाकार छपे जिनके कई संस्करण हुए। ये पत्र पूर्व की प्राचीन सभ्यताओं पर उनके विचारों के रूप में शुरू होते हैं और उन घटनाओं के साथ समाप्त होते हैं जो द्वितीय विश्वयुद्ध के कारण बनीं।

दूसरी पुस्तक 'डिस्कवरी ऑफ इंडिया' प्राचीन काल से लेकर वर्तमान काल तक भारत के इतिहास का विश्लेषण है। नेहरू की सर्वाधिक विशेषता यह थी कि उन्होंने इतिहास को भूत की कहानी के रूप में चित्रित नहीं कर उसे वर्तमान की नजर से देखने का प्रयास किया। इस सन्दर्भ में उन्होंने 'डिस्कवरी ऑफ इंडिया' में लिखा है–

'वर्तमान की जड़ें अतीत में रहती हैं और इसलिए मैंने अतीत में खोजपूर्ण बात्राएँ को और इन यात्राओं के दौरान हमेशा यह खोजने का प्रयत्न करता रहा कि अतीत में वर्तमान को समझने के कोई सूत्र हैं या नहीं। किन्तु अतीत की घटनाओं के मनन के समय भी वर्तमान का प्रभाव मुझ पर हमेशा बन रहा।" निष्कर्षतः जवाहरलाल नेहरू इतिहासकार के साथ-साथ इतिहास दार्शनिक भी हैं और राजनेता से अलग उनके व्यक्तित्व का यह एक अलग महत्वपूर्ण पक्ष है जिसके लिए भारत और दुनिया इनका हमेशा ऋणी रहेगी।

राष्ट्रीय स्तर पर का. पुरनचन्द जोशी ऐसे वामपंथी नेता थे जिन्होंने देश के सांस्कृतिक जीवन में सार्थक हस्तक्षेप किया और प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से, अनेक सांस्कृतिक संस्थाओं की स्थापना में सक्रिय योगदान दिया। इनमें प्रलेस और इप्टा का नाम प्रमुखता से लिया जा सकता है। जोशी ने बड़े परिश्रम से 1857 के मुक्ति संघर्ष से जुड़े लोकगीतों का भी संकलन और प्रकाशन किया।

1948 में सोशलिस्ट पार्टी ने भी प्रलेस और इप्टा के तर्ज पर एक सांस्कृतिक संगठन का निर्माण किया था जिसका मुख्य केन्द्र बनारस था। इसने अपना एक घोषणा पत्र भी प्रकाशित किया था और इसके लिए 'जनवाणी' नाम से एक पत्रिका का प्रकाशन भी शुरू किया था। लेकिन यह संगठन हिन्दी क्षेत्रों तक ही सीमित था। दो-चार वर्षों में ही वह काल कवलित हो गया। आचार्य नरेन्द्र देव इसके मुख्य प्रस्तावक थे। का. जोशी कम्युनिस्ट पार्टी के नेता होने के साथ-साथ एक इतिहासकार भी थे। उन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से इतिहास में एम.ए, किया था इसलिए ऐतिहासिक तथ्यों को ये कभी नकारते नहीं थे।

लोहिया वैसे तो मुख्य रूप से राजनेता थे, लेकिन सांस्कृतिक विषयों में भी उनकी गहरी रुचि थी और इस ओर उन्होंने ध्यान भी दिया था और कतिपय मौलिक विचार रखने की कोशिश की थी। लेखकों और बुद्धिजीवियों की एक अच्छी जमात उनके साथ थी, जिनमें प्रमुख थे- रघुवीर सहाय, विजयदेव नारायण साही, रघुवंश, कृष्णनाथ, रमा मित्रा, ओम प्रकाश दीपक, बद्री विशाल पित्ती. परिमल दास, संगम लाल पांडेय, श्रीकान्त वर्मा, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, लक्ष्मीकांत वर्मा, युगेश्वर आदि। बद्री विशाल पित्ती जैसे पूंजीपति इनके वित्त पोषक थे। लोहिया और उनके समर्थक साहित्यकारों ने उनके विचारों को प्रचारित प्रसारित करने के लिए पत्रिकायें भी निकाली थी। लोहिया स्वयं 'मैनकाइन्ड' और 'जन' का सम्पादन करते थे और ये दोनों पत्रिकाएँ उनकी पार्टी की मुख्य पत्रिकाएँ थीं। बद्री विशाल पित्ती ने 'कल्पना' और डॉ. रघुवंश ने 'क ख ग' निकाला था जिनमें लोहिया समर्थक लेखकों की रचनाएँ विशेष रूप से छपती थीं। लोहिया ने बद्री विशाल पित्ती को प्रेरित कर मकबूल फिदा हुसैन से 'रामायण' की कथा को चित्रांकित कराया था। लोहिया ने बहुत कम लिखा है, उनकी अधिकांश रचनाएँ उनके द्वारा दिये गये भाषण हैं।

लोहिया ने 1929 में कोलकाता विश्वविद्यालय से अंग्रेजी ऑनर्स की परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास की थी। उन्होंने बर्लिन विश्वविद्यालय (जिसका नाम बाद में बदलकर हमबोल्ट विश्वविद्यालय हो गया) में चार वर्षों तक रहकर स्नातकोत्तर तथा डॉक्टरेट की उपाधियाँ हासिल की। डॉक्टरेट के लिए उनके द्वारा लिखे गए शोध-प्रबन्ध का शीर्षक 'इकोनॉमिक्स ऑफ साल्ट सत्याग्रह' था।' लोहिया की गहरी दिलचस्पी हिन्दू मिथकों के अध्ययन और पुनर्व्याख्या में थी। अर्थशास्त्री लोहिया परम स्वतंत्र थे। वे ऐतिहासिक तथ्यों को तोड़-मरोड़ और पुनर्व्याख्या के जरिए अपने वक्तव्यों या दृष्टिकोण के पक्ष में ला खड़ा करते थे।

लोहिया की रुचि चित्रकला, मूर्ति कला और वास्तुकला में भी थी। उनके भाषणों में जहाँ-तहाँ इसके बारे में टिप्पणियाँ

पढ़ने को मिलती हैं। वे बतलाते हैं कि भारत में पांच महान सांस्कृतिक केन्द्र हैं; जिनमें एलोरा, कोणार्क और खजुराहो के मंदिर प्रमुख है।

उनका कहना है कि यमुना के दक्षिण में ही कला विकसित हुई है, उत्तर में नहीं। वे आन्ध्र संस्कृति को विशेषता मध्यकालीन चित्रों में देखते हैं। लोग भले ही दिल्ली, आगरा, आन्ध्र और उत्कल की संस्कृति की बात करें, पर मूल रूप में सारे हिन्दुस्तान की संस्कृति एक है। कोणार्क मंदिर की दीवारों पर उकेरी गई मूतियों पर उनकी टिप्पणियाँ काफी हद तक मौलिक हैं। वे उनके क्रम को पूर्ण सत्य के शाश्वत अन्वेषण के रूप में देखते हैं। वहाँ आखेट, प्रेम, संगीत और शक्ति को आरोही क्रम में रखा गया है।

लोहिया की पुस्तक 'भारत माता धरती माता' में भाषा से संबंधित तीन लेख हैं। एक लेख का शीर्षक है 'हिन्दी, अंग्रेजी और देशी भाषाएँ', दूसरा लेख 'वर्णमाला, भाषा और शिक्षा' से जुड़ा है और तीसरा का शीर्षक है बोली और कपड़ा।

जर्मन प्रवास के दौरान लोहिया की यह धारणा ठोस आकार ग्रहण कर सकी थी कि कोई भी देश तब तक मानसिक एवं अकादमिक दासता से मुक्ति नहीं पा सकता जब तक उसकी स्वयं की भाषा अकादमिक संवाद एवं सरकारी कामकाज के निष्पादन का वाहक न बन जाए।

लोहिया अंग्रेजी के राजकीय भाषा के रूप में ही नहीं बल्कि शिक्षण और शोध के माध्यम के तौर पर इस्तेमाल के भी विरुद्ध थे। वे चाहते थे कि उसका स्थान भारतीय भाषाएँ ले लें। उनका मानना था कि अंग्रेजी को हटाए बिना भारतीय भाषाओं के विकास और समृद्धि का रास्ता नहीं खुल सकता। यहाँ यह कहना आवश्यक है कि लोहिया न तो हिन्दी के अन्ध समर्थक थे और न ही आंग्रेजी सीखने, अंग्रेजी साहित्य पढ़ने और अंग्रेजी बोलने के खिलाफ थे। वे खुद अच्छी अंग्रेजी लिखते बोलते थे तथा अंग्रेजी व्याकरण के नियमों का सख्ती से पालन करते थे। हाँ, भारतीयों से बातचीत में वे भारतीय भाषाओं के इस्तेमाल के पक्षधर थे। लोहिया ने हिन्दी लिखने बोलने की अपनी शैली विकसित की, जिसमें जनसाधारण द्वारा प्रयोग में लाए जानेवाले सुबोध, सरल शब्दों का इस्तेमाल किया। वे डॉ. रघुवीर के कृत्रिम शब्द सूजन के घोर विरोधी थे। हिन्दी के संबंध में वे पुरुषोत्तम दास टंडन और सेठ गोविन्द दास के विचार से भी सहमति नहीं रखते थे। उनका मानना था कि भारतीय भाषाओं के बदले कंबल हिन्दी की बात करने तथा एक कृत्रिम हिन्दी भाषा को जबर्दस्ती लादने से गैर-हिन्दीवासियों के मन में तरह-तरह की आशंकाएँ हो सकती हैं जो देश की एकता के लिए ठीक नहीं है। लोहिया ने कुछ शब्द भी गढ़े थे जो कुछ दिनों तक खासे प्रचलन में थे। कुछ का राजनीतिक हल्कों में अभी भी इस्तेमाल होता है।

डॉ. लोहिया ने कुछ आन्दोलन चलाए थे जिसमें जाति तोड़ो, अंग्रेजी हटाओ, रामायण मेला लगाओ जैसे आन्दोलन भी शामिल थे। अंग्रेजी हटाओ आन्दोलन उनके और आन्दोलनों की अपेक्षा ज्यादा सशक्त आन्दोलन था। इस आन्दोलन में शामिल लोग अंग्रेजी में लिखे नाम पटों पर अलकतरा पोतते थे। गाड़ियों में नेम प्लेट देवनागरी लिपि में बदलने के लिए बाध्य करते थे। अंग्रेजी में लिख नाम को काला करते थे। यद्यपि लोहिया रोमन अंकों के हटाने के पक्षधर नहीं थे। लोहिया की भाषा नीति पर उनके अनुनायियों ने जो राज्य और केन्द्र में मंत्री, मुख्यमंत्री, सांसद और विधायक बनते रहे इस दिशा में कोई कारगर पहल नहीं की और न कोई संघर्ष ही किया।

इन लोहियावादियों ने अपने राज्यों में अंग्रेजी की पढ़ाई तो जारी रखी लेकिन अंग्रेजी में पास होने की अनिवार्यता को खत्म कर दिया। बिहार में अंग्रेजी उत्तीर्ण हुए बिना मैट्रिक पास विद्यार्थी कूर्परी डिविजन में पास की संज्ञा से विभूषित किए जाते रहे हैं। लोहिया अपने भाषणों में कहा करते थे नेता लोग वोट लेंगे हिन्दी, बंगला और तेलगू के जरिए, शासन चलायेंगे अंग्रेजी के जरिए। इस तरह लोहिया के चिन्तन में भाषा का महत्व रोटी से कम नहीं है।

लोहिया के चिन्तन में स्त्री विमर्श भी एक विषय है। उन्होंने 'पवित्रता और नर-नारी संबंध' नामक अपने आलेख में देश के पतन के मुख्य कारणों में 'जाति' और 'योनि' को माना है। वे लिखते हैं "पश्चिम एशिया में औरत एक सुन्दर खिलौना रही है। तफरीह के क्षणों में कदर और प्रेम, फिर अवस्तु। कई सौ या हजार बरस में हिन्दू नर का दिमाग अपने हित को लेकर गैर-बराबरी के आधार पर बहुत ज्यादा गठित हो चुका है। उस दिमाग को ठोकर मार-मार करके बदलना है। नर-नारी

के बीच में बराबरी कायम करना है। नर-नारी की गैर बराबरी शायद आधार है और सब गैर बराबरियों के लिए या अगर आधार नहीं है तो जितने भी आध तर है बुनियाद की चट्टानें समाज में गैर-बराबरी की और नाइंसाफी की, उनमें यह चट्टान शायद नर-नारी की गैर बराबरी।"

यह तो बात रही नर-नारी की गैरबराबरी की और दूसरी बात ये बतलाते हैं कि यौन पवित्रता की। "हिन्दुस्तान आज विकृत हो गया है; यौन पवित्रता की लम्बी-चौड़ी बातों के बावजूद, आमतौर पर विवाह और यौन संबंध में लोगों के विचार सड़े हुए हैं। सारे संसार में कभी-कभी मर्द ने नारी के संबंध में शुचिता, शुद्धता, पवित्रता के बड़े लम्बे-चौड़े आदर्श बनाये हैं। घूम फिरकर इन आदशों का संबंध शरीर तक सिमट जाता है, और शरीर के भी छोटे से हिस्से पर नारी का पर-पुरुष से स्पर्श न हो। शादी के पहले हरगिज न हो। बाद में अपने पति से हो। एक बार जो पति बने, तो दूसरा किसी हालत में न आये। भले ही ऐसे विचार मर्द के लिए सारे संसार में कभी-न-कभी स्वाभाविक रहे हैं, किन्तु भारत भूमि पर इन विचारों की जो जड़ें और प्रस्फुटन मिले वे अनिर्वचनीय हैं। इसे जकड़ कर रखो, मन से, सूत्र से, समाज संगठन से और अन्ततोगत्वा शरीर की प्रणालियों से कि जल्दी से जल्दी लड़की का विवाह करके औरत को शुच शुद्ध और पवित्र बना कर रखे।"

लोहिया का मानना है कि जो लोग जातियों को रखते हुए बराबरी कायम करने की बात करते हैं, वे या तो धूर्त हैं या मूर्ख हैं। जातियों में बराबरी कायम तभी हो सकती है, जब जातियों का नाश हो और जातियों का नाश तभी हो सकता है, जब दबी हुई जातियों को विशेष और गैर-बराबर अवसर दिया जाए।

लोहिया के अनुसार समतामूलक समाज तभी स्थापित हो सकता है जब जाति और योनि के वीभत्स कटघरे टूटेंगे और यौन पवित्रता की दुहाई देनेवालों के विपरीत यौन संबंधी सड़े हुए विचारों को बदला जायेगा। जो लोग यह सोचते हैं कि आधुनिक अर्थतंत्र के द्वारा गरीबी मिटाने के साथ ही साथ कटघरे अपने आप खत्म हो जाएंगे, वे भ्रम में है, क्योंकि गरीबी और ये दो कटघरे एक-दूसरे के कीटाणुओं पर ही पनपते हैं। जब तक, इन दो कटपरों को खत्म करने का सचेत प्रयत्न नहीं किया जाता, तब तक गरीबी और जाति मिटाने तथा समतामूलक समाज की स्थापना का प्रयत्न छल है, कपट है। इसके लिए योनि और लिंग की शुचिता-अशुचिता तथा जाति की श्रेष्ठता अश्रेष्ठता का अंतर समाप्त करना होगा।

लोहिया ने नर-नारी संबंध और पवित्रता का सवाल आज से 45-50 वर्ष पूर्व उठाया था। तब से आज तक सिर से कितना पानी बह गया है और योनि और जाति का कटघरा तेजी से टूटने लगा है। जाति प्रथा मिट रही है और अन्तर्जातीय, अन्तर्धार्मिक और अन्तर्राष्ट्रीय शादियाँ होने लगी हैं। अक्षत योनि की अवधारणा के मिथक को ज्यादा उम्र में होने वाली शादियों ने तोड़ दिया है।

लोहिया की यह विशेषता है कि वे मिथकीय और पौराणिक पात्रों, ऋषियों, महापुरुषों, देवियों, देवताओं को नये नजरिए से देखने की कोशिश करते हैं और उनकी नयी व्याख्या करते हैं। उनकी दृष्टि में, दुनिया के इतिहास में द्रौपदी अद्वितीय नारी है। सारे संसार के इतिहास में, साहित्य में, वाङ्मय में, किंवदन्ती में, कृष्ण-कृष्णा जैसा सखा संबंध नहीं मिलेगा। इसमें भाई-बहन, प्रेमी, प्रेमिका, बाप-बेटी, माँ-बेटं जितने भी संबंध हैं. सब का समावेश है। वह दिल को, दुनिया को और समाज को बहुत ही एक बनाने वाला संबंध है।'

"दुनिया की कोई औरतः किसी भी देश की, किसी भी काल की ज्ञान, हाजिर जवाबी, समझ, हिम्मत की प्रतीक उतनी नहीं बन पायी जितनी कि द्रौपदी। "भीष्म पितामह की मौत के वक्त का किस्सा द्रौपदी की प्रखरता को या मुखरता को गजब का बताता है। भीष्म पितामह जब मर रहे थे, राजनीति सिखा रहे थे। कौरव-पाण्डव मिलकर सीख रहे थे उनसे। ऐसे मौके पर द्रौपदी हँस पड़ी। अर्जुन को इतना गुस्सा आ गया है कि वह दौड़ पड़ा। कृष्ण ने अर्जुन को रोका। ठहरों, पूछो तो सही, द्रौपदी क्यों हँस रही है? तब द्रौपदी से पूछा। द्रौपदी ने जवाब दिया कि सारे जीवन तो अपनी सीख के खिलाफ ये चलते रहे हैं और अब आखिरी मौके पर चले हैं नीति बधारने। भीष्म का जवाब भी गजब का है। उसने कहा. "ठीक, द्रौपदी को पूरा हक हँसने का है और इसी हँसी पर में एक और सीख देना चाहता हूँ। किसी भी बुद्धिमान आदमी को कभी सत्ता के पद पर नहीं बैठना चाहिए।" निस्संदेह लोहिया द्वारा द्रौपदी की खोज और उसके व्यक्तित्व की व्याख्या भारतीय साहित्य को

उनका मौलिक अवदान है

धर्म पर विचार करते समय या अलग से नदियों, तीर्थों और पर्वतों के बारे में अपनी बात रखते हुए लोहिया कुछ जरूरी और व्यावहारिक बातें कहते हैं। हम अपने दैनन्दिन जीवन में देखते हैं कि पर्व-त्योहार के अवसर पर लाखों लोग नदियों को पवित्र मानकर उसमें स्नान करते हैं। आज ये नदियाँ कितनी प्रदूषित हैं उसका अनुभव हम आये दिन करते हैं। गंगा, कावेरी, यमुना, कृष्णा वगैरह नदियों में कारखानों का गंदा पानी, शहरों का पेशाब-पाखाना, सब बहाया जाता है। तीर्थयात्रा पर जब कोई वृन्दावन जाता है तो अपनी आँखों से देखता है कि वृन्दावन शहर का गंदा नाला बहता हुआ यमुना में गिरता है।" लोग उसमें स्नान करते हैं। नदियों को साफ करने की बात किसी के मुँह से नहीं निकलती। लोहिया इस सवाल को उठाते हैं।

नदियों की सफाई के बाद लोहिया तीर्थों की सफाई की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट करते हैं। वे कहते हैं "मैंने एक सुझाव रखा कि हिन्दुस्तान के जो तीर्थस्थान हैं, जहाँ हिन्दुस्तान की जनता करोड़ों, लाखों की तादाद में हर साल इकट्ठा हुआ करती है, द्वारका, रामेश्वरम्, गया, काशी और इन्हीं के साथ-साथ अजमेर भी जोड़ता हूँ। मुझे इससे विशेष मतलब नहीं कि वे तीर्थस्थान किसी एक विशेष धर्म और सम्प्रदाय के होते हैं। मुझे इससे मतलब है कि वे तीर्थस्थानों को साफ-सुथरा बनाया जाये, जिससे वे लाखों आदमी हर साल देखे कि किस तरह सफाई की जिन्दगी चला सकते हैं। लोहिया इस तरह नदियों और तीर्थस्थानों को सुन्दर, साफ और पवित्र बनाने का आह्वान करते हैं। नदियों और तीथों की सफाई की चर्चा करते-करते लोहिया कैलाश पर्वत पर पहुँच जाते हैं। शिव-पार्वती का स्थान बताने के बहाने वे चीनियों द्वारा इस क्षेत्र की जमीन हड़प की बात करते हुए तिब्बत की आजादी तक पहुँच जाते हैं।" लोहिया राजनीतिक व्यक्ति हैं। पौराणिक और धार्मिक स्थलों की महत्ता का उल्लेख करते हुए वे जहाँ जरूरी समझते हैं राजनीति करने से बाज नहीं आते।

लोहिया अपनी सांस्कृतिक सोच को मूर्त रूप देने के लिए चित्रकूट में रामायण मेला आयोजन करने का सिलसिला शुरू किया था। कहा जाता है कि राम ने अपने वनवास का एक बड़ा भाग यहीं व्यतीत किया था। राम के चरित्र चित्रण तथा मेले के महत्व को उजागर करने के लिए लोहिया ने तुलसीदास के रामचरितमानस का आधार बनाया था। किन्तु उन्होंने शुरू में ही चेतावनी दी कि इस महाकाव्य में निश्चय ही सोना, हीरा, मोती बहुत हैं, लेकिन उसमें कूड़ा-करकट और उच्छिष्ट भी काफी है जिन्हें दरकिनार करना नितांत जरूरी है। लोहिया के ऐसा कहने का अर्थ है कि हमें अपनी विरासत को जाँच-परखकर अपनाना चाहिए न कि पोंगा-पंथियों और सम्प्रदायवादियों की तरह आँखें मैयकर।"

मेला का उद्देश्य भारतवासियों में एक तर्कसंगत दृष्टिकोण पैदा करता था। इसके साथ ही अपेक्षा की जाती थी कि मेला आनन्द का संचार करेगा, सौन्दर्य बोध लाएगा और राष्ट्रीय एकता को मजबूत करेगा। उन्होंने जोर देकर कहा कि मेला का उद्देश्य आस्तिकता या हिन्दू धर्म को बढ़ावा देना कतई नहीं है। कोई भी आदमी, भले ही वह आस्तिक हो या नास्तिक मेले में आकर उसके कार्यक्रमों में भाग लेकर आनन्द लाभ कर सकता है। उनकी योजना राम के व्यक्तित्व और कृतित्व के विभिन्न पहलुओं पर गोष्ठियाँ आयोजित करने की थी। लोहिया के मरने के बाद काशी विद्यापीठ में रामायण मेला कमिटी की ओर से तीन द्विवसीय आयोजन हुआ था जिसका उद्घाटन जगजीवन राम ने किया था। इस आयोजन में धर्म और राजनीति के संबंध विषय पर देश के जाने-माने विद्वानों ने अपने विचार प्रस्तुत किये थे। मेले के उद्देश्य के बारे में कहा गया था कि भारत की आत्मा को जगाना, उसमें असाम्प्रदायिक और समता का आनन्द रस संचार करना है। एक ऐसी दुनिया के लिए प्रयात्न करना है जिसमें स्वतंत्रता, समता और भाईचारे के निर्गुण नारों को ठोस और सगुण रूप दिया जा सके। इस आयोजन के बाद रामायण मेला का आयोजन फिर कहीं नहीं हुआ और कभी नहीं हुआ।"

लोहिया ने राम, कृष्ण और शिव जैसे तीन प्रमुख चरित्रों की नई व्याख्याएँ करने का साहसिक कार्य किया। वे देवता रहे हों या मानव, उनका भारतीय मानस पर वास्तविक ऐतिहासिक हस्तियों से कहीं अधिक प्रभाव पड़ा है। यह प्रभाव इस कारण नहीं रहा है कि उनके साथ धर्म और अनेकानेक कहानियाँ अभिन्न रूप से जुड़ी रही हैं बल्कि वे करोड़ों जनसाधारण के मार्गदर्शक बन गए है। जीवन के हर कदम पर लोग उनके कार्यों से प्रेरणा लेते हैं तथा उनमें आगे की दिशा तलाशते हैं।"

लोहिया जहाँ तहाँ अपने भाषणों में जाति नाश की बात जरूर करते हैं लेकिन जब तक जाति समाप्त नहीं होती वे दलित, पिछड़ी और महिलाओं को विशेष अवसर देने की वकालत करते हैं। यहाँ वशिष्ट को गतिहीन और विश्वामित्र को गतिशील एवं प्रगतिशील बतलाते समय जाति प्रथा को चुनौती नहीं देते बल्कि उसके चौखटे में ही ऊपर की ओर उठ अपनी स्थिति सुधारने के लिए अप्रत्यक्ष रूप से प्रोत्साहित करते हैं। ऐसा लगता है कि बिहार और उत्तर प्रदेश में पिछड़ी जातियों में संस्कृतिकरण का जो आन्दोलन चला था लोहिया पर उसका प्रभाव रहा है।

लोहिया के बारे में कहा जाता है कि उन्होंने लिखा बहुत कम है, उनकी अधिकांश किताबें उनके भाषण हैं। लेकिन उन किताबों की भाषा हू-ब-हू वही है जिसे लोहिया बोलते थे। पता नहीं 'भारत माता धरती माता' में छपे निबन्ध उनके द्वारा लिखे निबंध हैं या वे भी उनके भाषण ही है। लोहिया साहित्यकार नहीं थे, लेकिन साहित्य प्रेमी जरूर थे। उनकी हिन्दी अनौपचारिक और प्रयोगशील थी। संप्रेषण की अद्भूत क्षमता उनमें भी। 'भारत माता धरती माता' पुस्तक में 'कृष्ण' शीर्षक से एक लेख है। इस लेख में वे कृष्ण के बहाने जीवन, धर्म, समाज, राजनीति पर अपना नजरिया रखते हैं। यह निबंध कृष्ण पर है और उसके आगे भी है यानी अतीत ही नहीं आज पर भी है।

'कृष्ण' की सभी चीजें दो हैं, दो माँ, दो नगर, दो प्रेमिकाएँ, यो कहिए अनेक।" पाठक पहली पक्ति पड़ते ही उत्सुकता की चपेट में आ जाता है। 'कृष्ण प्रकरण को कई नई दृष्टि से देखने का आभास भी उसे हो जाता है। कृष्ण के बहाने लोहिया का चिन्तक प्रेम को परिभाषित इस अंदाज में करता हैरू

'मनुष्य को शारीरिक सीमा उसका चमड़ा और नख है। यह शारीरिक सौमा, उसे अपना दोस्त, एक माँ, एक बाप, एक दर्शन वगैरह देती रहती है। किन्तु मनुष्य हमेशा इस सीमा से बाहर उछलने की कोशिश करता रहता है, मन ही के द्वारा उचल सकता है। कृष्ण उसी तत्व और महान प्रेम का नाम है जो मन की प्रदत्त सीमाओं से उलांघता-उलांघता सबमें मिला देता है, किसी से भी अलग नहीं रखता। क्योंकि कृष्ण तो घटनाक्रमों वाली मनुष्य लीला है, केवल सिद्धान्तों और तत्वों का विवेचन नहीं, इसलिए उसकी सभी चीजें अपनी और एक ही सीमा में न रहकर दो और निरापनी हो गई हैं। ये 'निरापनी' क्या है? लोहिया अक्सर नये शब्द गढ़ लिया करते थे। अपनी में निः मिलाइए तो बनेगा निरापनी। इसका अर्थ अपना का उलट पराया नहीं, वस्तुतः निवैयक्तिक जैसे गढ़े शब्द का पर्याय है।

संदर्भ सूची

1. डॉ. राममनोहर लोहिया व्यक्ति और विचार, ले. डॉ. गिरीश मिश्र/ब्रजकुमार पांडेय, पु. 11.
2. संस्कृति संबंधी लोहिया के विचार, डॉ. राममनोहर लोहिया व्यक्ति और विचार, पृ. 152.
3. ऊपरोधृत, पृ. 149.
4. ऊपरोधृत, पृ. 150.
5. हिन्दी, अंग्रेजी और देशी भाषाएँ, भारत माता धरती माता, पृ. 162.
6. ऊपरोद्धृत, पृ. 80.
7. पूर्वोत, पृ. 82.
8. वही, पृ. 87-88.
9. वही, पृ. ४४.
10. धर्म पर कुछ विचार, भारत माता धरती माता, पु. 18-19.
11. वही. पृ. 19.
12. वही, पृ. 20.
13. मर्यादित, उन्मुक्त व्यक्तित्व और रामायण मेला, हैदराबाद पृ. 28-31.

14. डॉ. राममनोहर लोहिया व्यक्ति और विचार, से. डॉ. गिरीश मिश्र/प्रकुमार पांडेय, पृ. 152.
15. मर्यादित, उन्मुक्त व्यक्तित्व और रामायण मेला, हैदराबाद . 28-31.
16. राम, कृष्ण, शिव, डॉ. लोहिया, भारत माता धरती माता. पृ. 78.
17. संस्कृति संबंधी लोहिया के विचार, डॉ. राममनोहर लोहिया व्यक्ति और विचार, पृ. 148.
18. वही, पृ. 148-149.
19. वही. पृ. 149.
20. भारत माता-धरती माता, पृ. 241.
21. निबंध झुलसी हुई रोटी, ले. अरुण प्रकाश, प्रगतिशील वसुधा, पृ. 242.

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

रामायणमञ्जरी में मन्त्रिमण्डल विधान

रोहितकुमार
शोध छात्र,
संस्कृत विभाग, जम्मू विश्वविद्यालय
bharateeyah@gmail.com
Mobile- 8803142790

डॉ. विद्याधर सिंह
निर्देशकः
सह -प्राध्यापक संस्कृत विभाग
जम्मू विश्वविद्यालय
Mobile: 9682563366

प्राचीन भारतीय ग्रन्थों में शासन व्यवस्था, नीति एवं प्रशासन से सम्बन्धित विस्तृत विवेचन प्राप्त होता है। आचार्य क्षेमेन्द्र द्वारा विरचित रामायणमञ्जरी भी एक महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। जिसमें राजा के कर्तव्यों, प्रशासनिक तंत्र एवं मंत्रिमण्डल की भूमिका का उल्लेख मिलता है। किसी भी राज्य की स्थिरता एवं सफलता में मन्त्रिमण्डल की अहम भूमिका होती है, क्योंकि यह राजा के निर्णयों को उचित दिशा, राज्य संचालन में सहायक बनने तथा नीतिगत परामर्श देने का कार्य करता है। एक योग्य मन्त्रिमण्डल न केवल राजा को सशक्त शासन चलाने में सहायता करता है अपितु राज्य की आंतरिक एवं ब्राह्य सुरक्षा, न्याय व्यवस्था तथा जन कल्याणकारी नीतियों को सुव्यवस्थित रूप से लागू करता है। प्रस्तुत शोध पत्र के माध्यम से "रामायणमञ्जरी में वर्णित मन्त्रिमण्डल विधान'' का विस्तृत अध्ययन किया जाएगा।

राजा के राजकार्य संचालन में सहायक, राज्य का अत्यंत महत्वपूर्ण अङ्ग मन्त्रिमण्डल है। इस मन्त्रिमण्डल के स्वरूप, कर्तव्य एवं महत्व पर रामायणमञ्जरी में विस्तृत प्रकाश डाला गया है। राजा दशरथ, जनक, राम, सुग्रीव तथा रावण सभी के मन्त्रिमण्डल का संकेत रामायणमञ्जरी में प्राप्त होता है। मन्त्रिमण्डल के अन्तर्गत पुरोहित, सचिव, मन्त्री, पण्डित, अमात्य तथा दूत का उल्लेख प्राप्त होता है।

मन्त्रिमण्डल का वर्णन करते हुए मंत्रियों का महत्व बताते हुए आचार्य 'कौटिल्य' कहते हैं–

"मन्त्रिणां मन्त्रमूलं हि राज्ञो राष्ट्रं विवर्धते''

अर्थात् मन्त्रियों की मन्त्रणा द्वारा ही राजा के राष्ट्र की वृद्धि होती है। राजा दशरथ का मन्त्रिमण्डल अत्यन्त विद्वान एवं योग्य व्यक्तियों से समृद्ध था, जिसमें वशिष्ठ जैसे परमज्ञानी पुरोहित, सुमन्त्र जैसे नीति निपुण मंत्री तथा सिद्धार्थ, मार्कण्डेय, वामदेव तथा जाबालि सदृश तपस्वी मुनि एवं वेद विज्ञ ब्राह्मण सम्मिलित थे।[1] ये सभी समयानुसार राजा को उचित परामर्श प्रदान करते थे, जिससे राज्य संचालन सुचारू एवं सुदृढ रहता था। किसी भी गूढ़ विषय पर विचार-विमर्श हेतु राजा दशरथ मन्त्रिपरिषद का आयोजन कर, अपनी अवधारणाओं को उनके सम्मुख रखते थे।[2]

मन्त्रियों में सुमन्त्र का स्थान विशिष्ट था। वे राजा परम विश्वसनीय एवं सन्निकट रहने वाले महामात्य थे, जिनका प्रमुख दायित्व राजकीय हितों की रक्षा एवं राजा को उचित सलाह देना था। जब राजा दशरथ पुत्र-प्राप्ति की व्यथा से व्याकुल थे, तब सुमन्त्र ने ही ऋषि ऋष्यश्रृङ्ग को आमन्त्रित कर पुत्रेष्टि यज्ञ सम्पन्न कराने का सुझाव दिया था।[3] रामायण के विविध प्रसंगों में सुमन्त्र की चातुर्यपूर्ण भूमिका की पुष्टि होती है। पुरोहित का स्थान मन्त्रिमण्डल में सर्वोच्च तथा अपरिहार्य था, जिसमें महर्षि वशिष्ठ का महत्वपूर्ण योगदान था। रामायणमञ्जरी में बहुसंख्यक स्थलों पर उनके अप्रतिम ज्ञान, तपस्या एवं प्रभाव की

उल्लेख प्राप्त होता है, जो उनके महत्व को प्रमाणित करता है। एकमेव श्दूतोश की भूमिका भी राजकीय प्रशासन में अत्यन्त महत्वपूर्ण थी। वे संदेश-प्रेषण के कार्य में दक्ष तथा गूढ कूटनीति व गोपनीयता के साथ संवाद संप्रेषण करते थे। जब भरत एवं शत्रुघ्न को ननिहाल से अयोध्या लाने की आवश्यकता हुई, तो ये दूत कैकयपुर पहुंचे और बड़ी कुशलता से कार्य किया–

प्राप्तेषु कैकयपुर दिनैर्भूतेषु सप्तभिः[4]

उन दूतों ने इस प्रकार संवाद स्थापित किया कि अयोध्या की विषादपूर्ण परिस्थितियों का आभास भरत और शत्रुघ्न को नहीं होने दिया।

राम के मन्त्रिमण्डल का भी रामायणमंजरी में विशद वर्णन प्राप्त होता है। यद्यपि इसकी आधारभूत संरचना दशरथ के मन्त्रिपरिषद से सम्बद्ध थी, तथापि राम के शासनकाल में इसकी व्यापकता का संवर्धन हुआ तथा अन्य मुनियों एवं विद्वानों के सम्मिलित होने से इसकी परिधि विस्तृत हो गई। उत्तरकाण्ड के एक स्थूल से उनके मन्त्रिमण्डल की सूचना प्राप्त होती है।

श्रीराम प्रातः काल अपने दैनिक कृत्यों का निर्वहन कर अपने भाइयों के साथ सभा भवन में जाते थे, जहाँ मुनि, मन्त्री एवं राजा उपस्थित रहते हैं।[5] वे समय-समय पर विभिन्न महत्वपूर्ण विषयों पर विचार-विमर्श के लिए मंत्रणा सभा का आयोजन करते थे। जब एक ब्राह्मण पुत्र की अकाल मृत्यु का समाचार प्राप्त हुआ तो श्रीराम दुखी होकर अपने मन्त्रिमण्डल और ऋषियों की सभा में पहुंचे। इस अवसर पर वशिष्ठ, जाबालि, कौत्स, गौतम, नारद, मार्कण्डेय, अत्रि, मौद्गल्य, वामदेव पुरोगमा, भृगु, कात्यायन और काश्यप सहित अनेक मुनिगण वहाँ उपस्थित थे। श्रीराम को व्यथित देखकर सम्पूर्ण मुनि परिषद भी अत्यन्त दुखी हो गई। तत्पश्चात श्रीराम ने सभा में बालक की अकाल मृत्यु के कारण की खोज की, जिस पर नारद ने इसका विस्तृत कारण और समाधान प्रस्तुत किया।[6] एवमेव राम के मन्त्रिमण्डल की उच्चता का स्पष्ट ज्ञान प्रस्तुत प्रसंग में स्वयमेव हो जाता है।

राजा जनक के मन्त्रिमण्डल की संभाव्यता भी प्रत्यक्ष रूप से दृष्टिगोचर होती है। उनके राजपुरोहित शतानन्द थे, जिसका उल्लेख इस श्लोक में प्राप्त होता है–

"प्रत्युद्ययौ पुरस्कृत्य शतानंद पुरोहितम्"[7]

पुरोहित के आधार पर ही अन्य मन्त्रियों के अस्तित्व का अनुमान किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त जनक का यह कथन-

इत्युक्त्वा मन्त्रिणः सर्वानादिदेशमहीपतिः।[8]

यह इंगित करता है कि वे एक सुव्यवस्थित मन्त्रिमण्डल के अधिपति थे। धनुष भंग के उपरान्त, दशरथ को आमन्त्रित करने हेतु का राजा जनक अपने दूतो को अयोध्या भेजने का निर्देश देते हैं–

अयोध्या यान्तु मे दूतास्तूर्ण दशरथं प्रति।[9]

एवमेव पुरोहित, दूत तथा मन्त्रियों के संकेत से जनक के मन्त्रिमण्डल की पूर्ण जानकारी हो जाती है।

राजा दशरथ, राम तथा जनक के मन्त्रिमण्डल साथ-साथ रामायणमंजरी में वानरराज सुग्रीव के मन्त्रिमण्डल का भी उल्लेख प्राप्त होता है। किष्किंधा काण्ड के प्रारंभिक श्लोक में ही हनुमान सहित अन्य प्रमुख सचिवों की उपस्थिति प्रमाणित होती है–

"उवाचहतुमान्मुख्यान्सचिवान्वालिशङ्कितः"[10]

इसके अतिरिक्त सुग्रीव राम से यह भी कहता है कि भाई बालि को दुन्दुभि दानव द्वारा मारा गया समझकर सचिवों ने मुझे राज्य पद पर अभिषिक्त कर दिया।[11] इस प्रसंग से स्पष्ट होता है कि सुग्रीव के मन्त्रिमंडल का वानरराज्य के शासन में महत्वपूर्ण योगदान था। हनुमान, नल, नील, सुषेण, अङ्गद तथा जाम्बवन्त जैसे प्रमुख मन्त्री राज्य संचालन, नीतिगत निर्णयों एवं कूटनीतिक गतिविधियों में सक्रिय भूमिका निभाते थे। लक्ष्मण के क्रोधावेश में किष्किन्धा आगमन पर मन्त्रिपरिषद की चिन्ता उनकी राजनीतिक सतर्कता एवं रणनीतिक चेतना को दर्शाती है।[12] इसके अतिखित सुग्रीव विभिन्न दिशाओं में वानरों

को एकत्रित करने के लिए दूतों को भेजता है, जिससे यह ज्ञात होता है कि वानरराज्य में संदेश प्रणाली भी विकसित थी–

"तूर्णमायान्तु ते दूतैस्त्वद्विसृष्टैर्मदाज्ञया।"[13]

राजा दशरथ, अयोध्या नरेश राम, मिथिला नरेश जनक एवं सुग्रीव के राज्य में ही उच्च कोटि का मन्त्रिमण्डल नहीं था बल्कि राक्षसराज शवण के मन्त्रिमण्डल का भी रामायणमंजरी में विस्तृत वर्णन मिलता है। जब विभीषण माता के आदेशानुसार रावण की सभा में उपस्थित होते हैं, तो वे इसे अत्यन्त विद्वान और प्रभावशाली मन्त्रियों/ महामात्यों से घिरा हुआ पाते हैं–

स प्रविश्य सभासीनं महामात्यैः समावृतम् ॥[14]

एतदतिरिच्य युद्धकाण्ड में अनेक स्थानों पर रावण के मन्त्रिपरिषद का उल्लेख प्राप्त होता है।[15] रावण के मन्त्रिमण्डल में प्रहस्त, वज्रदंष्ट्र, महापार्श्व माल्यवान एवं त्रिशिरा जैसे विद्वान एवं रणनीतिक दृष्टिकोण रखने वाले मन्त्री शामिल थे, जो समय-समय पर उसे उचित परामर्श प्रदान करते थे। विशेष रूप से सुपार्श्व, माल्यवान और वज्रदष्ट्र का मन्त्रिपरिषद में सर्वोच्च स्थान था। इसके अतिरिक्त रावण के मन्त्रिमण्डल में शुक और सारण जैसे दूतों की भी महत्वपूर्ण भूमिका रही जो कूटनीतिक संदेशों का आदान-प्रदान करते थे।[16]

एवमेव राम, जनक, सुग्रीव तथा रावण सभी के शासन में मन्त्री परिषद का उल्लेखनीय अस्तित्व था, जो न केवल प्रशासनिक निर्णयों में सहायक थे, बल्कि युद्धनीति, कूटनीति एवं सामाजिक संगठन में भी योगदान देते थे। रामायणमंजरी में इन मन्त्रियों की भूमिका, उनके कर्तव्यों एवं उनके प्रभाव का विस्तृत विश्लेषण प्राप्त होता है, जो प्राचीन भारतीय शासन प्रणाली की गहराई को दर्शाता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1) रामायणमंजरी बालकाण्ड - श्लोक संख्या 42-45, 515,891,986
2) रामायणमंजरी बालकाण्ड - श्लोक 646
3) रामायणमञ्जरी बालकाण्ड - श्लोक 45-62
4) रामायणमञ्जरी अरण्यपर्व - श्लोक-1
5) रामायणमंजरी उत्तरकाण्ड - श्लोक 897
6) रामायणमंजरी उत्तरकाण्ड - श्लोक 1010-1015
7) रामायणमंजरी बालकाण्ड - श्लोक 318
8) रामायणमंजरी बालकाण्ड - श्लोक 497
9) रामायणमंजरी बालकाण्ड - श्लोक 512.
10) रामायणमञ्जरी किष्किन्धापर्व - श्लोक 1
11) रामायणमञ्जरी किष्किन्धापर्व - श्लोक 21
12) रामायणमञ्जरी किष्किन्धाकाण्ड - श्लोक 95
13) रामायणमञ्जरी किष्किन्धा काण्ड - श्लोक 169
14) रामायणमंजरी युद्धकाण्ड - श्लोक 20
15) रामायणमंजरी युद्धकाण्ड - श्लोक 45, 280 आदि
16) रामायणमंजरी युद्धकाण्ड - श्लोक 296

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Challenges and Opportunities of Implementing Feminist Foreign Policy in South Asia's Male-Dominated Political Landscapes

Mr. Sagar Gopal Rathod
(Assistant Professor) School of Social Science,
Punyashlok Ahilyadevi Holkar Solapur University,
Solapur (Maharashtra) Contact no: 7276719371

Dr. Shriniwas Sayanna Bhandare
(Assistant professor)
Department of Political Science,
School of Social Science,
Punyashlok Ahilyadevi Holkar Solapur University,
Solapur (Maharashtra)
Mail:sagarrathod2221@gmail.com

Abstract:

There are various types of problems in the world, some of which are important and especially casteism, religion, regionalism, linguistics, but there is not much discussion about feminism. Basically, it is known as an ideology that demands the basic rights of women. But due to various reasons, this ideology is seen in controversy. Like climate change, war, terrorism, gender inequality is the biggest issue in the world. When we think about South Asia, we need to know the history of this region. This region seems to be almost culturally similar. Over time, women here seem to have been kept away from economic, social, political, educational and modern development. But in the twenty-first century, some positive changes are seen in which women are seen making remarkable progress in society, politics and various other fields. But in this South Asia, the male ideology that has been prevalent since long times has stood as a challenge in the development of women. Women can come out of the house and bring about positive changes in various fields and can lead the country and take it forward. They need to be given the opportunity to lead not only in the country but also abroad. That is why this topic has been taken up for study in which it is important to emerge a feminist foreign policy in South Asia so that women can participate in nurturing international relations. Some countries in South Asia have taken important steps but in some countries like Afghanistan and Pakistan, positive changes are still not seen in the case of women. But India, Nepal, Bhutan, Sri Lanka and Bangladesh have also recently been striving for the all-inclusive development of women. Women should also be involved in determining the international relations of South Asia and the policies and rules they have decided should be implemented through this foreign policy so that peace and development in these regions can be accelerated. This topic has been taken up for study.

Keyword: Feminist Foreign Policy, South Asia, Male-Dominated Political Landscapes, SAARC

Introduction:

When we look at the history of the nations of South Asia, we know that almost all the nationalities came out of the British colony and after that they created an independent system of government. In some nations, democracy came into being and in some monarchies, but with time, democracy prevailed in all the nations.

After the end of the Cold War i.e., after 1990, the economic as well as political landscape of South Asia has seen a major change. But at the social level i.e., different religions, castes, gender differences to some extent apartheid and caste discrimination still seems to be going on. Basically, South Asia includes India, Pakistan Bangladesh, Nepal, Bhutan, Sri Lanka and Maldives. When we study about the security and empowerment of women in this region, we find that the situation and condition of women in this region is very bad and unfavourable. Due to the patriarchal social structure of South Asia (Manchanda, 2020), women's political leadership is perceived to be less, even though India has a large population, it is a serious and thought-provoking situation that India has less representation of women than other nations in South Asia.

Kamala Bhasin (Karmakar, 2022), is a feminist writer referred to as a first wave feminist in South Asia, she has also worked on women's education as well as equality and women's human rights and has spoken about the importance of building women's leadership. Bapsi Sidhwa from Pakistan has written about gender, culture and partition of India through novels. In that too, she said that women leadership is the need of South Asia (Khan et al., 2019).

Taslima Nasreen of Bangladesh has openly commented and criticized religious extremism as well as the patriarchal system (Jia, 2003). Her book "Lajja" has shown a mirror about the social condition of women. Jhumpa Lahiri (Lau, 2002), has also worked on identity and migration in which she has discussed women in detail. "We Should All Be Feminists" by Nigerian feminist Chimamanda Ngozi Adichie is an equally poignant and applicable view for South Asia. Malathi de Alwis is a feminist anthropologist who has written extensively on violence, gender and nationalism in Sri Lanka, which helps to understand the situation of women in South Asia.

When we discuss about feminism, Social norms are important (Achilleos-Sarll, 2018), it is necessary to look at feminism from a theoretical point of view because there are different concepts and theories of feminism around the world. Forms of feminism need to be discussed in relation to various concepts and theories as enlightenment is created through counter-argument and dialogue. Liberal feminism's focus seems to be primarily on legal equality, which leads to gender reform policies and international laws regarding women. Whereas radical feminism emphasizes on the complete elimination of the patriarchal system in the society.

Economic inequality around the world Socialist and material feminism emphasizes how to increase economic equality for women (Sharda, 2024), and this is important for South Asia as well. Black feminism works to create awareness in the society about the discrimination of women and encourages various activities related to it, postcolonial and intersectional feminism mainly emphasizes how marginalized groups can develop themselves and what necessary policies can be made in this regard. This includes disabled women, Dalit women and ethnic minorities.

In the 21st century carbon is increasing and it is seen as a major crisis for humanity as a whole but when we think of Ecofeminism it is important to understand that it aims to save the environment

from degradation and discuss the impact of environmental degradation on women and carry forward an ecology centric approach. This is Here we find the kind of opinion that men are destroying the forest wealth and environment and it is necessary to stop it. In modern times, through postmodern and transfeminism, gender inclusiveness is emphasized and gender identity is given special importance here. Also, Anarcha-feminism is currently in discussion. Global feminism can inspire various women's movements and women's representation around the world, and the need for such a global organization of women's leadership to work (Guerrina, 2024), at the local level and demand equal opportunities and justice for women is equally important in South Asia.

Intersectionality is needed to promote women's leadership in the South Asian region so that women can achieve equal leadership. Post-colonial feminism is an important factor in South Asia, because while implementing regional or international development policies, it is necessary to look at how to increase women's empowerment and women's movement and participation at the local level according to different countries of South Asia, rather than just considering Western values.

Women's political leadership in India developed largely due to Indira Gandhi, the Prime Minister of India and known for her strong political leadership. Indira Gandhi's strategic decisions on how to deal with neighbouring countries in times of war and peace are worth studying in foreign policy. Sushma Swaraj was India's Minister of External Affairs; she toured various countries which further enriched India's foreign policy. She emphasized the use of modern technology to build trust among people. She was always active on Twitter and worked diligently to find solutions to various problems faced by Indians across the world. Sheikh Hasina, the Prime Minister of Bangladesh, managed the relations of powerful nations like India

and China very well. She was very alert about regional development, economic development and climate change. Her support for the Rohingya refugees in Myanmar has led to positive discussions of her leadership around the world, her decision-making ability is considered very mature.

Hina Rabbani Khar was the first woman foreign minister of Pakistan. She opined that there is a need for coordination and cooperation between India and Pakistan rather than escalation of conflict. She also emphasized more on diplomacy. And she led Pakistan on the international stage. The need for a feminist foreign policy is widely felt in South Asia. It calls for a feminist foreign policy in South Asia to promote women's leadership, promote gender equality, empower women economically, reduce gender-based violence (Mandal, 2024), support women's human rights, combat women's trafficking and exploitation. There is a need to increase women's leadership in regional organizations such as SAARC and BIMSTEC.

Countries like Canada and Sweden have been successful in implementing feminist foreign policies. South Asia also needs such a foreign policy. According to the United Nations' Women, Peace, and Security (WPS) agenda, increasing women's leadership in foreign policy and considering women as a unit in policy making and decision making is the need of the hour. South Asian countries should use Track Two Diploma to emphasize a feminist foreign policy. And for this initiative, various think tanks, international organizations, local NGOs, as well as civil society and intellectuals of different countries must be brought together to create awareness about feminist foreign policy (Aran et al., 2025). And the South Asian nations should think about how to implement the recommendations given by all of them in a proper manner.

Why do we need feminist foreign policy? Women make up half the world's population but they

represent rarely where decisions are made about their lives for example in politics and management boards feminist foreign policy means protections human rights as called promoting meaning participation of women in decision making process. Women all over the world must be able to claim their universal rights and safeguard from violence. They must the part of political decisions. There must bee sufficient resources to achieve these goals. The rights of women and girls remain uncertain and the result is they tale discrimination (Lee & Chang, 2022), in financial and legal terms such as, unequal access to property land inheritances, women often fall victims to sexual violence so women need to be involved more in conflict resolution.

Conclusion:

The aim of feminist foreign policy (FFP) is creating a more just world it is a possible way of different world order. Feminists are fighting for equal rights around the world a feminist foreign policy is an important statement that the government do not accept the continued violations of women rights and will not rest until gender equality is achieved. The countries which adopted (FFP) are emerging with the three "R"s Rights Resources and representation. These are the care concepts of the feminist foreign policy. The human rights of entire mankind must be the heart by FFP which includes the principles of non-discrimination, equality and inclusion. The representation approach is essential to put a woman centric because they deserve a seat at every table where decisions are made about their lives and societies.

FFP is an opportunity to stand up for some of the most marginalized. This policy gives a signal that a government is on their side, ready to stand up for the them in the fight for equality peace and human rights. This policy's resistance to the anti-gender and anti-feminist movements which are rising in many places in the world. It stands against the forces such as anti-gender movement, authorization government, patrial religious structures, community leaders and nationalists. Feminist foreign policy provides a framework for finally funding women's organisation properly it also includes a system change approach to transforming the financing structure to strengthen local, grassroot as well as national and regional women's rights organisations.

References:

Achilleos-Sarll, C. (2018). Reconceptualising Foreign Policy as Gendered, Sexualised and Racialised: Towards a Postcolonial Feminist Foreign Policy (Analysis). *Journal of International Women's Studies*, *19*(1), 34–49. https://vc.bridgew.edu/cgi/viewcontent.cgi?article=1995&context=jiws

Aran, A., Brummer, K., & Smith, K. E. (2025). Analysing feminist foreign policy: towards the next agenda. *International Affairs*, *101*(1), 273–290. https://doi.org/10.1093/ia/iiae277

Guerrina, R. (2024). 6. Gender and foreign policy. In *Oxford University Press eBooks* (pp. 111–127). https://doi.org/10.1093/hepl/9780192863072.003.0006

Jia, L. L. E. (2003). Equating womanhood with victimhood: the positionality of women protagonists in the contemporary writings of South Asian women. *Women S Studies International Forum*, *26*(4), 369–378. https://doi.org/10.1016/s0277-5395(03)00081-5

Karmakar, I. (2022). Maternal fictions. https://doi.org/10.4324/9781003214175

Khan, T., Ahmad, N., & Khan, W. A. (2019, July 12). *A FEMINIST ANALYSIS OF BAPSI SIDHWA'S ICE CANDY MAN: AN UNBOUND PRACTISE OF LINGUISTIC DEPOSITION OF FEMININE FRAME*. https://

pjsel.jehanf.com/index.php/journal/article/view/137

Lau, L. (2002). Women's voices/ : the presentation of women in the contemporary fiction of south Asian women. http://etheses.dur.ac.uk/2021/

Lee, H., & Chang, H. (2022). Feminist foreign policy analysis: Sweden and Canada cases. *Journal of Social Science*, *61*(1), 163–191. https://doi.org/10.22418/jss.2022.4.61.1.163

Manchanda, R. (2020). Difficult Encounters with the WPS Agenda in South Asia: Re-scripting Globalized Norms and Policy Frameworks for a Feminist Peace. In *Policy Press eBooks* (pp. 61–82). https://doi.org/10.1332/policypress/9781529207743.003.0004

Mandal, M. (2024). Climate Change Exacerbated Sexual and Gender-Based Violence: Role of the Feminist Foreign Policy. *Environmental Policy and Law*, *53*(5–6), 401–413. https://doi.org/10.3233/epl-239018

Sharda, D. (2024). Resolving gender inequality - Feminist Foreign Policy. *RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary*, *9*(11), 120–124. https://doi.org/10.31305/rrijm.2024.v09.n11.018

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

From Classroom to Command: How On-Job Training Transforms Future Administrators and political Leadership

Mr. Sagar Gopal Rathod
(Assistant Professor)
Department of Public Administration, School of Social Science,
Punyashlok Ahilyadevi Holkar Solapur University, Solapur
Contact no: 7276719371
Mail: sagarrathod2221@gmail.com

Abstract:

According to the new education policy in India, various things and concepts that are considered necessary over time have been included in the syllabus. One of them is On-the-Job Training. This aims to bridge the gap between practical experience and theoretical knowledge and it is an effective tool for this. Important skills such as administrative decision-making, public management, good governance and policy analysis are developed through experiential learning. Therefore, OJT is becoming a very important tool. Students work directly in various places like government offices, NGOs, and understand the administrative duties and responsibilities of public and organizational organizations. According to NEP 2020, emphasis has been placed on skill and employment-based education. It has been decided to make internships and training mandatory. Therefore, including OJT in the curriculum is not only an educational necessity but also a necessity in terms of global competitiveness. It can be seen as a bridge between the education system and jobs. Through such an approach to education, students are equipped to make effective contributions to public sector innovation, public participation, and strengthening democracy. Therefore, this topic has been taken up for research.

Keywords: On-Job Training, PAHSUS, Experimental Learning, Political Science, Public Administration, NEP-Syllabus.

Introduction:

If you go to a driving workshop, you will be introduced to the concepts of how a car works, what the roads are like and how to drive on those roads, but you can't experience it sitting in the classroom. You cannot understand what will happen while driving on the road by sitting in a classroom or reading some books.

On job training is an arrangement where you get to see your core theory put into practice (Wangchuk, 2023). If you start motor driving practice, you will see how crowded the road is, who what kind of

challenges are there on the road, apart from the vehicles on the road we also see human beings and animals many times. So in such a situation how can we drive on that road or what should be the speed of that vehicle, also when we have to increase the speed of the vehicle and how to pass the different signals and speed breakers we understand while driving the vehicle itself. On the job training is an essential concept for students as they understand the advantages and challenges of doing the thing themselves very well, through which the things they are learning in the classroom as part of the syllabus and the things they need to learn in the future after completion of their education. The concept of on-the-job training is implemented by combining the two. The purpose of this concept is that students can read books, write, study and even pass exams while sitting in the classroom, but what will be the situation when the student goes on his own in the particular area of study? As it is necessary for the students to understand this, on job training is being implemented. And this initiative seems to be getting a lot of encouragement from various universities and colleges.

India is currently undergoing a new education policy implementation on a large scale. And within that the concept of on job training is also very important. There is so much to learn not only in the classroom but also outside the classroom. Also, when the students go out after completing their degree, it is important to make them aware of the future challenges and various job opportunities. Dr. Srinivasa Bhandare, Assistant Professor of Political Science, School of Social Science from Punyashlok AhilyaDevi Holkar Solapur University, Dr. Srinivasa Bhandare Sir in an interview regarding why on job training is necessary said that last year he visited various places in Solapur for on job training of first year students and signed MoU with the necessary government organization. With the support and guidance of Dr. Gautam Kamble, Director, School of Social Science, the MoU was done, so he benefited by visiting various parts of Zilla Parishad, Panchayat Samiti and Gram Panchayat with students for on-the-job training, especially Political Science and Public Administration students. How does democracy work, how does the government implement various schemes at the taluka and district level, how does it do financial planning and how does it implement various development schemes? And what are the duties and responsibilities of various government employees and officers? In this regard, sir went to the place and informed the students about the actual situation. This helped the students to understand how the governance system works on the ground. And the students gave a spontaneous response to this activity, not only that, after the completion of the on job training activity, the students also made a report about it and submitted it to the university. It was a very exciting activity for Dr. Bhandare sir as well as for the students through which he went to the important places which the Political Science students took in class while studying the subject and after showing them to the students, their knowledge was further enhanced and the students learned more about how the Panchayat Rajya which is the foundation of democracy works and A direct and extensive information was received.

Conducting OJT activities (not only in the classroom) outside the classroom gives the students an opportunity to experience (Oteyza et al., 2023), and work with the real world and in the 21st century digitization has become very prevalent and it is also the need of the hour so even if the students cannot go outside the country, some provisions should be included in the OJT so that They can do virtual internships with organizations like UNDP, World Bank and WHO and understand how those organizations plan, deliver services and implement policies. Digital OJT can also be a part of physical OJT, so it is necessary to give information to students through actual presentation using computer lab.

It is necessary to use the latest technology in public administration. AI technology should be used to help in how Aadhaar-linked services work at the rural level and help innovate. Also, how the National Health Mission can collect health data so that the lack of health facilities in rural areas can be overcome through technology, various government organizations and online applications or software can be used. All these things must be properly understood by the students in on job training so that in future they will not face any difficulties in working in such different fields.

The Government of India has implemented the Smart City Scheme for the development of cities and districts. Under this, the government tries at the district level to determine how the cities should be planned and the development clock. It is important to understand how it is implemented with the help of the Nagpur Smart City Project in Maharashtra and then Public Safety and Traffic Management System. The Mumbai Coastal Road Project should be presented to the students as an example of how transportation can be carried forward in an overpopulated area. Also, even the Solapur Smart City project, through OJT, students can get information about such a sophisticated project.

How the government implements different policies while implementing welfare schemes. And through OJT students need to understand how this implementation system and planning works. It is also necessary for students to understand how the government solves various social problems along with CSR. Just as Mahindra conducts skill development activities through CSR to provide job opportunities to youth in rural areas, Reliance Foundation CSR provides digital learning platform and necessary infrastructure to increase literacy in rural areas. Efforts are made to provide health facilities in rural areas through Tata Trust. Students can understand information about many such activities through OJT.

In the 21st century, sustainability and climate change seem to be two important issues being discussed. OJT students need to be made aware of the innovative initiatives being implemented by various states and how they can further the conservation and protection of the environment. It includes Narmada River Conservation as well as the Solar Village Program in Tamil Nadu or Gujarat, or the Forest Restoration Program in Uttarakhand under which campaigns to protect forest resources and wildlife are undertaken, with many NGOs, civil societies and major universities also joining the initiative. Students should also be involved in this so as to create awareness among the students about environment protection.

Students of public administration need to be informed about various initiatives of the government to understand how various service schemes policies of the government of India reach the common people and how it makes it easier for the government to reach the last person living in the rural areas. And feedback is also sought on government policies through two way communication. Students should know how the Mumbai Police Twitter account works 24 hours a day in a well-equipped and efficient manner for the common citizens while telling the students about the various channels that connect the government and the citizens of Maharashtra. Or students can get more information through OJT about the scheme implemented by Delhi government like Audi One Day to reduce pollution.

Some of the state governments in India seem to have used various powerful technologies of the 21st century in the governance system. Some states have created land records using blockchain technology to reduce property disputes. Some states have used blockchain technology to increase transparency in the agricultural supply chain. Blockchain technology can benefit the voting system and transparency

in India's election process. What is this technology? Through OJT, it is important for students to understand how government works and how this technology can be used in policy and planning.

Through OJT, students can understand how village development can be done by creating innovation labs at rural level. It has various initiatives implemented by various IIT institutions in India such as water purification in rural areas and how renewable energy can be produced. Through OJT, students will be able to better understand how to increase agricultural productivity by getting information about rainfall, early warning of heat-storms, when sea levels will rise in coastal constituent states, and how disaster management can work before cyclones and tsunamis.

Through OJT, students can understand how industry and public private partnership work. Through Pradhan Mantri Kaushal Vikas Yojana (PMKVY) various skill development activities are implemented to provide employment opportunities and AMUL Cooperative Model provides information to students through OJT on how milk production is managed and distributed by both private organizations and local farmers. will come Through The Government e-Marketplace (GeM) an online sales market is provided to small and medium enterprises. This can benefit the general seller as well as the young entrepreneurs in the rural areas. Information about this activity can also be given to students through OJT.

Students of Public Administration can be given information about E-Governance and Digital Transformation Projects run by Central as well as State Government and other methods through OJT as a need of today. It is necessary to explain to the students how digital services work through OJT in relation to DigiLocker Initiative, BHIM App and Aadhaar Enabled Payment Systems (AEPS) and put those different initiatives in front of the actual students. Through OJT, students of Public Administration and Political Science can be taken to various places where they can be taken and wherever such activities relevant to various government policies are carried out and they can get actual knowledge and experience about the activities so that They will be able to benefit from this experience while going into such fields in future.

Conclusion:

The state is formed from the thought of Rajdharma and public welfare. The primary objective of the nation is to implement the welfare scheme in every nook and cranny of the country, down to the last element at the grass root level and implement it in a disciplined manner. India is a democratic system created in a representative manner by the people, for the people, by the people. On-Job Training (OJT) is the bridge that connects theoretical knowledge to real world and administrative challenges. OJT is important for political science and public administration students to develop their skills and an in-depth knowledge of policy implementation and what leadership should look like, as well as modern governance and its complexities.

OJT is especially important for students studying political science and public administration because the structure and functioning of the political system, government policy and implementation planning and financial structure, etc. Students are helped to get essential information through this activity regarding various cooperative organizations as well as NGOs and civil society working with the government. We live in an era where having practical skills and having academic knowledge is very important. Through the OJT activities, the opportunities in the future administrative and political system and the important art, qualities and characteristics needed in the students after entering that

system is OJT, so all the educational institutions should give priority to the actual OJT activities. Since global employment opportunities have become available after globalization, it is the need of the hour to implement this activity through educational institutions keeping in mind the requirements of the modern world.

Reference and Bibliography:

1) Anunciacion Bernardo & Alvin Landicho & Jake M. Laguador, 2014. "On-the-Job Training Performance of Students from AB Paralegal Studies for SY 2013-2014," Studies in Social Sciences and Humanities, Research Academy of Social Sciences, vol. 1(4), pages 122-129.
2) Bentor, C. T. S., Sabonsolin, J. C. M., & Niez, R. A. (2022). Industry Partners' Feedback on Students' On-The-Job Training: Basis for Curriculum Enhancement and Intervention. International Journal of Multidisciplinary: Applied Business and Education Research, 3(12), 2491-2497. https://doi.org/10.11594/ijmaber.03.12.02
3) Nguyen, Chi & Thach, Vi. (2022). Students' Authentic Experiences of On-the-job Training Programs. 11. 7-23. 10.22521/unibulletin.2022.111.1.
4) Reyes, V. (2019). Assessing the status of on-the-job training program of Bachelor of Technical Teacher Education. SSRN. https://ssrn.com/abstract=3480954 or http://dx.doi.org/10.2139/ssrn.3480954
5) Ronnie B. Santelices (2024); PERFORMANCE IN ON-THE-JOB TRAINING (OJT) OF COMPUTER ENGINEERING STUDENTS FROM HOST TRAINING ESTABLISHMENTS (HTES), SUMMER 2022 Int. J. of Adv. Res. (Jan). 515-521] (ISSN 2320-5407). www.journalijar.com
6) Salsabila, A., Duc, T. H., & Somphaiphithak, S. (2024). Implementation of the On-the-Job Training Learning Program for Students Majoring in Hospitality Accommodation. Indonesian Journal of Education Research (IJoER), 5(2), 57-62. https://doi.org/10.37251/ijoer.v5i2.930
7) Santelices, R. (2024). Performance in on-the-job training (OJT) of computer engineering students from host training establishments (HTEs), summer 2022. SSRN. https://ssrn.com/abstract=4887749 or http://dx.doi.org/10.2139/ssrn.4887749
8) Suetos, E. R. (2023). ON-THE-JOB TRAINING PROGRAM EFFECTIVENESS AND PERFORMANCE OF BSIT STUDENTS OF CSU GONZAGA. Proceedings of the International Conference on Education, 9(2), 17–29. https://doi.org/10.17501/24246700.2023.9203
9) Wangchuk, Pema. (2023). EXAMINING THE INFLUENCE OF ON-JOB TRAINING (OJT) ON STUDENT LEARNING: A STUDY FOCUSING ON THE 6TH COHORT OF THE DIPLOMA IN MATERIALS AND PROCUREMENT MANAGEMENT PROGRAM AT JIGME NAMGYEL ENGINEERING COLLEGE IN DEWATHANG. Journal of Applied Engineering, Technology and Management. 3. 23-31. 10.54417/jaetm.v3i1.100.
10) Oteyza, S., Abalos, M., Tagnong, M. J., & Depayso, E. (2023). On The Job Training Program Of The Bachelor Of Science In Hotel And Restaurant Management Of Nueva Vizcaya State University Bambang Campus: An Assessment. *Studies in Technology and Education*, *1*(2), 97–103. https://doi.org/10.55687/ste.v2i1.32
11) Loc, T. B., Ngan, N. T. T., Linh, L., & Nguyen, L. T. (2025). On-The-Job Training: Enhance Experience and Increase Success for the Student Community in Vietnam. *SAGE Open*, *15*(1). https://doi.org/10.1177/21582440241311160

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

॥ सतिगुर प्रसादि ॥

कामागाटा मारू : सिखों के संघर्ष की अद्‌भुत-अनोखी दास्तान

डॉ. रणजीत सिंह अरोरा 'अर्श'
सदनिका क्रमांक 5, अवन्तिका रेजीडेंसी,
58/59, सोमवार पेठ, नागेश्वर मंदिर रोड,
पुणे -411011 (महाराष्ट्र)
मो. 9096222223, 9371010244
ईमेल : arshpune18@gmail.com

सवैया ॥

देह सिवा बरु मोहि इहै सुभ करमन ते कबहूं न टरो॥
न डरो अरि सो जब जाइ लरो निसचौ करि अपुनी जीत करो॥
अरु सिख हौ आपने ही मन को इह लालच हउ गन तउ उचरो॥
न डरो अरि सो जब जाइ लरो निसचौ करि अपुनी जीत करो॥
अरु सिख हौ आपने ही मन को इह लालच हउ गुन तउ उचरो॥
जब आव की अउध निदान बनै अति ही रन मै तब जूझ मरो॥

(चंडी चरित्र)

भूमिका

मानव का स्वभाव सदा से ही अपने जीवन को सुख-संपन्न बनाने की ओर उन्मुख रहा है। वह उत्तम साधनों, समृद्ध स्थानों और सुगम अवसरों की ओर आकृष्ट होकर, स्वयं के लिए और अपने परिवार के लिए बेहतर जीवन की तलाश करता रहा है। इसी प्रवृत्ति के अंतर्गत, स्वभावतः साहसी, श्रमशील और घुमक्कड़ प्रवृत्ति के पंजाबी; विशेषतः सिख समुदाय ने विश्व के कोने-कोने में प्रवास कर अपनी असाधारण मेहनत, लगन और कर्मनिष्ठा से सम्मानित स्थान अर्जित किया है।

बीसवीं सदी के आरंभिक वर्षों में ही पंजाबी समुदाय ने कनाडा जैसे विकसित देश में निवास करना प्रारंभ कर दिया था। इसका एक प्रमुख कारण यह था कि उस समय कई पंजाबी युवक ब्रिटिश सेना में सेवा करते थे और विभिन्न उपनिवेशों में नियुक्त होकर कनाडा जैसे देशों की जीवन-शैली, मौसम तथा सुख-सुविधाओं से परिचित हो जाते थे। जब वे सैनिक छुट्टी में पंजाब लौटते, तो वे अपने अनुभवों से ऐसा चित्र प्रस्तुत करते कि हर पंजाबी के मन में कनाडा जाकर बसने की उत्कंठा जाग्रत हो जाती थी।

ब्रिटिश साम्राज्य और प्रवास की राजनीतिक विडंबना

उस समय भारत और कनाडा दोनों ही ब्रिटिश साम्राज्य के अधीन थे। यह अपेक्षा स्वाभाविक थी कि एक उपनिवेश का नागरिक, दूसरे उपनिवेश में जाकर स्वतंत्रतापूर्वक बस सकेगा। जनता में यह धारणा दृढ़ थी कि चूंकि दोनों देशों में अंग्रेजी

हुकूमत है, अतः किसी प्रकार की बाधा नहीं होनी चाहिए। साथ ही, कनाडा की जनसंख्या अपेक्षाकृत कम थी और उद्योग-धंधों में काम के अवसर अधिक। किन्तु जब प्रवासी भारतीयों, विशेषतः सिखों की संख्या बढ़ने लगी, तब कनाडा में श्वेत वर्चस्ववादी भावना का उभार होने लगा। वहाँ के गोरे नागरिक यह स्वीकार करने को तैयार नहीं थे कि एशियाई, विशेषतः भारतीय मूल के लोग, वहाँ सम्मान पूर्वक रह सकें। अतः कनाडाई प्रशासन ने एक के बाद एक कठोर और भेदभावपूर्ण प्रवासन नियम लागू करने आरंभ कर दिए, जिनका उद्देश्य भारतीयों के प्रवेश को सीमित करना था।

नस्लभेद और वैधानिक अवरोध

कनाडा सरकार ने भारतीयों के विरुद्ध ऐसे कठोर अप्रवासन कानून बनाए, जिनका स्पष्ट उद्देश्य केवल श्वेत नागरिकों को ही देश में बसने देना था। इन कानूनों का भारतीय समाज ने तीव्र विरोध किया। कई कानूनी लड़ाइयाँ लड़ी गईं। यह भी ध्यान देने योग्य है कि ऐसी पाबंदियाँ केवल भारतीयों पर थीं, जापानी, चीनी और अन्य एशियाई जातियों पर उतनी कठोरता नहीं दिखाई गई।

यह स्पष्ट नस्लभेद था, जो भारतीयों की गरिमा और अधिकारों का घोर उल्लंघन था। इस पृष्ठभूमि में कामागाटा मारू की घटना घटित हुई, जिसने न केवल उस समय के साम्राज्यवादी ढांचे को चुनौती दी, बल्कि भारत के स्वतंत्रता संग्राम की नींव को और भी गहरा कर दिया।

कामागाटा मारू एक भाप से संचालित मालवाहक जहाज़ था, जिसका स्वामित्व जापान की प्रतिष्ठित शिपिंग कंपनी Shinyei Kisen Goshi Kaisya के पास था। इसका निर्माण वर्ष 1890 ईस्वी. में हुआ था। यह जहाज़ अपनी ऐतिहासिक यात्रा के दौरान हांगकांग से प्रस्थान कर, शंघाई (चीन), योकोहामा (जापान) होते हुए ब्रिटिश कोलंबिया (कनाडा) के वैंकूवर बंदरगाह तक पहुँचा था। उस कालखंड में हवाई यात्राएं प्रचलन में नहीं थीं; अतः समुद्री मार्ग ही प्रवास का एकमात्र साधन था।

इस ऐतिहासिक यात्रा में कुल 376 यात्री सवार थे, इनमें 340 सिख, 24 मुस्लिम एवं 12 हिंदू थे। ये सभी यात्री ब्रिटिश भारत के नागरिक थे, जिन्होंने अत्यंत कठिनाइयों का सामना करते हुए विदेश में अपनी नई ज़िंदगी आरंभ करने का स्वप्न संजोया था। परंतु दुर्भाग्यवश कनाडा सरकार ने इनमें से केवल 24 यात्रियों को देश में प्रवेश की अनुमति दी, शेष 352 यात्रियों को वापस भारत लौटने को बाध्य कर दिया गया।

उल्लेखनीय है कि उस समय संपूर्ण उत्तर अमेरिका में लगभग 2,000 भारतीय प्रवासी निवास करते थे। लेकिन गोरे नागरिकों की श्वेत श्रेष्ठता की भावना इस हद तक व्याप्त थी कि वे किसी भी एशियाई मूल के व्यक्ति को अपने देश में बसने देना नहीं चाहते थे। यही कारण रहा कि उन्होंने अप्रवासन (Immigration) कानून को जानबूझकर इतना जटिल बना दिया कि कोई भी भारतीय उन शर्तों को पूरा न कर सके।

इन कानूनों में से एक अत्यंत कठोर और कुख्यात कानून The Continuous Passage Act था, जिसके अंतर्गत यह आवश्यक था कि कोई भी भारतीय तभी ब्रिटिश कोलंबिया में प्रवेश कर सकता है जब वह बिना रुके सीधे वहाँ पहुँचे। किन्तु भारत से उस समय किसी भी जहाज़ की नॉन-स्टॉप डायरेक्ट टिकट उपलब्ध नहीं थी। इसके अतिरिक्त, यह शर्त भी रखी गई थी कि प्रत्येक भारतीय प्रवासी के पास कम-से-कम $ 200 कैश होना अनिवार्य था जबकि उस समय एक साधारण भारतीय की दैनिक आय 10 सेंट के लगभग थी।

इतना ही नहीं, भारतीयों को वहाँ के नागरिक अधिकारों से भी वंचित रखा गया। उन्हें मतदान का अधिकार नहीं था। सन 1860 ईस्वी. में पारित एक विधेयक के तहत उन्हें "बंधुआ श्रमिक'' जैसी स्थिति में रखकर उनसे श्रम करवाया जाता था।

ऐसी दमनकारी परिस्थितियों के विरुद्ध जिस व्यक्ति ने मुखर और साहसिक चुनौती दी, वह थे सरदार गुरदित्त सिंह! पंजाब के जिला अमृतसर स्थित ग्राम सरहाली के निवासी। वे सिख समाज के प्रतिष्ठित, शिक्षित एवं दूरदर्शी व्यवसायी थे।

उन्होंने न केवल The Continuous Passage Act का गहन अध्ययन किया, अपितु उसे तोड़ने का संकल्प लेकर एक ऐसा साहसिक निर्णय लिया, जो आने वाले समय में भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की चेतना का अग्रदूत बना।

उन्होंने जापानी जहाज़ कामागाटा मारू को 60,000 डॉलर की राशि पर भाड़े (लीज़) पर लेकर 'गुरु नानक नेविगेशन कंपनी' की स्थापना की। यह उल्लेखनीय है कि उस समय भारत में कोई भी स्वदेशी शिपिंग कंपनी नहीं थी और न ही कोई भारतीय जहाज़ का स्वामी था। सरदार गुरदित्त सिंह ने इस तकनीकी अड़चन को पार करते हुए वह जहाज़ किराये पर लिया, और अनेक भारतीय व्यवसायियों ने इस क्रांतिकारी पहल के समर्थन में इस नवगठित कंपनी के शेयर भी खरीदे।

इस यात्रा के ठीक दो दिन पूर्व, सरदार गुरदित्त सिंह को हांगकांग में गिरफ्तार कर लिया गया। उन पर आरोप लगाया गया कि वे अवैध रूप से यात्रियों को टिकट बेच रहे हैं। वस्तुतः ब्रिटिश हुकूमत के दबाव में हांगकांग प्रशासन ने यह कार्रवाई की। कामागाटा मारू जहाज़ को भी होमगार्ड द्वारा जब्त कर लिया गया था। स्थानीय प्रशासन इंग्लैंड और कनाडा से आदेश प्राप्त करने की प्रतीक्षा में था।

जब अपेक्षित निर्देश प्राप्त नहीं हुए, तब 4 अप्रैल सन 1914 ई. को हांगकांग प्रशासन ने सरदार गुरदित्त सिंह को रिहा कर दिया और जहाज़ को अपनी यात्रा आरंभ करने की अनुमति दे दी। उसी दिन जहाज़ ने हांगकांग से प्रस्थान कर शंघाई की ओर कूच किया। वहीं से 111 नए यात्री सवार हुए। इसके पश्चात 14 अप्रैल को पोर्ट मौजी से 86 और यात्री, और योकोहामा (जापान) से 14 यात्री इस साहसिक यात्रा में शामिल हुए। इस प्रकार कुल 376 भारतीय देशप्रेम और आत्मसम्मान से भरे हृदय लेकर, समुद्र की लहरों को चीरते हुए कनाडा की ओर अग्रसर हुए।

जब जहाज़ शंघाई पहुँचा, तब जर्मन प्रेस ने ब्रिटिश मीडिया को यह सूचना दी कि "एक भारतीय जहाज़ वैंकूवर की ओर अग्रसर है, जिसमें सैकड़ों हिंदुस्तानी सवार हैं।" ब्रिटिश प्रेस ने इस समाचार को सनसनीखेज़ बनाते हुए प्रकाशित किया। समाचार-पत्रों की सुर्खियाँ थीं–

"Boat Loads of Hindus on Way to Vancouver"

"Hindu Invasion of Canada"

इन भ्रामक और भड़काऊ प्रचारों के कारण वैंकूवर और संपूर्ण ब्रिटिश कोलंबिया में भय और घृणा का माहौल बन गया। स्थानीय गोरे नागरिकों और प्रशासन ने इस यात्रा का विरोध तीव्र कर दिया। वैंकूवर में प्रवासी भारतीय दो वर्गों में बँट गए, एक ओर वह थे जो इन यात्रियों का स्वागत कर रहे थे, दूसरी ओर वह श्वेत श्रेष्ठतावादी थे जो उन्हें किसी भी कीमत पर प्रवेश देने को तैयार नहीं थे।

इन विकट परिस्थितियों में वैंकूवर में बसे भारतीयों ने अपने हम वतन यात्रियों के सम्मान और अधिकारों की रक्षा हेतु संगठित होकर 'खालसा दीवान संस्था' के माध्यम से हर संभव सहायता प्रदान करने का बीड़ा उठाया।

वेंकूवर बंदरगाह पर टकराव और असहमति का विस्फोट

जब कामागाटा मारू जहाज़ 23 मई सन 1914 ई. को वैंकूवर के Burrard Inlet नामक गोदी में पहुँचा, तो स्थानीय प्रशासन के अधिकारियों ने जहाज़ पर चढ़कर गहन निरीक्षण किया। उन्होंने पाया कि सभी 376 यात्री स्वस्थ एवं सकुशल हैं। किन्तु प्रशासन ने मात्र एक पंजाबी डॉक्टर को, जो वास्तव में उनका मुखबिर था, वैंकूवर नगर में प्रवेश की अनुमति दी।

यात्रा की समस्त शर्तों का पालन करने के उपरांत भी कनाडा प्रशासन ने इन यात्रियों को देश में प्रवेश देने से स्पष्टतः इंकार कर दिया। यह अन्यायपूर्ण निर्णय यात्रियों के बीच तीव्र आक्रोश और बेचैनी का कारण बना। स्थिति की गंभीरता को समझते हुए वैंकूवर में बसे भारतीय 'खालसा दीवान संस्था' के माध्यम से एकजुट हो गए और एक विधिसम्मत संघर्ष आरंभ किया। इंग्लैंड और भारत के वायसराय को तार भेजे गए, परंतु कहीं से भी न्याय का कोई संज्ञान नहीं लिया गया।

कनाडा प्रशासन ने अलग-अलग बंदरगाहों से सवार यात्रियों को आधार बनाकर उनके प्रवेश को रोकने के लिए बहाने गढ़े। उन्होंने '$200 कानून' और 'निरंतर यात्रा अधिनियम (Continuous Passage Act)' का सहारा लेकर इस प्रवासियों

को अवैध रूप देने का प्रयास किया। स्थानीय भारतीयों ने दक्ष विधिवेत्ताओं की सहायता से अदालत में मुकदमे दायर किए, किन्तु निर्णय लंबित रहा।

लगभग दो महीनों तक यह जहाज़ गोदी में खड़ा रहा, जहाँ यात्री अनिश्चितता और अवमानना के वातावरण में जीने को विवश थे। इस बीच पुलिस और यात्रियों के बीच कई बार झड़पें भी हुईं। प्रशासन ने 'सी-लिंक' नामक जहाज़ की सहायता से कामागाटा मारू को समुद्री सीमा से बाहर खींचने का प्रयास किया, लेकिन उसमें असफल रहा। स्थिति के विस्फोटक हो जाने पर प्रशासन ने एक तोपों से लैस युद्धपोत तैयार कर लिया था।

उधर, स्थानीय भारतीय समुदाय ने इस घोर अन्याय के विरोध में वैंकूवर को जलाने तक की रणनीति बना ली थी। यह टकराव एक भीषण रक्त-संघर्ष में परिवर्तित हो सकता था। इस विभीषिका को टालने के लिए प्रशासन, स्थानीय समुदाय और जहाज़ पर सवार यात्रियों के बीच बैठक हुई। परिस्थिति की गंभीरता को देखते हुए 'सरदार गुरदित्त सिंह' ने यात्रियों के हित में शांतिपूर्ण मार्ग को अपनाते हुए जहाज़ को पुनः भारत लौटाने का कठिन किंतु विवेकपूर्ण निर्णय लिया।

वापसी और क्रांति की अग्निशिखा

अंततः केवल 24 यात्रियों को ही प्रवेश की अनुमति मिली। शेष 352 यात्रियों को कनाडा सरकार ने बलपूर्वक वापसी के लिए बाध्य किया। वैंकूवर के भारतीयों ने यात्रियों की हर संभव सहायता की। यहाँ तक कि जहाज़ का $60,000 भाड़ा चुकाने हेतु चंदा एकत्र किया गया। यह उदाहरण उस सुदृढ़ पंजाबी भाईचारे और आत्मबलिदान की भावना का प्रमाण है, जो विश्व भर में पंजाबी संस्कृति की आत्मा है।

26 सितंबर सन 1914 ई. को कामागाटा मारू ने अपनी थकी, आहत किंतु संघर्षशील आत्मा के साथ भारत वापसी की यात्रा आरंभ की। रास्ते में हवाई टापू पर महान क्रांतिकारी 'सरदार करतार सिंह जी सराभा' ने यात्रियों को संबोधित कर स्वतंत्रता संग्राम की ज्वाला प्रज्वलित की। जापान में 'बाबा सोहन सिंह जी भकना', गदर पार्टी के अग्रणी नेता, ने भी यात्रियों से संवाद किया और उन्हें ब्रिटिश साम्राज्य के विरुद्ध संघर्ष का आह्वान दिया।

बजबज घाट पर रक्त की धार

कोलकाता के समीप बजबज घाट पर जब यह जहाज़ पहुँचा, तब ब्रिटिश प्रशासन ने हथियारबंद सैनिकों के साथ उस पर अधिकार कर लिया। यात्रियों को जबरन रेल में बैठाकर पंजाब भेजने का षड्यंत्र रचा गया। इनमें से कई यात्री कोलकाता में काम-धंधा करना और वहाँ के गुरुद्वारे में 'श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी' की बीड़ को स्थापित करना चाहते थे। यात्रियों ने प्रशासन के आदेश का विरोध किया। वाद-विवाद ने हिंसा का रूप ले लिया। ब्रिटिश सैनिकों ने अंधाधुंध गोलीबारी की, जिसमें 20 यात्री तत्काल शहीद हो गए और 29 गंभीर रूप से घायल हुए। प्रत्यक्षदर्शियों के अनुसार यह संख्या 75 से अधिक थी। इन शहीदों का तत्काल वहीं अंतिम संस्कार कर दिया गया।

स्वतंत्रता आंदोलन की ज्वाला

इस त्रासदी के पश्चात 'सरदार गुरदित्त सिंह' और अन्य यात्री पंजाब पहुँचने में सफल हुए और स्वतंत्रता संग्राम की मुख्यधारा में शामिल हो गए। ब्रिटिश साम्राज्य इस घटना से थर्रा उठा। ब्रिटिश सेना में कार्यरत सिख जवानों ने अपने पदक वापस कर दिए। कनाडा में निवास करने वाले सिखों ने वैंकूवर के गुरुद्वारे में अपने ब्रिटिश सम्मान-पत्रों को आग के हवाले कर रोष प्रकट किया। ब्रिटिश अधिकारी हॉकिन्सन, जो यात्रियों से दुर्व्यवहार का प्रमुख सूत्रधार था, की हत्या 'सरदार मेवा सिंह' द्वारा कर दी गई। उन्हें फाँसी की सज़ा दी गई और वे विदेश की धरती पर प्रथम सिख शहीद के रूप में अमर हो गए।

इतिहास का उत्तरदायित्व और स्मृति

इस त्रासदी के लिए वर्ष 2008 ई. में कनाडा के प्रधानमंत्री ने औपचारिक माफ़ी माँगी। सन 2012 ई. में वैंकूवर बंदरगाह पर 376 यात्रियों के नामों सहित एक भव्य स्मारक का निर्माण श्खालसा दीवान सोसाइटीश द्वारा कराया गया। भारत सरकार नेषन 1952 ई. में कोलकाता के निकट बजबज घाट पर पंडित जवाहरलाल नेहरू के करकमलों से एक स्मृति स्थल की स्थापना की। वहाँ प्रतिवर्ष 29 सितंबर को श्रद्धांजलि समारोह आयोजित किया जाता है।

इस ऐतिहासिक घटना के अनुप्रमाणित गुरुवाणी का फर्मान है–

महला 5॥
आहर सभि करदा फिरै आहरु इकु न होइ॥
नानक जितु आहरि जगु उधरै विरला बूझै कोइ॥

(अंग क्रमांक 965)

"जो संकल्प मानवता की सेवा में समर्पित हो, वही आहार रूपी संकल्प जगत को उभारता है।"

उपसंहार

कामागाटा मारू कोई साधारण समुद्री यात्रा नहीं थी, वह आत्मसम्मान, स्वतंत्रता और सामूहिक चेतना का एक जीवंत दस्तावेज है। इसने पूरे विश्व में भारतीय चेतना को स्वर प्रदान किया। आज की युवा पीढ़ी के लिए यह घटना केवल इतिहास नहीं, बल्कि प्रेरणा, जागरूकता और सामाजिक उत्तरदायित्व का पाठ है।

हमने कभी मतदान के अधिकार हेतु रक्त बहाया था, वर्तमान समय में हम मतदान के अधिकार को हल्के में लेकर अपमानित कर रहे हैं। यह इतिहास हमें सतर्क करता है कि स्वतंत्रता कभी मुफ्त नहीं मिलती है, यह अनगिनत बलिदानों से अर्जित की जाती है।

स्मरणीय

1. 'श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी' के पृष्ठों को गुरुमुखी में 'अंग' कहकर सम्मान पूर्वक संबोधित किया गया है।
2. गुरबाणी अनुवाद हेतु 'गुरबाणी सर्चर ऐप' को प्रमाणिक स्रोत माना गया है।

3. साभार :

1. इस लेख में उद्धृत गुरुवाणी पदों का संकलन व विवेचन सरदार गुरदयाल सिंह जी (टीम खोज-विचार) द्वारा किया गया।
2. हाल ही में प्रदर्शित पंजाबी फिल्म "नानक नाम जहाज है" इसी ऐतिहासिक घटना पर आधारित है।

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं की भूमिका

डॉ. आशीष कुमार साव
हाजीनगर, उत्तर 24 परगना,
पश्चिम बंगाल
ई-मेल : ashish.shaw09@gmail.com

शोध सार : भारत के स्वाधीनता संग्राम में स्त्री शक्ति सदैव अग्रणी रही हैं। इस संग्राम में जितना योगदान पुरुषों का है, उतना योगदान स्त्रियों का भी है। वास्तव में स्त्री कभी भी अबला नहीं थी बल्कि सबला थी। राष्ट्रीय आन्दोलनों में महिलाओं ने न केवल ब्रिटिश हुकूमत के विरुद्ध तीखी प्रतिक्रिया व्यक्त की अपितु गिरफ्तारी देने में भी पीछे नहीं रहीं। इनकी बहादुरी, निःस्वार्थ सेवा एवं बलिदान अतुलनीय है। इस संग्राम में अधिकांश महिलाओं ने अपने अदम्य वीरता का परिचय देते हुए अपने प्राणों की आहुति भी दी है, उनमें से एक रानी लक्ष्मी बाई का नाम बड़े आदर से लिया जाता है, क्योंकि उनका युद्ध कौशल अद्‌भुत था, वे अपने जीवन के अंतिम सांस तक अंग्रेजों से लड़ाई करते हुए वीरगति को प्राप्त हुई। झांसी की रानी लक्ष्मी बाई के साथ-साथ बेगम हजरत महल, कनक लता बरुआ, डॉ लक्ष्मी सहगल, डॉ. एनी बेसेंट, हेमू कल्याणी, भीका जी कामा, सरोजनी नायडू, कस्तूरबा गांधी, गाई गिड़ालू, अंबिका चक्रवर्ती, कमला नेहरू, बीना दास, पुष्पलता दास, सावित्री बाई फुले, दुर्गावती देवी, कमला देवी चट्टोपाध्याय, नेली सेन गुप्ता, सुचेता कृपलानी, रानी चेन्नम्मा, सागरमल गोपा आदि अनेकों स्त्रियों ने भी स्वाधीनता संग्राम में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में इन महिलाओं को शामिल किए बिना स्वतंत्रता संग्राम का इतिहास पूर्ण नहीं हो पाएगा। इस शोध आलेख में भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं की महत्वपूर्ण योगदान को रेखांकित करने का प्रयास किया गया है।

बीज शब्द : स्वतंत्रता सेनानी, आंदोलन, क्रांतिकारी , बलिदान, संघर्ष, विद्रोह, आक्रोश, स्वाधीनता, स्वराज।

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम और स्वतंत्रता सेनानी महिलाएं : भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में अंग्रेजों के विरुद्ध पुरुषों के साथ-साथ महिलाओं ने भी कंधा से कंधा मिलकार भाग लिया। इस क्रम में 1857 के पूर्व देखा जाए तो फिरंगियों के विरुद्ध जंगल महल का जमींदार विद्रोह, संन्यासी विद्रोह, चुआडों का विद्रोह, बहाबी विद्रोह, बैरकपुर का प्रथम सैनिक विद्रोह, कित्तूर विद्रोह, बुंदेला विद्रोह, संथाल विद्रोह और आगे चलकर कूका विद्रोह आदि देखा जा सकता है। इन विद्रोहों में महिलाओं की भूमिका महत्वपूर्ण रही। संन्यासी विद्रोह में नेतृत्व करने में देवी चौधरानी और महारानी तवस्विनी का मुख्य योगदान देखने को मिलता है तो वहीं चुआड़ विद्रोह में रानी शिरोमणि का नाम विशेष रूप से उभर कर सामने आया। कित्तूर विद्रोह में रानी चेनम्मा के वीरता स्मरणीय हैं। इसी क्रम में अंग्रेजी दासता के विरुद्ध एक विद्रोह संथाल विद्रोह के रूप में उभरा। इस विद्रोह में लगभग तीस हजार संथाल (स्त्री और बच्चे सहित) ने अंग्रेजों के विरुद्ध जमकर विद्रोह किया। इस विद्रोह में भी महिलाओं ने भी अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निभाई। इस प्रकार उस समय अंग्रेजों के विरुद्ध घटित होने वाले सभी विद्रोह में महिलाओं की भूमिका अद्‌भुत रही।

सन 1857 की क्रांति भारतीय स्वाधीनता संग्राम की एक महत्वपूर्ण क्रांति थी। इस क्रांति को याद करते हुए भारत

सरकार ने 1957 में प्रथम स्वाधीनता युद्ध की शताब्दी मनाई थी। इसलिए 1857 की क्रांति को "प्रथम राष्ट्रीय मुक्ति संग्राम" माना जाता है। 1857 की क्रांति के असफलता के पश्चात देश की आजादी हेतु कुल 90 वर्षो का इंतजार करना पड़ा। यह क्रांति को अंग्रेजों द्वारा भले ही सिपाही विद्रोह माना गया किन्तु इस विद्रोह ने पूरे देश को गुलामी की नींद से जागा दिया। इस विद्रोह ने अंग्रेजों को यह एहसास करवा दिया कि वे यहाँ ज्यादा दिन तक शासन नहीं कर सकते हैं। इस संग्राम में पुरुषों के साथ-साथ महिलाओं ने भी कंधे से कंधा मिलाकर संघर्ष किया।

सन 1857 की क्रांति के पश्चात अंग्रेजों के विरुद्ध विरोध, विद्रोह और आंदोलन होते रहे, किन्तु एकजुटता के अभाव में इसे बार-बार दमन कर दिया गया। इन आंदोलनों में भी महिलाओं की भूमिका अद्वितीय रही। इस परिप्रेक्ष्य में बंग भंग आंदोलन तथा बहिष्कार आंदोलन (1905-1918) में एनीबेसेंट, स्वर्ण कुमारी देवी और मारग्रेट कजिंस आदि का योगदान अभूतपूर्व रहा। इसी क्रम में असहयोग आंदोलन ने अंग्रेजों पर गहरी छाप छोड़ी थी। इस आंदोलन में पुरुषों के साथ-साथ महिलाओं ने महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया। इन आंदोलनों में कस्तूरबा गांधी, पार्वती देवी, बाई अमन, वासंती देवी, उर्मिला देवी, सुनीति देवी, सरला देवी साराभाई, मृदुला बेन साराभाई, सरोजिनी नायडू, मणि बेन वल्लभ भी पटेल, नेली सेनगुप्त, शाम देवी, लाडो रानी जुत्शी, सावित्री देवी, सुभद्रा कुमारी देवी, राजकुमारी अमृता कौर, मीरा बेन, खुर्शीद नौरोजी, जानकी देवी बजाज, सत्यवती, कमला नेहरू, कमाल देवी चट्टोपाध्याय, विजय लक्ष्मी पंडित, दुर्गाबाई देशमुख, उर्मिला देवी शास्त्री, मेमी बाई, मानमोहिनी जुत्शी (सहगल) आदि का नाम विशेष रूप से सामने आता है।

इस प्रकार अंग्रेजों के विरुद्ध हुए 1857 से पूर्व, 1857 और 1857 से 1947 तक के विद्रोह एवं आंदोलनों में पुरुषों के साथ-साथ महिलाओं की भूमिका अद्भुत रही। भारतीय स्वाधीनता संग्राम में क्रांतिकारी गतिविधियों में सक्रियता के साथ डटी रहने वाली प्रमुख वीरांगनाओं में मैडम भीकाजी कामा, भगिनी निवेदिता, ननी बाला देवी, सरल देवी चौधरी, कुमारी प्रीति लता वद्देदार, कल्पना दत्त, वीना दास, शांति घोष और सुनीति चौधरी, उज्ज्वला मजूमदार, लीला नाग, सुहासिनी गांगुली, चारुशिला देवी, बेला मित्र, दुर्गा भाभी, सुशीला दीदी, मृणालिनी देवी, सुनीति देवी, माया देवी, श्रीदेवी मुसद्ही, शांता और शकुंतला, लक्ष्मी देवी और सावित्री, लीला, लज्जावती, शन्नो देवी, रानी गिड़ालू आदि का नाम प्रमुखता से आता है। इस क्रम में स्वराज के स्वर में स्वर देने वाली कुछ प्रमुख वीरांगनाओं का योगदान निम्नवत हैरू

देवी चौधरानी : संन्यासी विद्रोह के एक सूत्रधार के रूप में देवी चौधरानी को याद किया जाता है। "उस समय के लेफ्टिनेंट ब्रेनन की एक रिपोर्ट से पता चलता है कि भवानी पाठक की विद्रोही गतिविधियों के पीछे देवी चौधरानी का प्रमुखता से हाथ था। उनके अधीन अनेक वेतनभोगी बरकंदाज थे, जिनके रख-रखाव के लिए देवी चौधरानी, भवानी पाठक से लूट के धन का हिस्सा लेती थीं। भवानी पाठक के मारे जाने के बाद भी देवी चौधरानी ने हार नहीं मानी और वह बराबर लड़ती रहती थी। अंत तक वह अंग्रेजों के हाथ नहीं आई।"[1] इन्होंने आजीवन अंग्रेजों का विरोध किया।

साहब कौर : जिस समय लार्ड बेलेजली अपनी कूटनीति से देशी रियासतों को हड़प रहा था। उस समय रानी साहब कौर अपनी स्वाधीनता हेतु सेनाओं का पुनर्गठन कर रही थी। "सन् 1799 में अंग्रेज सेनापति सर टामस ने जींद पर आक्रमण किया। इसके बाद वह पंजाब की अन्य रियासतों पर अधिकार करता, इसके पूर्व रानी साहब कौर ने मध्यस्थता करके सर टामस की सिखों से सुलह करा दी। पर साहब सिंह को उसके कुछ साथियों ने रानी के विरुद्ध भड़का दिया और रानी कौर अपने भाई द्वारा बंदी बना ली गईं। लेकिन मौका पाकर वह बहादुर, चतुर रानी कैद से भाग निकलीं। इसके बाद संदर्भ मिलता है कि जीवन के अंतिम दिन उन्होंने अपने पति राजा जयमल सिंह के साथ भवानीगढ़ किले की कैद में बिताए। इसका मतलब है कि बाद में पति-पत्नी, दोनों को ही अंग्रेजों से टक्कर लेनी पड़ी होगी।"[2]

भीमाबाई : भीमाबाई इंदौर की महारानी अहिल्याबाई होल्कर के दत्तक पुत्र तुकाजी राव के पुत्र यशवंत राव की पुत्री थी। इन्होंने अस्त्र-शस्त्र का ज्ञान अपने पिता से प्राप्त किया। "सन 1817 में महीदपुर में अंग्रेजों से लड़ाई हुई, जिसमें होल्कर सेना की हार हुई। पर भीमाबाई ने धीरज नहीं छोड़ा। साहस जुटाकर उन्होंने पुनः सेना का संगठन किया और जंगल, पहाड़ों के मध्य अपना सैनिक शिविर बनाया। उन्हें छापामार युद्ध की भी जानकारी थी। वह छापे मारकर अंग्रेजों के खजाने व अन्य

सामग्री लूटने लगीं। छापामार युद्ध में अंग्रेजी सेना के कई सैनिक भी मारे गए, जिससे सर मालकम के कान खड़े हो गए।"[3] भीमाबाई होल्कर ने ब्रिटिश के खिलाफ लड़ाई लड़ी और उसे गुरिल्ला युद्ध में हरा दिया। इस युद्ध में भीमाबाई होल्कर की वीरता और साहस अद्वितीय व अद्‌भुत थी।

वेलुनाचियार : "वह अंधेरी रात, जब हुर्रा हुर्रा की आवाजों के बीच आग उगलती तोपों की गड़गड़ाहट से अजयगढ़ की दीवारें कांप उठीं। बारूदी लपटों में वीरांगना वेलु और वीर बटुकनाथ को रोमांचक बलिदानी खेल खेलना पड़ा। अपने मुट्ठी-भर सैनिकों को लेकर बटुकनाथ, जैक्सन की विशाल सेना का सामना करने के लिए आगे बढ़ा। उसका एक अंग कट जाने पर भी वह अंतिम क्षण तक लड़ता रहा। फिर उसकी आज्ञा से उसके वीर सेनापति दीवान ने उसका सिर काट लिया, परंतु वेलु ने अभी हार नहीं मानी थी। पति का सिर हाथ में लेकर वह चंडी-वेश में सेना पर टूट पड़ी। खचाखच तलवार चलाते उसका भयानक रूप देख, उसके हारते सैनिकों में नया जोश भर गया। तभी सामने पड़ गए सेनापति जैक्सन पर उसने बिजली की गति से वार किया। एक ही बार से जैक्सन का दाहिना हाथ उड़ गया।"[4] इस युद्ध के दौरान जब वेलु के मुट्ठी भर सैनिकों की हार की तरफ बढ़ने लगी तब वह अपने सैनिकों के साथ टीपू सुल्तान के गढ़ डिडीगल चली गई। इसलिए वेलुनाचियार की वीरता आज भी स्मरणीय है।

चेनम्मा : सन 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम से पूर्व अंग्रेजों के विरुद्ध देशभर में जो लड़ाइयाँ लड़ी गई, उसमें भारत की नारियों ने जो जौहर दिखाया, उसमें एक वीरांगना कित्तूर की रानी चेनम्मा का नाम अग्रणी रूप से आता है। "तेईस अक्तूबर! दक्षिण भारत में यह दिन रानी चेनम्मा की याद में उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए हर वर्ष महिला दिवस के रूप में मनाया जाता है। 23 अक्तूबर 1824 को कित्तूर के किले पर अंग्रेजों की संगठित शक्ति को इस छोटे से राज्य की रानी ने ललकारा था। यद्यपि यह विजय भी बाद में पराजय में बदल गई थी, पर कित्तूर की रानी चेनम्मा ने जिस साहस व शौर्य का परिचय दिया, उसकी याद में बेलगांव को सौ वर्ष बाद 1924 का श्भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस अधिवेशन-स्थलश चुना गया था।"[5] इन्होंने अपने जीवन के अंतिम सांस तक अंग्रेजों के विरुद्ध युद्ध किया। "कित्तूर की जनता अंग्रेजों की चाल से भली-भांति परिचित थी और तन-मन-धन से अपनी रानी चेन्नम्मा के साथ थी। अवसर देखकर अंग्रेजों ने कित्तूर राज्य के क्षेत्र में अपने सिपाही घुसा दिए। थैकरे स्वयं बड़ी सेना लेकर कितूर जा पहुंचा। ऐसा लगता था कि छोटा-सा राज्य कित्तूर तुरंत अपनी आजादी खो बैठेगा। किंतु रानी ने हिम्मत न हारी। उसके राज्य में पहले से ही युद्ध की तैयारियां होने लगी थीं। रानी ने बड़े रण-कौशल के साथ अंग्रेजों से जूझने की योजना बना रखी थी। उसने सेना की कमान बालण्णा, रावण्णा, गजबीर और चेन्नवासप्पा आदि योद्धाओं के हाथों में सौंप दी।"[6] रानी चेनम्मा और पुत्रवधु जनकीबाई की मृत्यु जेल में ही हुई। इनकी अदम्य वीरता को देखते हुए रानी चेनम्मा के महल को एक संग्रहालय बना दिया गया है।

साम्राज्यलक्ष्मी देवी : भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में महारानी साम्राज्यलक्ष्मी देवी का योगदान भी अभूतपूर्व रहा। ये पंजाब के महाराजा रणजीत सिंह की समकालीन थीं। वह अंग्रेजी शासन से क्षुब्ध थीं और अंग्रेजों को अपना शत्रु समझती थीं। पंजाब के महाराजा रणजीत सिंह का अंग्रेजों पर दबादबा था, यह जानकर वह रणजीत सिंह की सहायता से अंग्रेजों को देश से बाहर निकालना चाहती थीं। जिससे स्वराज का विगुल बजाया जा सके और इनकी वर्चस्व से मुक्ति पाया जा सके। "महारानी साम्राज्यलक्ष्मी देवी ने महाराजा रणजीत सिंह से मिलकर अंग्रेजी शासन से भिड़ने की योजना बनाई। पर उनके पति, नेपाल के तत्कालीन राणा राजेंद्र विक्रम शाह, भीरु स्वभाव के थे। वह अंग्रेजों से डरते थे। राज-काज में भी कुशल न थे। अतः उन्होंने ही सारा शासन-भार संभाल रखा था। उन्हें अपने चतुर, बुद्धिमान, बहादुर व वफादार प्रधानमंत्री भीमसेन थापा पर पूरा भरोसा था कि उसके सहयोग से वह अपने उद्देश्य में सफल होंगी।"[7] लेकिन अंग्रेजों ने कूटनीति से इन्हें इनकी ही जाल में फंसा कर इनकी योजना पर पानी फेर दिया। इन्हें नेपाल छोड़कर काशी में निर्वासित जीवन जीने के लिए मजबूर किया गया और अन्ततः इन्हें विष देकर मार दिया गया। आज भी इस वीरांगना को इनके देश प्रेम के लिए याद किया जाता है।

महारानी जिंदां : महारानी जिंदां शेर-ए-पंजाब महाराजा रणजीत सिंह की सबसे छोटी रानी थीं। वह वीरता और तेज की एक मशाल थी, जिसकी लौ को कभी भी तेजी से भभकने का अवसर ही नहीं मिला। उनमें अपने देश के लिए, अपनी

जनता के लिए बहुत कुछ करने का हौसला था लेकिन वह और उनका अबोध बेटा विश्वासघाती दरबारियों के षड्यंत्र और अंग्रेजों की कूटनीति के शिकार हो गए। "इस तरह महाराणा रणजीत सिंह के बाद नेतृत्वविहीन हो, पंजाब का विद्रोह क्रांति से कुछ वर्ष पूर्व ही दब गया था। राजकुमार भी विदेश से नहीं लौट सके और अधिकारियों में अंग्रेज परस्त दरबारियों की परंपरा मौजूद थी ही। अतः इस समय भी पंजाब के सिखों को नेतृत्व नहीं मिल सका। काश रानी के पंजाब लौटने की योजना सफल हो पाती, उनके लोग पहले ही पकड़ न लिए जाते, तो पंजाब में भी जन-क्रांति की लहर उठ सकती थी।"[8]

झांसी की रानी लक्ष्मी बाई : 'खूब लड़ी मर्दानी वह तो झांसी वाली रानी थी' इस सुप्रसिद्ध कविता से भारत का बच्चा-बच्चा परिचित है। देश की आजादी में फिरंगियों का रंग उड़ा देने वाली इस वीरांगना की वीरता जग जाहीर है। देश के लिए समर्पित एक दंपति से रानी ने राजा की मृत्यु से ठीक पहले दामोदर राव को अपने बेटे के रूप में अपनाया, जिसे ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी ने हड़प नीति के अनुसार कानूनी वारिस के रूप में स्वीकार करने से इनकार कर दिया और झाँसी पर कब्ज़ा करने का फैसला किया। वर्ष 1848 से 1856 तक भारत के गवर्नर-जनरल के रूप में लॉर्ड डलहौजी द्वारा व्यापक रूप से पालन की जाने वाली हड़प नीति एक विलय नीति थी। अपने क्षेत्र को सौंपने से इनकार करते हुए रानी ने उत्तराधिकारी की ओर से शासन करने का फैसला किया और बाद में वर्ष 1857 में अंग्रेजों के खिलाफ विद्रोह में शामिल हो गईं।

"17 जून, 1858 को पौ फटते ही आजादी का युद्ध शुरू हुआ। दोनों ओर से रणबांकुरों की तलवारें झनझना उठीं। गोलों की आवाज, मारो-काटो के स्वर, घोड़ों की हिनहिनाहट और रणभेरी से युद्ध क्षेत्र गूंज उठा। प्यासी धरती खून से सिंच गई। महारानी के व्यूह को भेद कर आगे बढ़ना सेनापति सर ह्यूरोज के लिए असंभव हो गया। रानी के वफादार पठान सिपाहियों ने अंग्रेजी सेना के छक्के छुड़ा दिए। पर शत्रु की सेना का संचालन बहुत अच्छा था। सहायक सेना के तुरत पहुंचने से शत्रु नए जोश से आगे बढ़ते रहे। रानी ने जब अपनी सेना को पीछे हटते देखा तो तड़प उठी। हुंकार भर कर खुद आगे बढ़ी। कमजोर पड़े सिपाहियों की हिम्मत बंध गई और उन्होंने जोर से हमला किया। ब्रिगेडियर स्मिथ को दूसरी ओर मुड़ता देखकर रानी ने उसका मार्ग रोक लिया। सूर्यास्त होने को था। रानी को अजेय समझ अंग्रेज पीछे हटे और उस दिन विजय का सेहरा रानी के सिर पर बंधा। पर रानी का प्यारा घोड़ा इस युद्ध में बुरी तरह घायल हो गया।"[9] इसप्रकार रानी लक्ष्मी बाई अपने जीवन के अंतिम समय तक अंग्रेजों के विरुद्ध युद्ध किया। "रानी का आदेश था, मरने पर भी उनका शव शत्रुओं के हाथ न लगे। इसलिए बचे लोग शत्रुओं को उलझाए रखे और रानी के विश्वासी अंगरक्षकों-रामचंद्र राव और काशीबाई ने रानी का शव पास की एक कुटिया में रखकर उनका दाहसंस्कार कर दिया। पीछा करने वाले शत्रुओं के वहां पहुंचने तक सब कुछ समाप्त हो चुका था"।[10]

बेगम हजरत महल : भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में बेगम हजरत महल का योगदान महत्वपूर्ण है। 1857 में, जब विद्रोह शुरू हुआ, वह पहले स्वतंत्रता सेनानियों में से एक थीं, जिन्होंने ग्रामीण लोगों को ब्रिटिश शासन के खिलाफ लड़ने और अपनी आवाज उठाने के लिए प्रेरित किया। बेगम हजरत महल ने अपने पति और अवध के आखिरी नवाब वाजिद अली शाह को अंग्रेजों द्वारा कोलकाता भेज दिए जाने के बाद अवध की बागडोर संभाली और अंग्रेजो के खिलाफ उस स्वतंत्रता संग्राम में मोर्चा लिया जिसे अंग्रेजों द्वारा सिपाही विद्रोह कहा गया। जिन लोगों ने हिन्दुस्तान की आजादी के लिए संघर्ष किया और अपनी कुर्बानियां दी, उनमें बेगम हज़रत महल का नाम अत्यन्त आदर के साथ लिया जाता है।

झलकारी बाई : रानी लक्ष्मीबाई की महिला सेना में झलकारी बाई का नाम प्रसिद्ध है। यह रानी की सबसे भरोसेमंद सलाहकारों में से एक थी। वह रानी को खतरे से बचाने के लिये अपनी जान जोखिम में डालने हेतु जानी जाती है। आज तक बुंदेलखंड के लोग उनकी वीरता की गाथा को याद करते हैं, और उन्हें अक्सर बुंदेली पहचान के प्रतिनिधि के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। इस क्षेत्र के कई दलित समुदाय उन्हें भगवान के अवतार के रूप में देखते हैं और उनके सम्मान में हर साल झलकारी बाई जयंती भी मनाते हैं।

कमलादेवी चट्टोपाध्याय : इन्होंने स्वतंत्रता-पूर्व भारत में ग्रामीण कारीगरों के उत्थान, स्वदेशी उद्योगों को बढ़ावा देने और महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए काम किया। कमलादेवी चट्टोपाध्याय नमक सत्याग्रह तथा सविनय अवज्ञा आंदोलन

से ही राजनीति में सक्रिय रहीं थीं। उसके बाद वो लगातार स्वतंत्रता संघर्ष के लिये होने वाले आंदोलनों में भागीदारी देती रहीं। अपने राजनीतिक संघर्ष के दौरान उन्हें कई बार जेल जाना पड़ा। भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान उन्हें भी गिरफ्तार किया गया। जेल से छूटने के बाद वो अमेरिका गईं तथा वहाँ के लोगों को भारत में ब्रिटिश हुकूमत की सच्चाई के बारे में बताया। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद कमलादेवी चट्टोपाध्याय ने अपना समय भारत की कला, संस्कृति तथा दस्तकारी के उत्थान में लगाया।

कस्तूरबा गांधी : कस्तूरबा गांधी महात्मा गांधी की पत्नी थी, इन्होंने सविनय अवज्ञा आंदोलन में सक्रिय रूप से भाग लिया। इन्होंने महिला शिक्षा और सशक्तिकरण की वकालत करते हुए भारत की स्वतंत्रता में स्त्रियों के प्रयासों का समर्थन किया। कस्तूरबा गांधी भी भारतीय अधिकारों की लड़ाई में शामिल हो गई थीं। इसके लिए उन्हें कई बार जेल जाना पड़ा था। वह भारत की आजादी की लड़ाई में अंत तक लगी रहीं और अपने पति महात्मा गांधी के हर प्रयास में उनके साथ खड़ी रहीं। स्वतंत्रता सेनानी होने के साथ ही कस्तूरबा गांधी राजनीतिक कार्यकर्ता और नागरिक अधिकारों के लिए आवाज उठाती थीं।

हंसा मेहता : हंसा मेहता ने एक शिक्षिका, राजनयिक और स्वतंत्रता सेनानी के रूप में अपनी महत्वपूर्ण कर्तव्य का निर्वाह किया। ये भारत की स्वतंत्रता और महिला अधिकारों की वकालत करने वाले अंतर्राष्ट्रीय मंचों का हिस्सा रहीं और स्वतंत्रता के बाद की नीतियों को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

प्रीतिलता वोडेयार : एक बहादुर क्रांतिकारी थी, इन्होंने ब्रिटिश क्लब पर हमले का नेतृत्व किया, जिससे इनके प्रतिरोध की भावना उजागर हुई। उनका बलिदान और दृढ़ संकल्प औपनिवेशिक उत्पीड़न के खिलाफ लड़ाई को प्रेरित करता है।

सरोजिनी नायडू : ष्भारत की कोकिलाष के नाम से मशहूर, सरोजिनी नायडू एक कवियित्री, स्वतंत्रता सेनानी और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की प्रमुख सदस्य थीं। वह ब्रिटिश सरकार के खिलाफ लड़ने वाली सबसे प्रभावशाली और प्रमुख महिला स्वतंत्रता सेनानियों में से एक थीं। उन्होंने सविनय अवज्ञा आंदोलन और भारत छोड़ो आंदोलन में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, जिसके लिए उन्हें जेल भी हुई। सन् 1930 के प्रसिद्ध नमक सत्याग्रह में सरोजिनी नायडू गांधीजी के साथ चलने वाले स्वयंसेवकों में से एक थीं। गांधीजी की गिरफ्तारी के बाद गुजरात में धरासणा में लवण पटल की पिकेटिंग करते हुए जब तक स्वयं गिरफ्तार नहीं हो गई, तब तक वह आंदोलन का संचालन करती रहीं। धरासणा वह स्थान था, जहां पुलिस ने शांतिमय और अहिंसक सत्याग्रहियों पर घोर अत्याचार किए। सरोजिनी नायडू ने बड़े साहस के साथ उस परिस्थिति का सामना किया। नमक सत्याग्रह खत्म कर दिया गया। उन्होंने कई शहरों की यात्रा की और महिला सशक्तिकरण, सामाजिक कल्याण और स्वतंत्रता के महत्व के बारे में व्याख्यान दिए। सरोजिनी नायडू 1925 में कानपुर अधिवेशन में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की पहली भारतीय महिला अध्यक्ष रही थीं। 1928 में वह गांधीजी से अहिंसा आंदोलन का संदेश लेकर अमेरिका पहुंची। इतना ही नहीं, इनके देश की आजादी में इनका योगदान देखते हुए इन्हें भारतीय राज्य की पहली महिला राज्यपाल भी बनाया गया था।

उषा मेहता : भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में उषा मेहता का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है। वह भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में भाग लेने वाली सबसे कम उम्र की प्रतिभागियों में से एक थीं। गांधी जी का उषा पर बहुत प्रभाव पड़ा था, वह पांच साल की थीं जब उनकी मुलाकात गांधी जी से हुई। वह केवल आठ साल की थीं जब उन्होंने 'साइमन वापस जाओ' विरोध में भाग लिया था. उनके पिता ब्रिटिश सरकार के अधीन काम करने वाले एक न्यायाधीश थे, उन्होंने उन्हें गांधीजी के खिलाफ समझाने की कोशिश की, लेकिन वह जानती थीं कि उनके पिता ब्रिटिश सरकार के एक कर्मचारी मात्र थे और इस स्वतंत्रता संग्राम में उन्हें चोट लगने का डर था, लेकिन उन्होंने साहसपूर्वक इसके खिलाफ लड़ने का फैसला किया। ब्रिटिश सरकार के खिलाफ रेडियो चौनल चलाने के आरोप में उन्हें जेल भी हुई।

दुर्गाबाई देशमुख : एक सामाजिक कार्यकर्ता, वकील और राजनीतिज्ञ के रूप में इन्होंने महिला अधिकारों, श्रम अधिकारों और हाशिए पर पड़े लोगों के उत्थान के लिए काम किया। उनके प्रयासों ने स्वतंत्रता के बाद समावेशी सामाजिक परिवर्तन का मार्ग प्रशस्त किया।

अरुणा आसफ अली : अरुणा नमक सत्याग्रह के दिनों से ही राजनैतिक रूप से सक्रिय रहीं थीं लेकिन उनकी पहचान विशेष रूप से 9 अगस्त, 1942 को मुंबई के ग्वालिया टैंक मैदान में बनी जब सभी नेताओं की गिरफ्तारी के बाद उन्होंने राष्ट्रीय ध्वजारोहण समारोह का नेतृत्व किया। जब वह जेल से रिहा हुईं तो उन्होंने भारत छोड़ो आंदोलन का नेतृत्व किया, जिससे पता चलता है कि भारत में स्वतंत्रता संग्राम के दौरान महिलाएं कितनी निडर थीं। उन्होंने तिहाड़ जेल में राजनीतिक कैदियों के अधिकारों के लिए भी लड़ाई लड़ीं। इसके लिए उन्होंने भूख हड़ताल की जिससे कैदियों की स्थिति में सुधार आया। इन्होंने राममनोहर लोहिया के साथ मिलकर 'इंकलाब' नामक मासिक पत्रिका का संपादन भी किया।

रानी गाइदिनल्यू : रानी गाइदिनल्यू मणिपुर की एक प्रमुख नागा राष्ट्रवादी महिला नेता थीं, जिन्होंने अंग्रेजों के खिलाफ नागा राष्ट्रवादियों के आंदोलन की कमान संभाली थी। इन्होंने आजीवन फिरंगी नीतियों का विरोध किया।

कल्पना दत्ता : इन्हें प्रमुख महिला क्रांतिकारी नेता के रूप में जाना जाता है, ये सूर्य सेन के क्रांतिकारी विचारों से प्रभावित थीं। ये बंगाल में वामपंथी राजनीति तथा क्रांतिकारी गतिविधियों में सक्रिय थीं। वर्ष 1930 के चटगाँव शस्त्रागार लूट (Chittagong Armoury Raid) में वो सूर्य सेन (मास्टर दा) के साथ लड़ी थीं तथा वर्ष 1932 में उन्हें आजीवन कारावास की सज़ा सुनाई गई थी।

भीकाजी कामा : भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में भीकाजी कामा के योगदान से शायद ही कोई अपरिचित हो। वह भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में अग्रणी स्वतंत्रता सेनानियों में से एक थीं. उन्हें मैडम कामा के नाम से भी जाना जाता था। उन्होंने स्वतंत्रता संग्राम के दौरान भारतीय नागरिकों के मन में महिला समानता और महिला सशक्तिकरण के बीज बोये। वह एक पारसी परिवार से थीं, उनके पिता सोराबजी फ्रामजी पटेल पारसी समुदाय के सदस्य थे। उन्होंने कई अनाथ लड़कियों को समृद्ध जीवन जीने में भी मदद की। उन्होंने राष्ट्रीय आंदोलनों में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

सुचेता कृपलानी : सुचेता कृपलानी समाजवादी विचारधारा वाली एक प्रखर राष्ट्रवादी थीं। ये जय प्रकाश नारायण की करीबी सहयोगी थीं, जिन्होंने भारत छोड़ो आंदोलन में सक्रिय रूप से भाग लिया था। उन्होंने आचार्य विनोबा भावे के नेतृत्व में व्यक्तिगत सत्याग्रह में हिस्सा लिया और जेल गईं। वर्ष 1943 में जब कांग्रेस में महिला विभाग की स्थापना की गई तब सुचेता कृपलानी को उसका सचिव बनाया गया। उसके बाद उन्होंने महिला कांग्रेस के प्रचार तथा उसमे लोगों को जोड़ने के लिये लगातार प्रयास किये। भारत विभाजन के समय वो गाँधीजी के साथ मिलकर दंगे से प्रभावित क्षेत्रों में जा रही थीं। वह उत्तर प्रदेश की विधानसभा में सदस्य तथा बाद में लोकसभा की सदस्या भी रहीं। वर्ष 1963 में वह उत्तर प्रदेश की मुख्यमंत्री बनीं और वह भारत की पहली महिला मुख्यमंत्री थीं।

राजकुमारी अमृत कौर : 1919 से ही गांधीजी की करीबी अनुयायी थीं। उन्होंने 1930 के नमक सत्याग्रह और भारत छोड़ो आंदोलन में सक्रिय रूप से भाग लिया। वे स्वतंत्र भारत की पहली स्वास्थ्य मंत्री बनीं।

एनी बेसेंट : आयरलैंड में जन्मी एनी बेसेंट भारत के स्वतंत्रता संग्राम की प्रबल समर्थक थीं। 1916 में उन्होंने मद्रास होम रूल लीग की शुरुआत की। इसके अलावा उन्होंने थियोसोफिकल सोसाइटी ऑफ इंडिया का गठन किया। 1917 में वे कलकत्ता में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की पहली महिला अध्यक्ष बनीं। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में इनका योगदान अविस्मरणीय है।

सावित्रीबाई फुले : भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में सावित्रीबाई फुले का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है। वह भारत की पहली महिला शिक्षिका थीं और पहले भारतीय बालिका विद्यालय की संस्थापक थीं। उनके द्वारा कहा गया एक कथन प्रसिद्ध है कि "यदि आप एक लड़के को शिक्षित करते हैं, तो आप एक व्यक्ति को शिक्षित करते हैं, लेकिन यदि आप एक लड़की को शिक्षित करते हैं, तो आप पूरे परिवार को शिक्षित करते हैं." ये कुछ शब्द बताते हैं कि वह किस विचारधारा का पालन करती थीं। उनकी पूरी यात्रा में उनके पति ज्योतिराव फुले ने उनका समर्थन किया।

लक्ष्मी सहगल : भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में लक्ष्मी सहगल का योगदान अद्वितीय रहा है। वह सुभाष चंद्र बोस से अत्यंत प्रभावित थीं। वह सुभाष चंद्र बोस को अपना आदर्श मानती थीं और आगे चलकर भारतीय राष्ट्रीय सेना की सक्रिय

सदस्या बन गईं। वह एक साहसी युवा लड़की थी जिसकी एकमात्र महत्वाकांक्षा भारत की स्वतंत्रता थी। उन्होंने एक महिला डिवीजन बनाई और इसका नाम झाँसी की रानी रेजिमेंट रखा। उन्होंने ब्रिटिश सरकार के खिलाफ लगभग सभी आंदोलनों में भाग लिया। वह सभी बाधाओं के खिलाफ बेकाक कर लड़ीं, जिससे उनका नाम इतिहास के पन्नों में दर्ज हो गया।

असम की रानी कनकलता बरुआ : असम की कनकलता बरूआ भारत की ऐसी स्वतंत्रता-सेनानी थीं, जिनको अंग्रेजों ने सन् 1942 के 'भारत छोड़ो आंदोलन' के दौरान जुलूस का नेतृत्व करते समय गोली मार दी थी। उस समय वे देश के लिये शहादत पाने वाली सबसे कम उम्र की वीरांगना थीं। उन्हें 'असम की रानी लक्ष्मीबाई', 'वीरबाला' और 'शहीद' के नाम से जाना जाता हैं। "She was rejected by Azad Hind Fauj. She had joined the Mirtyu Bahini just two days before the incident" Said Sheila Bora, retired professor of Dibrugarh University, who has authored a monograph on Barua."

हेमू कालाणी : बचपन से ही इनके रगों में देश की भक्ति की भावना कूट कूट कर भरी हुई थी अपनी किशोरावस्था में ही उन्होंने अपने अन्य साथियों के साथ मिलकर विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार स्वदेशी वस्तुओं को अपनाने की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित किया। महात्मा गांधी जी ने जब भारत छोड़ो आन्दोलन चलाया तो उसमें इनकी सक्रिय भूमिका रही। सन 1942 में उन्हें कहीं से यह गुप्त सूचना मिली कि अंग्रेजों की हथियारों से भरी गाड़ी रोहडी शहर से होकर गुजरेगी हेमू कालाणी जी ने अपने साथियों के साथ मिलकर रेल पटरी अस्त व्यस्त करने की योजना बनाई। परन्तु वह ब्रिटिश सिपाही द्वारा पकड़ी गई और इनके साथी फ़रार होने में सफल रहे। कोर्ट ने इन्हें फाँसी की सजा सुनाई और साथ ही साथ यह हिदायत भी दी कि अगर यह अपने फ़रार साथियों का नाम बता देंगे तो फाँसी की सजा अन्य सजा मे तब्दील कर दी जाएगी। किन्तु आज़ादी के दीवानी हेमू जी ने फांसी स्वीकार किया लेकिन देश से गद्दारी नहीं की। इसलिए इनका नाम आज भी आदर से लिया जाता है।

बीना दास : भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के इतिहास में इनका नाम बड़े आदर से लिया जाता है। है। बचपन से ही उनका स्वभाव क्रांतिकारी रहा, जिस कारण उन्होंने फिरंगियों का खूब विरोध किया। कोलकाता विश्वविद्यालय में जब दीक्षांत समारोह में उपाधि लेने आई कुमारी वीना दास ने मुख्य अतिथि के रूप में बंगाल के अंग्रेज लाट सर स्टैनले जैकसन पर गोली चला दिया। इस कारण "उनके ऊपर मुकदमा चला जिसकी सारी कारवाई एक ही दिन में पुरी करके बीना दास (Bina Das) को नौ वर्ष की कड़ी कैद की सजा दे दी गयी।" अपने अन्य साथियों का नाम बताने के लिए पुलिस ने उन्हें बहुत सताया, पर बीना ने मुंह नही खोला, और सजा मिलने से पहले कोर्ट में कहा- "मैं स्वीकार करती हूँ, कि मैंने सीनेट हाउस में अंतिम दीक्षांत समारोह के दिन गवर्नर पर गोली चलाई थी। मैं खुद को इसके लिए पूरी तरह से जिम्मेदार मानती हूँ। अगर मेरी नियति मृत्यु है, तो मैं इसे अर्थपूर्ण बनाना चाहती हूँ, सरकार की उस निरंकुश प्रणाली से लड़ते हुए जिसने मेरे देश और देशवासियों पर अनगिनत अत्याचार किये हैं।"[11] साल 1937 में प्रान्तों में कांग्रेस की समितियों के बनने के पश्चात अन्य राजबंदियों के साथ बीना भी जेल से बाहर आईं। 1942 के 'भारत छोड़ो आन्दोलन' में महात्मा गाँधी के साथ आन्दोलन में हिस्सा लिया और दोबारा उन्हें तीन वर्ष के लिये नज़रबन्द कर लिया गया था। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में इनका योगदान अद्भुत रहा है।

निष्कर्ष : उपरोक्त विषय पर प्राप्त तथ्यों से यह स्पष्ट हो जाता कि भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं का योगदान अद्वितीय रहा है। उनकी वीरता, संघर्ष, त्याग, करुणा और देश के प्रति समर्पण का भाव अभूतपूर्व रहा है। देश की आजादी में इनका योगदान किसी भी दृष्टि से पुरुषों की अपेक्षा कम नहीं था। इस संदर्भ में यदि देखा जाए तो अंग्रेजों के विरुद्ध 1857 के पूर्व के विद्रोह हो या 1857 की क्रांति या 1857 से लेकर 1947 तक के विद्रोह एवं आंदोलन, इन सभी विद्रोहों या आंदोलनों में महिलाओं ने पुरुषों के साथ कंधा से कंधा मिलाकर देश की स्वाधीनता संग्राम में अद्वितीय योगदान दिया।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. व्होरा आशारानी, महिलाएं और स्वराज, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, पृष्ठ संख्या-12
2. व्होरा आशारानी, महिलाएं और स्वराज, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, पृष्ठ संख्या-14
3. व्होरा आशारानी, महिलाएं और स्वराज, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, पृष्ठ संख्या-16
4. व्होरा आशारानी, महिलाएं और स्वराज, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, पृष्ठ संख्या-20
5. व्होरा आशारानी, महिलाएं और स्वराज, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, पृष्ठ संख्या-21
6. ऋतुश्री, संपादक, भारत के नारी रत्न, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, पृष्ठ-56
7. व्होरा आशारानी, महिलाएं और स्वराज, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, पृष्ठ संख्या-25
8. व्होरा आशारानी, महिलाएं और स्वराज, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, पृष्ठ संख्या-29
9. व्होरा आशारानी, महिलाएं और स्वराज, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, पृष्ठ संख्या-67
10. Pathak, Guptaji: Assamese women in Indian independence movement, First edition: 2008, Mittal Publication, 4594/9, Daryaganj, New Delhi,page : 59
11. व्होरा आशारानी, महिलाएं और स्वराज, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, पृष्ठ संख्या-359

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

डॉ. सुमन सचदेवा के काव्य संग्रह 'मैं कहाँ?' के भाव पक्ष का विश्लेषण

डॉ. हरिभजन प्रियदर्शी
(प्रवक्ता हिंदी) पीएम.श्री.राजकीय(कन्या)
वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय मलोट,
जिला श्री मुक्तसर साहिब (पंजाब)

बहुआयामी और लब्धप्रतिष्ठ व्यक्तित्व की धनी डॉ. सुमन सचदेवा का हिंदी साहित्य में अनूठा स्थान है। यह पंजाब की समकालीन कवयित्रियों में जन परिचित कवयित्री हैं। इनका जन्म 20 मई 1965 गिदड़बाहा, जिला श्री मुक्तसर साहिब, पंजाब में हुआ। शैक्षिक दृष्टि से बात करें तो इन्होंने उच्चकोटि की शिक्षा प्राप्त की है। इन्होंने बी.ए., बी.एड., एम.ए.(हिंदी), एम.ए.(पंजाबी), एम.ए.(अंग्रेज़ी) तथा पीएच.डी.की डिग्री हासिल की है। कवयित्री ने अपने अध्यापन कार्य का शुभारंभ डी. ए. वी. कॉलेज गिदडबाहा से प्रारंभ किया तत्पश्चात इन्होंने कुछ वर्षों तक डी.ए.वी. कॉलेज अबोहर में तथा ज़ी. टी. बी.सीनियर सेकेंडरी स्कूल मलोट में अध्यापन कार्य किया। अपनी लगन और मेहनत के परिणाम स्वरूप हिंदी अध्यापिका के रूप में चयनित हुई और सरकारी हाई स्कूल किंगरा जिला श्री मुक्तसर साहिब में ज्वाइन किया। शिक्षा विभाग के प्रत्येक कार्य को सफलतापूर्वक संपन्न किया। बतौर हिंदी अध्यापिका आप ने हिंदी विषय को पंजाब में चरम सीमा पर पहुँचाया और हिन्दी के विकास हेतु दिन रात कार्यरत रही चाहे वह हिंदी मॉड्यूल हो, या व्याकरण की पुस्तक हो आपका योगदान और भूमिका सर्वदा रही है। हिंदी की सेवा करती हुई आप 31 मई 2023 को राजकीय हाई स्कूल (लड़के) मलोट से सेवा निवृत्त हुई।

लेखन कार्य की बात करें तो कवयित्री ने विभिन्न क्षेत्रों में अपनी कलम चलाई है चाहे वह कविता का क्षेत्र हो,लघु कथा का क्षेत्र हो या फिर कहानी लेखन हो। सांझा काव्य संग्रह जैसे किरण- किरण रोशनी, काव्योदय, काव्य दर्शन, काव्य तरंगिनी, यादें तेरी (ग़ज़ल संग्रह) में उनकी कविताएँ प्रकाशित हो चुकी हैं इसके साथ-साथ विभिन्न पत्र - पत्रिकाओं में कविताएँ व लघु कथाएँ प्रकाशित हो चुकी हैं श्मैं कहाँश इनका निजी काव्य संग्रह है।

काव्य की आत्मा उसका भाव होता है।जिस कविता में भाव नहीं है वह कविता रसहीन हो जाती है। डॉक्टर सुमन सचदेवा ने अपनी कविताओं में समाज की विभिन्न समस्याओं और उनके पहलुओं को बखूबी उजागर किया है। इनकी कविताओं में नवीन भावबोध नवीन मूल्य पूर्ण रूपेण दृष्टिगोचर होते हैं। कवयित्री ने जीवन के यथार्थ को अपनी कविता के माध्यम से प्रस्तुत किया है। पाठक इनकी कविताओं को पढ़कर भाव विभोर होता है।

ममत्व एवं वात्सल्य- एक नारी होने के कारण कवयित्री के अंतर्मन में विद्यमान ममत्व एवं वात्सल्य की भावना स्वतः ही बाहर निकलते दिखाई देती है। माँ कविता में मातृत्व भाव को बखूबी बयां करती हुई कहती हैं कि इस संसार में माँ का रिश्ता सभी रिश्तों में सर्वोच्च है–

हँसती साथ हमारे मिल कर
साथ में ही रोती है

लाख हैं रिश्ते जग में लेकिन
माँ तो माँ होती है।[1]

जिस प्रकार सूरदास की रचनाओं में यशोदा का कृष्ण के प्रति वात्सल्य भाव का वर्णन मिलता है, ठीक इसी प्रकार कवयित्री ने मां और बेटी के वात्सल्य भाव का बड़ा सुंदर चित्रांकन 'माँ' कविता में किया है।

सदा दुलारे लाड़ लड़ाए
और लुटाए ममता
बच्चों के गम को वो अपने
आँसू से धोती है।[2]

भारतीय संस्कृति एवं राष्ट्रीय मूल्यों का निरूपण- भारतीय सभ्यता और संस्कृति अपने आप में अनूठी है। भारतीय संस्कृति की नकल पूरा विश्व कर रहा है और आज भारतीय संस्कृति को खूब अपनाया जा रहा है तो भला कवयित्री भारतीय सभ्यता संस्कृति का निरूपण करने से कैसे रह सकती है। इन्होंने 'होली के रंग', 'इस दिवाली' पर दोनों कविताओं में भारतीय संस्कृति की झलक स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। श्इस दिवाली परश कविता में कवयित्री ने नफरत ईर्ष्या द्वेष आलस्य से अहंकार तथा क्रोध को त्यागने के लिए जनमानस को प्रेरित करती हैं–

सोचा है
इस दीवाली पर
पोंछ डालें
मन के हर कोने से
नफरत की धूल मिट्टी
उतार दें जाले
ईर्ष्या - द्वेष के,
आलस्य व अहंकार के।[3]

भारतीय संस्कृति में होली के पर्व का बड़ा ही महत्व है। इस पावन पर्व पर प्रत्येक व्यक्ति अपनी आपसी भेदभाव तथा वैरभाव को भूलाकर एक दूसरे से गले मिलते हैं और एक दूसरे के साथ गुलाल और रंगों के साथ खूब मस्ती करते हैं।

भुला के गम सभी चेहरे ही
मुस्काते हैं होली में
कि दुश्मन भी तो अपने मीत
बन जाते हैं होली में।[4]

नारी के स्थान को यथार्थ रूप में चित्रण - नारी वर्तमान समाज में एक अभिन्न भूमिका निभा रही है। वे परिवारों की रीढ़ की हड्डी है। समुदाय तथा देश के विकास में अपना अह्म योगदान डाल रही हैं। आज नारी की उन्नति एवं विकास की तो अनेक योजनाएँ चलाई जा रही हैं तथा चारों तरफ ढिंढोरा पीटा जा रहा है कि आज नारी आज़ाद है। प्रत्येक क्षेत्र में सबसे आगे है लेकिन कवयित्री ने नारी के वास्तविक रूप का वर्णन अपनी कविता "छली जाती है स्त्रियाँ" में बखूबी से किया है।

माना कि कुछ हद तक
मुक्त हो गयी हैं स्त्रियाँ
घर की चारदीवारी की कैद से
मगर कहाँ मिल पाया है उन्हें
वो उन्मुक्त आकाश

कि जहाँ ले सकें वे
एक आज़ाद साँस।[5]

कवयित्री आगे लिखती हैं कि स्त्रियाँ तो नाममात्र के लिए ही आज़ाद हैं। आज भी उनकी डोर किसी और के हाथ में है और वह एक रोबोट की तरह रिमोट से चलने वाली वस्तु मात्र ही हैं–

आज भी बहुत सी स्त्रियाँ
कहने को हैं आजाद
मगर
शून्य में उड़ती
पतंग की तरह
कि जिसकी डोर है।[6]

कवयित्री आगे लिखती है कि जब हर वर्ष महिला दिवस आता है तो बड़े धूमधाम से बनाया जाता है। उनकी उन्नति, तरक्की और सुरक्षा की बात की जाती है लेकिन महिलाएँ बड़ी ही भोली भाली होती है। इस समाज के प्रपंच को समझ नहीं पाती और वह बार-बार छली जाती हैं–

महिला दिवस मनाने वाली
ये भोली भाली स्त्रियाँ
जमाने के प्रपंच को कहाँ समझ पाती हैं!
हाँ, ये स्त्रियाँ किसी न किसी रूप में
अब भी छली जाती हैं।।[7]

रिश्तों की अहमियत का निरूपण- डॉ. सुमन सचदेवा बड़े ही सरल सहज निश्चल स्वभाव की स्वामिनी है। वह सामाजिक तथा पारिवारिक रिश्तों को बखूबी निभाना जानती हैं। माँ, 'मैं और बेटी', 'जब बच्चे बड़े हो जाते हैं', 'अपनों के साथ चाय पीना', आदि कविताएँ हमें भावात्मकता से जोड़ती हैं। 'कह देना' कविता की कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार है–

सुनो
मन में मत रखना
कोई बात
कह देना जिससे
जो कहना चाहो।[8]

कवयित्री को पता है कि हम सब एक सामाजिक प्राणी है और परिवार में नोकझोंक लड़ाई झगड़ा चलता रहता है लेकिन उनका मानना है कि इसको मन में बिठाकर नहीं रखना चाहिए–

लाख लड़ाई करो
भाई-बहनों से
मगर प्यार जब आए तो
गालों पे चिकोटी काट लेना
चोटी खींच लेना
और फिर झप्पी ले लेना।[9]

वर्तमान युग मशीनीकरण का युग है। प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन में इतना व्यस्त है कि वह अपने बच्चों को भी नजर अंदाज करता जा रहा है लेकिन कवयित्री का कथन है कि प्रत्येक व्यक्ति को थोड़ा बहुत समय अपने बच्चों के लिए अवश्य निकालना चाहिए ताकि बच्चे अपने आपको उपेक्षित एवं अकेला महसूस न करें–

व्यस्त जिंदगी में अक्सर
निकालते रहना समय
बच्चों के सिर पर
रखने को हाथ।[10]

भ्रूण हत्या - भारत एक पुरुष प्रधान देश है। भारतीय समाज में कन्या का जन्म एक अभिशाप माना जाता है। इसके पीछे कई पहलू कार्य करते हैं।एक पुत्र का वंश चालक, वहशी दरिन्दों से रक्षा तथा दहेज प्रथा जैसी डायन आदि मनःस्थितियों से भयभीत व्यक्ति गर्भ में ही परी का वध करवा देता है श्कुछ प्रश्न श्कविता में वे समाज से प्रश्न करती हैं कि अगर कन्याओं का वध ही करना है तो फिर कन्या पूजन का त्यौहार क्यों मनाते हो?

जन्म लेने से भी पहले
गर्भ में ही मार देते
कन्या-पूजन का मनाते
फिर वही त्योहार क्यों हैं?[11]

राष्ट्रीय प्रेम-कवयित्री के अंदर राष्ट्रीय प्रेम कूट-कूट कर भरा हुआ है। भारत के वीर सपूतों राजगुरु, चंद्रशेखर और भगत सिंह ने भारत की आज़ादी के लिए अपनी शहादत दे दी। जिस भारत की कामना उन्होंने की थी जब आज वह कवयित्री को दिखाई नहीं देता तो वह प्रश्न कर उठती हैं–

बीज बोया त्याग और
बलिदान का तूने भगत सिंह
उग रहा उस बीज में से
स्वार्थ का व्यापार क्यों?[12]

प्रकृति चित्रण- कवयित्री की कविताओं के अध्ययनोपरांत ज्ञात होता है कि कवयित्री ने प्रकृति के आलंबन और उद्दीपन दोनों रूपों का बड़ा सुंदर चित्रांकन अपनी कविताओं में किया है। 'उदास कौन?' कविता में कवयित्री ने फूलों के माध्यम से अपनी उदासी को अभिव्यक्त किया है–

आज फूल उदास थे
मुझे देख
वो खिले नहीं
मुस्काए नहीं
महके नहीं
इठलाए नहीं।[13]

'पूनम का चाँद' कविता में प्रकृति के मानवीकरण का सुंदर दिग्दर्शन मिलता है–

पूनम का वो प्यारा चाँद
आँगन मेरे उतरा चाँद
भूली बिसरी कितनी यादें
फिर से याद दिला गया चाँद।[14]

आशावादी दृष्टिकोण- डॉ॰ सुमन सचदेवा से मैं चिरपरिचित हूँ। कभी भी उन्हें जीवन में मैंने निराश होते नहीं देखा। सदैव आशावादी रही हैं और अपने सहकर्मियों, दोस्तों, मित्रों को भी आशावादी दृष्टिकोण अपनाने के लिए प्रेरित करती रहती हैं। यही दृष्टिकोण उनकी कविताओं में बखूबी देखने को मिलता है। 'उदास मत होना' और 'सब खत्म' इसी प्रकार की कविताएं हैं।

देखो! तुम उदास मत होना
प्यारी यह मुस्कान न खोना
आए हो जो जीवन बन के
मिलते रहना यूँ ही हँस के
खुशियों की इस माला में तुम
गम के कभी न फूल पिरोना
देखो! तुम उदास मत होना।[15]

'सब खत्म' कविता में कवयित्री ने उपदेशात्मक शैली में आशावादी दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति की है–

अक्सर बहुत बार
हम सोच लेते हैं
सब ख़त्म
लेकिन सब कुछ
कभी ख़त्म नहीं होता।[16]

अंत में मैं तो यही कहूँगा कि प्रस्तुत काव्य- संग्रह में कवयित्री ने जीवन के प्रत्येक पक्ष को बहुत सुंदर ढंग से अभिव्यक्त किया है। पाठक सहज ही उनकी कविताओं के साथ तादात्म्य स्थापित कर लेता है। पंजाब की उभरती हुई इस कवयित्री का पंजाब के साहित्यकारों में विशेष स्थान होगा।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. डॉ. सुमन सचदेवा, संग्रह 'मैं कहाँ?' नाभा : प्रीत पब्लिकेशन 2023. पृष्ठ 35
2. वही पृष्ठ 35
3. वही पृष्ठ 26
4. वही पृष्ठ 96
5. वही पृष्ठ 62
6. वही, पृष्ठ 62
7. वही पृष्ठ 65
8. वही पृष्ठ 37
9. वही पृष्ठ 37
10. वही पृष्ठ 39
11. वही पृष्ठ 78
12. वही पृष्ठ 79
13. वही पृष्ठ 60
14. वही पृष्ठ, 101
15. वही पृष्ठ, 99
16. वही पृष्ठ 75

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य पर सोशल मीडिया का प्रभाव

स्वाती सिंह
शोध छात्रा, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
Email- swatiakb@bhu.ac.in Mobile no. 8318214182

सोशल मीडिया का किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभावों की गहराई से पता करता है। इसमें यह अध्ययन किया गया है कि किस प्रकार किशोर विभिन्न सोशल मीडिया प्लेटफ़ॉर्म्स से अत्यधिक रूप से जुड़ चुके है और यह जुड़ाव उनकी मानसिक अवस्था को कैसे प्रभावित कर रहा है। चर्चा में 'फोमो' (FOMO) कुछ छूट जाने का भय और सोशल मीडिया की लत जैसी समस्याओं को विशेष रूप से उजागर किया गया है। हालांकि, सोशल मीडिया के सकारात्मक पक्ष की भी चर्चा की गई है। इसमें बताया गया है कि यह प्लेटफ़ॉर्म ऑनलाइन सहयोगी समुदायों के निर्माण और मानसिक स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता फैलाने में एक प्रभावशाली भूमिका निभा रहा है। यह अध्ययन एक ऐसी रूपरेखा प्रस्तुत करता है, जो किशोरों को सोशल मीडिया का संतुलित और महत्वपूर्ण उपयोग करने हेतु सक्षम बनाती है। इस रूपरेखा के अंतर्गत सुझाए गए उपाय न केवल युवाओं को सोशल मीडिया का उचित तरह उपयोग सिखाते हैं, बल्कि इससे उत्पन्न संभावित मानसिक जोखिमों को भी कम करने में सहायक होते हैं।

कीवर्ड - सोशल मीडिया, किशोर, मानसिक स्वास्थ्य जागरूकता, ऑनलाइन सहायता।

परिचय

किशोरावस्था एक अत्यधिक परिवर्तनशील विकासात्मक चरण के रूप में देखा जाता है जिसे अक्सर बचपन और वयस्कता के बीच की महत्वपूर्ण संक्रमणकालीन अवधि के रूप में जाना जाता है। इस समय आत्म-पहचान सहित कई परिवर्तन होते हैं, जिसमें जटिल सामाजिक संबंधों का विकास और भावनात्मक दृष्टिकोण का महत्वपूर्ण विस्तार होता है। यह एक गतिशील चित्रफलक के रूप में कार्य करता है जहाँ लोग अपनी आत्म-अवधारणा का पता लगाते है इस दौरान अपने साथियों के साथ बातचीत करने और अपनी आत्म-खोज की यात्रा शुरू करते हैं। हाल के वर्षों में सोशल मीडिया प्लेटफार्मों के आगमन ने उस वातावरण को मौलिक रूप से बदल कर रख दिया है जिसमें किशोर कई महत्वपूर्ण परिवर्तनों से गुजरते हैं, अपने विकास और दैनिक सामुदायिक बातचीत से लोगों में जुड़ाव और संचार के तरीको की गतिशीलता को महत्वपूर्ण रूप प्रदान करता हैं। (Olabiyi, 2024)

डिजिटल युग ने त्वरित साझाकरण, जुड़ाव और नेटवर्किंग के लिए प्लेटफार्मों के उपयोग में वृद्धि की है, जिससे ऑनलाइन सहायता और मानसिक स्वास्थ्य जागरूकता के लिए प्रभावकारी मंच मिला है। यह अध्याय सोशल मीडिया के उपयोग और किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य के बीच जटिल संबंधों की पड़ताल करता है। किशोरों द्वारा सोशल मीडिया प्लेटफार्मों का उपयोग उनकी आत्म-धारणा, सामाजिक संबंधों और भावनाओं को प्रभावित करने में अहम भूमिका निभाता है। यह विश्लेषण परस्पर जुड़ाव के सकारात्मक और नकारात्मक दोनों पहलुओं को शामिल करता है, जो लेख को पेचीदगियों की पूरी

समझ प्रदान करता है। यह लेख कई दृष्टिकोण से किशोर के मानसिक स्वास्थ्य पर सोशल मीडिया के प्रभाव की पड़ताल करता है। हम जांच करते हैं कि इन प्लेटफार्मों में सकारात्मकता प्रदान करने की क्षमता कैसी है, सकारात्मक परिणामों में मानसिक स्वास्थ्य जागरूकता बढ़ाना और सहायक ऑनलाइन समूह बनाना शामिल है। सोशल मीडिया मूलरूप को बढ़ावा देता है और सहायक ऑनलाइन समुदायों के माध्यम से किशोरों को अपनेपन की भावना प्रदान करता है। (Charmaraman, 2023) किशोरों को एफओएमओ (FOMO) जैसी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, जो किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य को नकारात्मक रूप से प्रभावित करते हैं। इस लेख का उद्देश्य सोशल मीडिया और किशोर के मानसिक स्वास्थ्य के बीच संबंधों की व्यापक समझ विकसित करना है। हमारा लक्ष्य किशोरों, शिक्षकों, माता-पिता सहित हितधारकों को एक डिजिटल वातावरण प्रदान करने के साथ काम करने में सक्षम बनाना भी है जो लचीलापन, सशक्तिकरण और समग्र मानसिक स्वास्थ्य को बढ़ावा देता है।

किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य पर सोशल मीडिया का प्रभाव

किशोर अपनी आत्म-धारणा, पारस्परिक बातचीत और मनोवैज्ञानिक कल्याण को आकार देने के लिए सोशल मीडिया पर बहुत अधिक भरोसा करते हैं।

फियर ऑफ मिसिंग आउट (FOMO)

सोशल मीडिया के ज्यादा उपयोग ने एक ऐसी घटना को जन्म दिया है जिसे फियर ऑफ मिसिंग आउट (एफओएमओ) के रूप में जानते है जो किशोरों में अपर्याप्तता और चिंता की भावना पैदा करता है। सोशल मीडिया पर साथियों की गतिविधियों, अनुभवों और बातचीत, निरंतर अपडेट के परिणाम स्वरूप एफ. ओ. एम. ओ. उत्पन्न होता है। किशोर उन गतिविधियों और क्षणों से अपने आपको अलग महसूस करने लग जाते हैं जिन क्रियाकलाप से दूसरों को आनंद आता है। सामाजिक समूहों या साथी समूह की छुट्टियों और अनुभवों की तस्वीरें देखने से किशोरों को अलग-थलग महसूस होने लग जाता है। फियर ऑफ मिसिंग आउट (FoMo) एक मनोवैज्ञानिक स्थिति होती है जिसमें दूसरों के अनुभवों या अवसरों को देख कर अशांति का अनुभव होता है। (Fahmi Azzaki, 27 क्मब 2024)

एफ. ओ. एम. ओ. किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य पर गहरा प्रभाव डालता है। यह उदासी, अपर्याप्तता और अकेलेपन की भावना, कुछ छूट जाने का डर इन सब से उत्पन्न होता हैं। दूसरों के द्वारा जो रोमांचक घटनाएँ सोशल मीडिया पर साझा की जाती हैं, उसे लेकर किशोर सोच सकते है कि उनसे तुलना करके उनका अपना जीवन दिलचस्प नहीं हो सकता है। इस दृष्टिकोण के परिणामस्वरूप उनके सामाजिक अलगाव की भावना बढ़ जाती है, जो उनके आत्मसम्मान को भी नुकसान पहुंचा सकती है। इसके अलावा, अपने बारे में एक विषम दृष्टिकोण और असंतोष की निरंतर भावना लगातार अपने जीवन की तुलना साथियों से करने के परिणामस्वरूप हो सकती है। खासकर किशोरों में नए अनुभवों से खुद का पीछे छूट जाने के डर से उत्पन्न चिंता होती है। ये भावनात्मक स्वास्थ्य को नकारात्मक रूप से प्रभावित करती है, जिससे चिंता, अवसाद और असंतोष की भावनाएं पैदा होती हैं। (Lianawati, 2023)

किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य पर एफ. ओ. एम. ओ. का व्यापक प्रभाव पड़ता हैं। लोगों से दूर होने का डर, अकेलेपन, निराशा और अपर्याप्तता की भावनाओं को जन्म देता है। किशोर दूसरों से तुलना करके वो अपने जीवन को बेकार मान लेते हैं। लोगों द्वारा सोशल मीडिया पर साझा किए गए रोमांचक पल किसी के आत्मसम्मान को कम कर सकती है और सामाजिक अलगाव को बढ़ा दे सकती है। FOMO का अनुभव करने वाले व्यक्ति अक्सर अपर्याप्तता और आत्मसम्मान की कमी की भावनाओं के बारे में बताते हैं, जो मानसिक स्वास्थ्य के मुद्दों को लोगों में बढ़ा सकती हैंप (Royantara, 2025)

लत और मानसिक स्वास्थ्य

सोशल मीडिया की लत में वृद्धि किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव के बारे में चिंता पैदा करती है। जो संकेतों, कारणों और प्रभावों पर प्रकाश डालता है अत्यधिक सोशल मीडिया का उपयोग मनोवैज्ञानिक कल्याण को प्रभावित करता है, और संभावित खतरों और प्रबंधन के अवसरों को उजागर भी करता है। सोशल मीडिया के पोस्ट पर लाइक और प्रतिक्रियाओं के माध्यम से तेजी से संतुष्टि प्रदान करने वाला उपकरण बन गया है, जिससे यह किशोर उपयोगकर्ताओं को आकर्षित करता है। लगातार प्रतिक्रिया मस्तिष्क में डोपामाइन प्रतिक्रियाओं को सक्रिय करता है, जिससे एक इनाम प्राप्त की खुशी की प्रक्रिया का निर्माण होता है जो सोशल मिडिया के नशे की लत के व्यवहार को बढ़ावा देती है। किशोर सोशल मीडिया नशे की लत का उपयोग करते हैं, उनमें चिंता, अवसाद और अकेलेपन होने की संभावना अधिक होती है। (Kuss DJ, 2017)

मानसिक स्वास्थ्य के लिए सोशल मीडिया की लत के प्रभाव चिंताजनक हैं। सोशल मीडिया का अत्यधिक उपयोग संबंधों, शैक्षणिक प्रदर्शन और सामाजिक अलगाव की भावनाओं को नकारात्मक रूप से प्रभावित करती है। मांग, पसंद और टिप्पणियों के बारे में अधूरी उम्मीदें खालीपन और असंतोष की भावनाओं को जन्म दे सकती हैं। सोशल मीडिया लत नींद को बाधित कर सकती है, ध्यान केंद्रित करने में दिक्कत कर सकती है और तनाव बढ़ा सकती है। सोशल मीडिया की लत का प्रबंधन करने के लिए ज्ञान, जागरूकता और संयम की आवश्यकता होती है। किशोरावस्था में बच्चे अपने परिवार और शिक्षक सभी से संकेतकों और इसके महत्व को सीखने से लाभान्वित होते हैं। उचित सीमाएँ बना कर उपयोगकर्ताओं को नियमित रूप से स्क्रीन से अलग होने के लिए प्रोत्साहित करके सोशल मीडिया के नशे की लत को रोक सकते हैं। आमने-सामने संपर्क, रुचियों और एक संतुलित जीवन शैली को बढ़ावा देने से किशोरों को आभासी दुनिया के बजाय अपने मानसिक और भावनात्मक कल्याण पर ध्यान केंद्रित करने में मदद मिल सकती है।

मानसिक स्वास्थ्य जागरूकता और ऑनलाइन सहायता का सकारात्मक पहलू

मानसिक स्वास्थ्य से पीड़ित किशोरों को ऑनलाइन समूहों में आभासी सहायता मिल सकती है। डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म लोगों को बिना डर के बिना अपने अनुभवों, चिंताओं और सफलताओं को साझा करने की अनुमति देते हुए अपनापन की भावना को बढ़ावा देते हैं। (Tu W, 2022) सोशल मीडिया मानसिक स्वास्थ्य जागरूकता बढ़ाने और ऑनलाइन समर्थन प्रणालियों को बढ़ावा देने में मदद कर सकता है। ऑनलाइन सहकर्मी सहायता मार्गदर्शन और पुष्टि के लिए एक मंच प्रदान करके किशोरों में अवसादग्रस्तता के लक्षणों को प्रभावी ढंग से कम करता है। (Vannucci A, 2019) इसके अलावा, ऑनलाइन मंचों में गुमनामी किशोरों के लिए एक सुरक्षित क्षेत्र प्रदान करती है जो पारंपरिक आमने-सामने की बातचीत में खुलकर बात करने में संकोच करते हैं।

सोशल मीडिया प्रभावी रूप से मानसिक स्वास्थ्य जागरूकता अभियानों को बढ़ावा देने का एक मंच प्रदान करता है। सोशल मीडिया व्यक्तिगत अनुभवों, गवाही और तथ्यों को साझा करके मानसिक स्वास्थ्य के बारे में खुली चर्चा को बढ़ावा देता है। किशोर संसाधनों, सहायता और सामना करने के तरीकों के बारे में जानकारी प्रप्त कर सकते हैं। यह सक्रिय प्रारंभिक हस्तक्षेप को बढ़ावा दे सकते है और मानसिक स्वास्थ्य संबंधी चिंताओं को कम कर सकते है। मानसिक स्वास्थ्य के लिए सोशल मीडिया के लाभों को अधिकतम करने के लिए, किशोरों को सक्रिय रूप से एक सहायक डिजिटल नेटवर्क स्थापित करना चाहिए। शिक्षक अपने पाठ्यक्रमों में डिजिटल नागरिकता निर्देश शामिल कर सकते हैं, जिससे छात्रों को नैतिक और जिम्मेदार ऑनलाइन गतिविधि के लिए प्रोत्साहित किया जा सके। माता-पिता अपने बच्चों के ऑनलाइन उपयोग की निगरानी कर सकते हैं और उनके अनुभवों के बारे में खुली चर्चा को प्रोत्साहित कर सकते हैं। मानसिक स्वास्थ्य चिकित्सक सामना करने और उपचार प्राप्त करने के लिए साक्ष्य-आधारित तकनीक प्रदान करने के लिए सोशल मीडिया का उपयोग कर सकते हैं। सोशल मीडिया के सकारात्मक प्रभाव को पहचानना एक आभासी वातावरण को बढ़ावा दे सकता है जो किशोर के मानसिक

स्वास्थ्य और आपसी समर्थन को बढ़ावा देता है। किशोर मानसिक स्वास्थ्य पर सोशल मीडिया का प्रभाव विविध है। किशोरों को कई डिजिटल खतरों और दबावों का सामना करना पड़ता है, सोशल मीडिया के अच्छे प्रभाव को कम करके नहीं आंका जाना चाहिए। ऑनलाइन समर्थन नेटवर्क और मानसिक स्वास्थ्य जागरूकता पहल समझ, सहानुभूति और सशक्तिकरण को बढ़ावा देने के लिए मंच की क्षमता को प्रदर्शित करते हैं। 21वीं सदी में किशोरों के मानसिक कल्याण में सहायता करने के लिए, समाज उचित ऑनलाइन व्यवहार को बढ़ावा दे सकता है, मीडिया साक्षरता को बढ़ावा दे सकता है और अच्छे बदलाव के लिए डिजिटल जुड़ाव की क्षमता का उपयोग कर सकता है।

सोशल मीडिया उपयोग के लिए सीमाएँ निर्धारित करना

अत्यधिक उपयोग और बुरे परिणामों को रोकने के लिए किशोरों को सोशल मीडिया के साथ उचित सीमा निर्धारित करने के लिए प्रोत्साहित करना महत्वपूर्ण है। किशोरों को अपनी सोशल मीडिया गतिविधि के लिए समय सीमाएं स्थापित करने से लाभ हो सकता है। सीमा निर्धारित करने से किशोरों को अपने ऑनलाइन और ऑफलाइन जीवन के बीच एक स्वस्थ संतुलन बनाए रखने में मदद मिलती है। किशोरों के लिए उचित स्क्रीन समय सीमाओं को निर्धारित करने की आवश्यकता पर जोर दिया गया जाना चाहिए, साथ ही गैजेट के उपयोग को प्रतिबंधित करने जैसे उपायों को प्रोत्साहित करना चाहिए। (Hinduja S, 2018) सोशल मीडिया के सीमित उपयोग से मनोवैज्ञानिक कल्याण को बढ़ावा मिल सकता है और किशोरों में निराशा और चिंता के लक्षणों को कम किया जा सकता है। शिक्षक और अभिभावक स्वस्थ डिजिटल व्यवहार को मॉडलिंग और बढ़ावा देने से किशोरों को अपने गैजेट्स और सोशल मीडिया के साथ सकारात्मक बातचीत करने में मदद मिल सकती है। (Primack BA, 2017)

सकारात्मक ऑनलाइन समुदायों को बढ़ावा देना

सोशल मीडिया मानसिक स्वास्थ्य वार्तालाप के लिए स्वस्थ ऑनलाइन समुदायों को बढ़ावा देना किशोरों को अपने अनुभवों को साझा करने और मार्गदर्शन लेने के लिए एक सुरक्षित और सहायक वातावरण प्रदान कर सकता है। ऑनलाइन प्लेटफॉर्म जो मानसिक स्वास्थ्य जागरूकता बढ़ाते हैं और साक्ष्य-आधारित उपकरण प्रदान करते हैं, किशोरों के कल्याण में महत्वपूर्ण सुधार कर सकते हैं।ये मंच विश्वसनीय जानकारी, मुकाबला करने के कौशल और उपकरण प्रदान करते हैं। (Tu W, 2022)

निष्कर्ष

यह लेख किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य पर सोशल मीडिया के दोहरे प्रभाव जिसमें FOMO और मानसिक स्वास्थ्य जागरूकता के बारे में एक संतुलित दृष्टिकोण प्रदान करता है, जिसमें संभावित लाभों और जोखिम दोनों को पहचाना जा सकता है। यह नकारात्मक पहलुओं को कम करते हुए सकारात्मक पहलुओं को बढ़ावा देता है। सोशल मीडिया संज्ञानात्मक कार्यों जैसे ध्यान और सूचना के प्रसंस्करण प्रदान करता है और किशोरों को निरंतर चेतावनी और ऑनलाइन उपलब्ध बड़ी मात्रा में जानकारी से विचलित होने से बचाता है, जो उनके शैक्षणिक प्रदर्शन और उनके आलोचनात्मक सोच के कौशल को बढ़ता है। सामाजिक नेटवर्क इस बात को प्रभावित करते हैं कि किशोर अपने साथियों के साथ कैसे जुड़ते हैं। जबकि प्रौद्योगिकी लोगों को जुड़ने और समर्थन नेटवर्क बनाने में मदद कर करती है, इसके परिणामस्वरूप सतही संबंध भी बन जाते हैं और आमने-सामने संचार कौशल में कमी आती है। यह द्विभाजन सामाजिक विकास पर सामाजिक नेटवर्क के प्रभाव की जटिलताओं को दर्शाता है। सामान्य तौर पर, निष्कर्ष बताते हैं कि सामाजिक नेटवर्क का किशोरों पर सकारात्मक और नकारात्मक दोनों प्रभाव पड़ता है। हालाँकि यह आत्म-अभिव्यक्ति और सामुदायिक विकास के लिए एक मंच प्रदान करता है, लेकिन यह उन चिंताओं को भी प्रस्तुत करता है जिन्हें शिक्षा और जागरूकता के माध्यम से संबोधित किया जाना चाहिए।

References

- Charmaraman, L. (2023). Social media and adolescent mental health.
- Fahmi Azzaki, U. H. (27 Dec 2024). Analisis Perilaku Fear of Missing Out (FoMO) di Instagram dalam Perspektif Hadis. Institut Agama Islam Faqih Asy'ari Kediri, Vol. 5, Iss: 3, pp 445-461.
- Hinduja S, P. J. (2018). Cyberbullying: A review of the legal issues facing educators. Preventing School Failure . Alternative Education for Children and Youth.
- Kuss DJ, G. M. (2017). Online social networking and addiction-A review of the psychological literature. International Journal of Environmental Research and Public Health., 8(9):3528-3552.
- Lianawati, A. (2023). Fear of Missing Out (FoMO) Causes Anxiety in Adolescents. Journal of Education and Counseling.
- Olabiyi, O. (2024). Effects of Social Media on Teens.
- Primack BA, S. A. (2017). Social media use and perceived social isolation among young adults in the U.S. . Emerging Trends in the Social and Behavioral Sciences. .
- Royantara, M. O. (2025). Peran FOMO (Fear of missing out) dalam Meningkatkan Kecemasan Terhadap Media Sosial pada Generasi Z. Institut Agama Islam Nasional Laa Roiba Bogor.
- Tu W, J. H. (2022). Peer victimization and adolescent Mobile social addiction: Mediation of social anxiety and gender differences. International Journal of Environmental Research and Public Health. .
- Vannucci A, O. C. (2019). Social media use subgroups differentially predict psychosocial well-being during early adolescence. . Journal of Youth and Adolescence.

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

ठाकुर का कुआँ : दलित जीवन की त्रासदी

शोध-निर्देशक
प्रो. (डॉ.) रामकृष्ण
हिन्दी विभाग, पं. दीनदयाल उपाध्याय,
राजकीय बालिका स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सेवापुरी, वाराणसी।

शोधार्थिनी
रीता मौर्य
हिन्दी विभाग, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ,
वाराणसी।

शोध संक्षेप

भारतीय समाज में जातिवादी व्यवस्था बड़ी जटिल है। प्राचीन भारतीय समाज में वर्णव्यवस्था की व्यवस्था थी। जिससे भारत में ऊँच-नीच का भेद होने लगा। सवर्ण जातियों ने दलित जाति के साथ बहुत शोषण किया। छूआछूत की भावना भारत में पैदा हुई। इसी को लेकर हिन्दी साहित्य के प्रसिद्ध कथाकार प्रेमचन्द ने 'ठाकुर का कुआँ' नामक कहानी लिखी, जिसमें उन्होंने दिखाया है कि एक दलित बीमार है और उसको प्यास लगी है, लेकिन घर में पानी नहीं है। उसकी पत्नी रात को ठाकुर के कुएँ से पानी लाने के लिए कहती है, लेकिन डर है कि कहीं ठाकुर ने देख लिया तो - गंगी बोली- ''यह पानी कैसे पियोगे? न जाने कौन जानवर मरा है। कुँए से मैं दूसरा पानी लाए देती हूँ। जोखू ने आश्चर्य से उसकी ओर देखा- दूसरा पानी कहाँ से लायेगी?''

'ठाकुर और साहू के दो कुएँ तो हैं। क्या एक लोटा पानी न भरने देंगे?' हाथ-पाँव तुड़वा आयेगी और कुछ न होगा। बैठ चुपके से। ब्राह्मन- देवता आशीर्वाद देंगे ठाकुर लाठी मारेंगे, साहू जी एक के पाँच लेंगे। गरीबों का दर्द कौन समझता है। हम तो मर भी जाते हैं, तो कोई दुआर पर झाँकने नहीं आता, कंधा देना तो बड़ी बात है। ऐसे में लोग कुएँ से पानी भरने देंगे?'' इन शब्दों में कड़वा सत्य था। गंगी क्या जवाब देती।

इस कहानी में प्रेमचन्द ने अछूतों की सोचनीय परिस्थिति का वर्णन किया है। गंगी दलित होने के कारण ठाकुर के कुएँ से पानी नहीं भर सकती। वह व्यथित होकर सवर्णों की ऊँच-नीच और भेदभाव की धारणा की तीव्र आलोचना करती है। इस संदर्भ में गंगी आत्मकथन करती है - ''हम क्यों नीच हैं और यह लोग क्यों ऊँच हैं? इसलिए कि ये लोग गले में तागा डाल लेते हैं? यहाँ तो जितने हैं, एक से एक छँटे हैं, चोरी ये करें, जाल-फरेब ये करें, झूठे मुकदमे ये करें। अभी इस ठाकुर ने तो उस दिन बेचारे गड़रिये की एक भेंड़ चुरा ली थी और बाद को मारकर खा गया। इन्हीं पंडित के घर में तो बारहों मास जुआ होता है। यही साहू जी तो घी में तेल मिलाकर बेचते हैं। काम करा लेते हैं, मजूरी देते नानी मरती है किस बात में हैं हमसे ऊँचे?''

उपर्युक्त संदर्भ यह स्पष्ट कर देता है कि दलितों पर एक ओर जाति का दबाव है और दूसरी ओर पूँजीपतियों की वर्चस्व की तानाशाही है।

'ठाकुर का कुआँ' के जोखू में भी सवर्णों के प्रति आक्रोश देखा जा सकता है। इसीलिए जोखू बीमारी की अवस्था में भी ठाकुर के कुएँ से पानी लाने के लिए अपनी पत्नी को मना करता है। वह कहता है ''हाथ-पांव तुड़वा आएगी और कुछ न होगा बैठ चुपके से।''

प्रस्तुत कहानी में गंगी और जोखू की विवशता इसी सामाजिक छूआछूत और ऊँच-नीच पर टिकी हुई है। ठाकुर का कुआँ कहानी का शीर्षक इसी बात को सार्थक करता है जहाँ बड़े-बड़े समाज के शोषक ऐशो आराम का सामान जुटाते हैं वहीं पर एक गरीब मूलभूत आवश्यकता पानी भी नहीं पाता। कितनी सोचनीय स्थिति है।

प्रेमचन्द ने कहानी के माध्यम से बड़ी जातियों की हेकड़ी को दर्शाया है। देश की बड़ी-बड़ी सम्पत्तियों पर इन्हीं बड़ी जातियों का अधिकार है। ये लोग जमींदार हैं तथा किसान खेती करके इनके घर को भरे। आज भी जाति का बोलबाला भारत में कायम है। राजनीति के क्षेत्र में भी जातिगत भेदभाव है। कहानी में प्रेमचन्द लिखते हैं– ''ठाकुर के कुएँ पर कौन चढ़ने देगा? दूर ही से लोग डांट बताएंगे। साहू का कुआँ गांव के उस सिरे पर है, परन्तु वहाँ भी कौन पानी भरने देगा।'' प्रेमचन्द ने 'ठाकुर का कुआँ' कहानी में वर्ग विषमता वाले अन्तर्संबंधों की एक पूरी दुनिया का यथार्थ हमारे सामने प्रस्तुत करते हैं। एक तरफ बीमार जोखू और उसकी पत्नी गंगी है, बीच में सामंती व्यवस्था के सम्पूर्ण अभिप्राय के प्रतीक के रूप में ठाकुर का कुआँ है। उसके पास ही कुएँ का रक्षण करने वाले स्वयं ठाकुर साहब हैं। कुएँ की जगत के पास बैठी हुई गंगी करीब से गुजरते हुए प्रेमचन्द के विचार हैं और अंत में जोखू के सामने विसंगतिपूर्ण नियति है। 'ठाकुर का कुआँ' कहानी में दलित वर्ग की मूलभूत आवश्यकता (पानी) की समस्या का चित्रण हुआ है। पानी जो जीवित रहने के लिए परम आवश्यक है उसके लिए संघर्ष करने वाले दम्पत्ति गंगी और जोखू की कहानी ने जातिभेद की समस्या पर पाठकों के मन में जागरूकता उत्पन्न की है। प्रेमचन्द ने 'ठाकुर का कुआँ' कहानी के माध्यम से हमारे समाज में व्याप्त जातिप्रथा की सबसे घृणित परम्परा छुआछूत के कारण तिरस्कार अपमान और मानवीय अधिकारों से वंचित जीवन जी रहे अछूतों की सामाजिक और आर्थिक स्थिति को बयां किया है। 'ठाकुर का कुआँ' स्वच्छ पानी के लिए तरसते अछूत जीवन की वास्तविक कहानी है। प्रेमचन्द ने अपनी रचनाओं में समाज की सामाजिक-आर्थिक विसंगतियों को तो उजागर किया ही, शायद पहली बार शोषित, दलित एवं गरीब वर्ग को नायकत्व प्रदान किया प्रेमचंद ने 'ठाकुर का कुआँ' कहानी के माध्यम से अछूतों की कठिनाइयों का और उच्च जातियों द्वारा उन पर किए जाने वाले अत्याचार का खुलकर वर्णन किया है। प्रेमचंद ने इस कहानी के माध्यम से भारतीय समाज में व्याप्त जातिप्रथा की सबसे घृणा पूर्ण परम्परा छुआछूत के कारण तिरस्कार, अपमान और मानवीय अधिकारों से वंचित जीवन जी रहे अछूतों की सामाजिक और आर्थिक स्थिति को अभिव्यक्त किया है। 'ठाकुर का कुआँ' स्वच्छ पानी के लिए तरसते अछूत जीवन की ऐसी कहानी है जो यह सोचने पर मजबूर कर देती है कि क्या अछूतों को हमारे समाज में स्वच्छ पानी पीने का भी अधिकार नहीं है। ठाकुर का कुआँ कहानी में चित्रित घटना मात्र एक घटना नहीं है बल्कि दलित जीवन की त्रासदी को अभिव्यक्त करती है। त्रासदी यह है कि अछूतों को ठाकुर या साहू के कुएँ से पानी भरने का भी अधिकार नहीं है। कहानी पानी की समस्या को लेकर गहन चिंता में डूबे अछूत पति-पत्नी, जोखू और गंगी को लेकर शुरू होती है। जातिप्रथा और छुआछूत के कारण अछूत कैसी दुर्दशा का शिकार है कि उसे अपनी बुनियादी जरूरतों के लिए सवर्णों की दया पर निर्भर रहना पड़ता है। ठाकुर का कुआँ कहानी से यह साफ उजागर होता है कि जाति-प्रथा कैसी अमानवीय धार्मिक अवधारणा है, जो कि मानव-मानव के बीच इस कदर असमानता व भेदभाव का विषैला बीज बोती है जिसके कारण आज तक जाति-व्यवस्था न केवल कायम है बल्कि छुआछूत के कारण देश की आबादी की एक चौथाई से ज्यादा जनसंख्या अपनी ही भूमि पर बहिष्कृत की तरह जीवन जीने के लिए बाध्य है। अछूतों की सम्पत्ति अर्जित करने और सम्पत्ति संग्रह का अधिकार नहीं है। यह स्पष्ट करने के लिए जंगल जमीन पर किसी प्रकार के अधिकार से उसे वंचित किया। ये प्राकृतिक संसाधन केवल जीवन की आवश्यकता ही नहीं है बल्कि इसके एकाधिकार द्वारा सम्पत्ति और सत्ता भी हासिल होती है। धर्मग्रन्थ यह भी कहते हैं कि पिछले जन्म में किये गये बुरे कर्मों के कारण इस जन्म में व्यक्ति अछूत के रूप में जन्म लेता है। इसलिए पूर्व जन्म के फलस्वरूप अब अछूत को इस जन्म में तीनों उच्च वर्गों की सेवा करना और बदले में उत्पीड़न शोषण, अभाव, अपमान और तिरस्कार झेलना पड़े तो इसे अपना भाग्य समझना चाहिए। अछूतों के प्रति सवर्ण समुदाय किस कदर अमानुषिक और असंवेदनशील हैं इसकी हजारों हजार घटनाएं हमारे इतिहास के पन्नों पर बिखरी पड़ी है। मूलभूत अधिकारों से वंचित अछूत समाज हजारों सालों से बहिष्कृतों का जीवन जी रहा है। पानी और अन्न के लिए वह हमेशा सवर्ण समाज पर निर्भर रहा है क्योंकि उत्पादन के साधनों

पर सवर्णों की सत्ता रही। जिस सवर्ण समुदाय की सत्ता में उत्पादन प्रणाली और प्राकृतिक, संसाधन रहे हैं, उन्हीं के अधीन रहकर ही अछूतों को जीना पड़ रहा है। प्रेमचन्द हिन्दी के प्रगतिशील लेखक संघ के एक सम्मानित सदस्य थे और प्रगतिशील विचारधारा से विकसित चेतना दृष्टि से उन्होंने दलितों के साथ हो रहे अन्याय को रचनात्मक अभिव्यक्ति दी है। जब डॉ. अम्बेडकर ने दलित अस्मिता के लिए दलित मुक्ति संघर्ष छेड़ा था। जातिभेद के कारण दलितों के सदियों से हो रहे शोषण और अपमान के विरोध में उन्होंने सामाजिक आन्दोलन का सूत्रपात किया। महाराष्ट्र के महाड़ गांव में 1927 में चवदार तालाब पर मानव अधिकारों को प्राप्त करने के लिए अभिजात्य सनातनी वर्ग के विरोध में पहला ऐतिहासिक संघर्ष छेड़कर दलितों में चेतना जगाकर उनमें अपने अधिकारों के प्रति अहसास जगाया। हजारों की संख्या में अछूतों ने डॉ. आंबेडकर के नेतृत्व में नासिक के कालाराम मंदिर प्रवेश का सत्याग्रह किया। निश्चित तौर पर तो नहीं, लेकिन इस आन्दोलन के प्रभाव से प्रेमचंद के दृष्टिकोण में जरूर परिवर्तन आया दिखाई देता है जिसे हम उनकी दलित जीवन संबंधी कहानियों में आई नयी चेतना के रूप में देख सकते हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

1. प्रेमचन्द की चर्चित कहानियाँ भाग-2 प्रकाशकः सर्वसेवा संघ-प्रकाशन राजघाट, वाराणसी-221001 I.S.B.N. 978-93-83982-03-5
2. Shabd- Braham http: // shabdbraham.com
3. IJFMR https://www.ijfrm.com

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Ectoparasitic Infestations in Dairy Cows: Their Influence on Growth, Weight Gain, and Milk Production in Purvanchal

Ramesh Chandra Yadav[1] Dr. Satyendra Kumar Yadav[2] Dr. Kunvar Dileep Pratap Singh[3] Dr. Ajay Kumar Singh[4]
1- Research Scholar (Department of Zoology, Rashtriya P.G. College, Jamuhai)
2- Research Guide (Department of Zoology, Rashtriya P.G. College, Jamuhai)
3- Head Department of Zoology (Rashtriya P.G. College, Jamuhai)
4- Head Department of Zoology (R.K. Talreja P.G. College, Ulhasnagar, Mumbai)

Abstract

The study also assessed the impact of these infestations on animal health and productivity by analyzing weight variations and milk production data before and after parasite control measures. The findings suggest a significant negative correlation between ectoparasite infestation and the growth, weight gain, and milk production of dairy cows. The results also emphasize the importance of effective control measures, such as regular pest management and the use of acaricides, in improving cattle productivity. This research highlights the need for integrated pest management strategies to control ectoparasites in dairy farming and recommends further studies to explore sustainable and economically viable control methods.

Keywords: Ectoparasites, Dairy Cows, Purvanchal, Tick Infestation, Lice, Horn Flies, Milk Production, Weight Gain, Pest Management, Veterinary Parasitology, Dairy Farming, Livestock Productivity, Acaricides, Integrated Pest Management, Animal Health.

Introduction

Ectoparasitic infestations in livestock, especially dairy cows, have become a major concern for farmers across the globe, not just in tropical and subtropical regions but also in temperate zones. The Purvanchal region of Uttar Pradesh, a predominantly agricultural area, is no exception to this issue. Dairy farming in Purvanchal plays an integral role in the livelihoods of many farmers, who rely on cattle for milk production, an important source of nutrition and income. However, the presence of ectoparasites such as ticks, lice, and mites significantly impacts the overall productivity and health of dairy cows, making it a major area of concern for the region's dairy industry. Ectoparasites are known to affect cows in several ways, causing not only direct harm but also inducing systemic stress that can negatively influence growth rates, weight gain, and milk yield. [1], [2], [5].

These infestations can cause significant metabolic stress, leading to a reduction in feed intake and nutrient absorption. As a result, cows often experience stunted growth and poor weight gain, while

also exhibiting a decline in milk production. The challenge for farmers in Purvanchal, therefore, lies in not only understanding the biology and seasonal patterns of these ectoparasites but also in finding effective strategies for controlling and mitigating their impact on dairy cow productivity [3], [4], [6].

The effects of ectoparasitic infestations on dairy cows extend beyond the immediate health concerns; they have profound economic implications for farmers. Reduced milk yield means a direct loss of income, which is critical in areas where dairy farming is a primary source of livelihood. Additionally, the costs of treatment, preventive measures, and the labor required for managing infestations further burden farmers. [7], [8], [10].

This study aims to fill that gap by investigating the prevalence and intensity of ectoparasite infestations in dairy cows in the region. It will explore how these infestations affect growth, weight gain, and milk production, and examine the seasonal and environmental factors that contribute to the occurrence and severity of these infestations. In doing so, this study will also assess the effectiveness of various control measures, including indigenous methods and modern insecticides, in reducing the burden of ectoparasites on dairy cows. Additionally, the research will look into the socio-economic consequences of ectoparasitic infestations, providing recommendations for improving cattle health and productivity in Purvanchal [9], [11], [12].

METHODOLOGY

The methodology for this study investigates the prevalence and impact of ectoparasite infestations on dairy cows in the Purvanchal region of Uttar Pradesh, focusing on the effect of these infestations on growth, weight gain, and milk production. The study was conducted across rural and semi-urban areas of Purvanchal, which are characterized by diverse farming systems and varying climatic conditions. A multi-stage random sampling technique was employed to select a sample of 200 cows from 10 villages, representing both traditional and modern dairy farming systems. Data collection involved field observations to identify ectoparasites, including ticks, horn flies, and lice. Additionally, milk production and weight gain were recorded over a 30-day period, with the health and behavior of the cows also monitored for signs of discomfort due to the infestations. Laboratory analyses were conducted to identify and quantify the species of ectoparasites and evaluate the presence of any diseases transmitted by these parasites.

Results

The study aimed to investigate the prevalence of ectoparasite infestations in dairy cows in the Purvanchal region and their impact on growth, weight gain, and milk production. The results revealed that ectoparasites, particularly ticks, horn flies, and lice, significantly affected the health and productivity of dairy cows.

1. Prevalence of Ectoparasites

The highest prevalence of ectoparasites was observed during the summer and monsoon seasons, with ticks being the most common, followed by horn flies and lice. The infestation rate varied across different farming systems, with traditional farms experiencing higher infestations compared to commercial farms.

Table 1: Seasonal Distribution of Ectoparasite Infestations in Cows

Season	Ticks (%)	Horn Flies (%)	Lice (%)	Total Infestation (%)
Summer	65	58	30	75
Monsoon	55	50	20	65
Winter	30	25	15	35

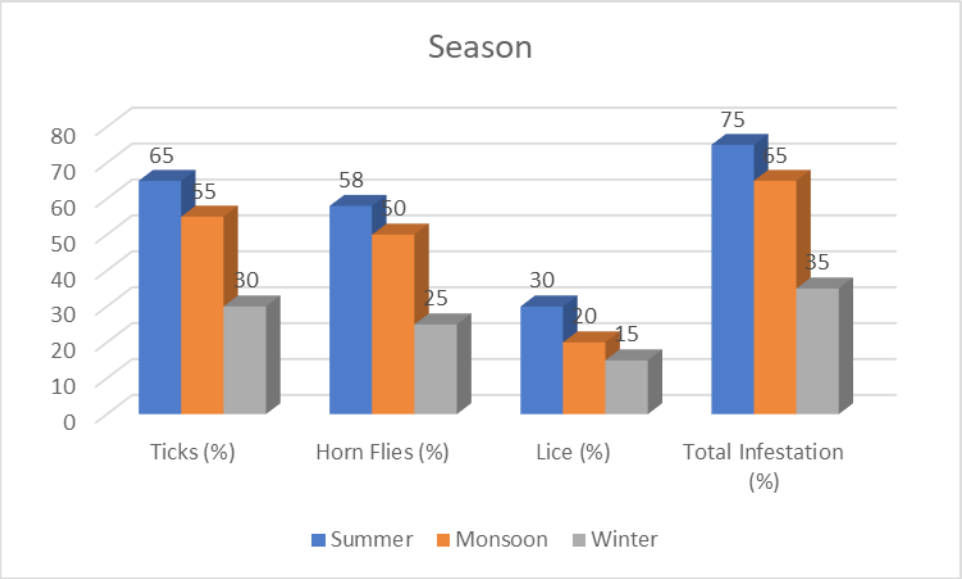

2. Impact on Growth and Weight

The study also analyzed the impact of ectoparasites on the growth and weight gain of the cows. Cows with heavy infestations showed significantly reduced weight gain compared to non-infested cows. On average, cows with ectoparasite infestations gained **1.2 kg per week**, while non-infested cows gained **2.5 kg per week**.

Table 2: Average Weight Gain in Cows with and without Ectoparasite Infestations

Group	Average Weight Gain (kg/week)
Cows with Ectoparasites	1.2
Cows without Ectoparasites	2.5

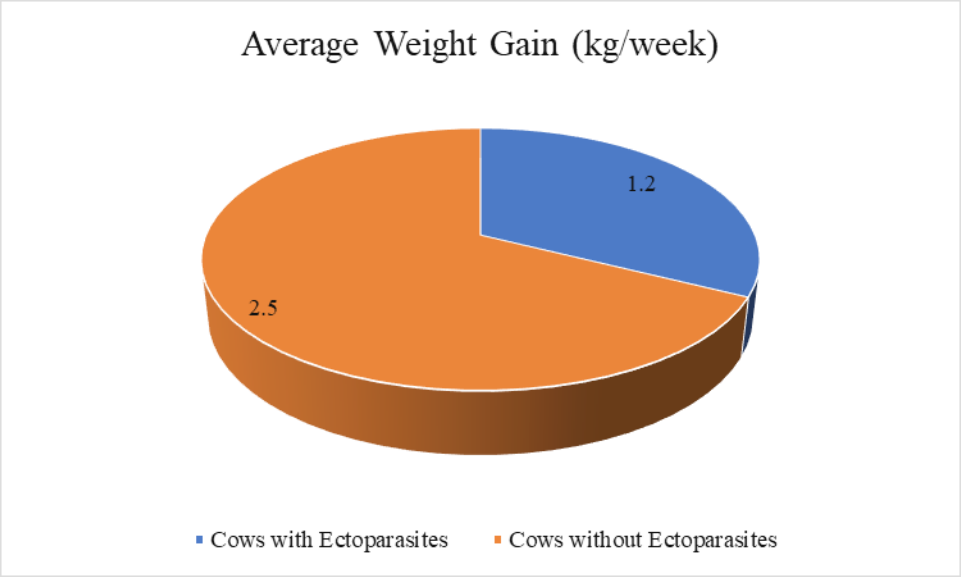

These results clearly show that ectoparasitic infestations, especially ticks and horn flies, have a significant negative impact on the growth and weight gain of dairy cows in the Purvanchal region.

Conclusion

The study found a significant negative correlation between ectoparasite load and milk production, with higher ectoparasitic infestation corresponding to lower milk yields. This negative impact on milk production is particularly concerning for dairy farmers in the Purvanchal region, as it directly affects the profitability and sustainability of dairy farming operations. The data gathered during the study indicated that cows with heavy infestations produced, on average, 12 liters of milk per day, compared to the 18 liters produced by non-infested cows. This represents a substantial loss in milk production, which is a critical aspect of dairy farming economics.

The study also examined the differences between traditional and commercial farming systems in the Purvanchal region and found that commercial dairy farms, which tended to have more advanced parasite control measures, exhibited lower rates of ectoparasitic infestations and higher milk production. The implementation of modern farming practices such as regular vaccination, parasite control programs, and improved housing conditions was associated with a reduced burden of ectoparasitic infestations and better overall productivity. In contrast, traditional farming systems, which often lacked such control measures, experienced higher levels of ectoparasite infestations and, consequently, suffered from reduced milk yields and weight gain in their cows.

In conclusion, the study underscores the critical importance of effective ectoparasite management for improving the productivity and welfare of dairy cows in the Purvanchal region. The findings of this study suggest that addressing ectoparasitic infestations through regular control measures can lead to significant improvements in both milk production and weight gain in dairy cows. For dairy farmers in the region, the implementation of comprehensive parasite management programs, including routine monitoring, the use of targeted treatments, and improvements in farm management practices,

could greatly reduce the economic losses associated with ectoparasitic infestations. Additionally, further research into the long-term effects of these infestations and the development of more sustainable and cost-effective parasite control strategies will be essential for ensuring the future success of dairy farming in the region. The study also emphasizes the need for increased awareness and training among farmers in the Purvanchal region regarding the significance of ectoparasites and their effects on livestock. By adopting integrated pest management approaches, incorporating veterinary care, and utilizing modern parasite control technologies, farmers can mitigate the impact of ectoparasitic infestations on their cows' health and productivity. In the long run, these efforts will contribute to the sustainable growth of the dairy industry in the region, improving the livelihoods of farmers and enhancing the overall quality of dairy products available to consumers.

REFERENCE

1. Wall, R.L., & Shearer, D. (2001). *Veterinary ectoparasites: biology, pathology and control* (2nd ed.). Malden, MA: Blackwell Science Ltd.
2. Garros, C., Bouyer, J., Takken, W., et al. (2018). *Pests and vector-borne diseases in the livestock industry.* Wageningen, the Netherlands: Wageningen Academic Publishers.
3. World Animal Health Organization. (2019). *OIE-Listed diseases, infections and infestations in force in 2019.* Retrieved from https://www.oie.int/en/animal-health-in-the-world/oie-listed-diseases-2019/
4. Endres, M.I., & Schwartzkopf-Genswein, K. (2018). Overview of cattle production systems. In C.B. Tucker (Ed.), *Advances in cattle welfare* (pp. 1–26). Kidlington, United Kingdom: Woodhead Publishing.
5. Henrioud, A.N. (2011). Towards sustainable parasite control practices in livestock production with emphasis in Latin America. *Veterinary Parasitology, 180*(2–11).
6. Wileman, B.W., Thomson, D.U., Reinhardt, C.D., et al. (2009). Analysis of modern technologies commonly used in beef cattle production: Conventional beef production versus non-conventional production using meta-analysis. *Journal of Animal Science, 87*, 3418–3426.
7. Narladkar, B.W. (2018). Projected economic losses due to vector and vector-borne parasitic diseases in livestock of India and its significance in implementing the concept of integrated practices for vector management. *Veterinary World, 11*, 151–160.
8. Meng, C.Q., Sluder, A.E., & Selzer, P.M. (2018). *Ectoparasites: drug discovery against moving targets*. Weinheim, Germany: Wiley-VCH.
9. Grisi, L., Leite, R.C., Martins, J.R.D.S., et al. (2014). Reassessment of the potential economic impact of cattle parasites in Brazil. *Revista Brasileira de Parasitologia Veterinária, 23*, 150–156.
10. Scasta, J.D. (2015). Livestock parasite management on high-elevation rangelands: Ecological interactions of climate, habitat, and wildlife. *Journal of Integrated Pest Management, 6*, 8–17.
11. Laing, G., Aragrande, M., Canali, M., et al. (2018). Control of cattle ticks and tick-borne diseases by acaricide in southern province of Zambia: A retrospective evaluation of animal health measures according to current One Health concepts. *Frontiers in Public Health, 6*, 45.
12. Mullen, G.R., & Durden, L.A. (2019). *Medical and veterinary entomology* (3rd ed.). San Diego, CA: Academic Press.

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

The Role of AI in Sustainable Development

Dr.Vidhya.P.
Associate professor and Head,
Department of BCOMCS,
Sri Ramakrishna College of Arts & Science

Dr.Reka.
R Assistant professor,
Department of BBA,
Sri Ramakrishna College of Arts & Science

Dr. Sajitha. J.
Assistant professor and Head
Department of Languages, Sri Ramakrishna College of Arts & Science

Abstract:

Artificial Intelligence (AI) is rapidly transforming global industries and has emerged as a pivotal force in achieving sustainable development goals (SDGs). From climate monitoring and precision agriculture to inclusive education and economic planning, AI technologies offer innovative solutions to complex challenges. This article explores the multidimensional role of AI in fostering sustainability across environmental, social, and economic spheres. By integrating AI tools into policy-making, industry operations, and public services, stakeholders can accelerate progress toward a more resilient and equitable future. The paper also discusses ethical considerations, challenges, and real-world applications of AI in global sustainability efforts.

Keywords: Artificial Intelligence, Sustainable Development, Environmental Sustainability, Social Inclusion, Economic Growth, Ethical AI, SDGs, Climate Change, Smart Infrastructure

1. Introduction to Sustainable Development and AI

Sustainable development refers to meeting the needs of the present without compromising the ability of future generations to meet their own needs. It emphasizes a balanced approach to environmental protection, social equity, and economic growth. The United Nations has outlined 17 Sustainable Development Goals (SDGs) aimed at addressing poverty, hunger, inequality, climate change, and more.

Artificial Intelligence, defined as the simulation of human intelligence in machines, holds significant potential to revolutionize the achievement of SDGs. Through machine learning, neural networks, computer vision, and natural language processing, AI can process vast datasets, detect patterns, and make intelligent decisions faster and more accurately than traditional systems.

The convergence of AI and sustainability offers a transformative path forward. As governments and organizations seek smart, data-driven solutions to global problems, AI stands out for its ability to

predict trends, optimize resources, and personalize services. In sectors ranging from agriculture to healthcare, AI is already demonstrating its capacity to improve outcomes while reducing waste and environmental impact.

2. AI in Environmental Sustainability

AI plays a central role in enhancing environmental sustainability by enabling better monitoring, forecasting, and management of natural resources. One of the most promising applications is in climate change mitigation. AI-powered climate models analyze data from satellites, sensors, and historical climate records to simulate future conditions. These models help policymakers make informed decisions about carbon emissions and disaster preparedness.

In the energy sector, AI supports the transition to renewable energy by forecasting energy demand and managing smart grids. AI algorithms optimize energy storage and distribution, integrating solar and wind energy more efficiently into existing systems. Predictive maintenance powered by AI reduces equipment failure and energy waste in industrial operations.

AI also contributes to biodiversity conservation. Image recognition tools identify endangered species in wildlife photos, while drones powered by AI monitor deforestation and illegal mining in real time. In marine environments, AI algorithms analyze sonar and satellite data to track ocean health and plastic pollution.

Precision agriculture is another domain where AI significantly impacts environmental sustainability. By analyzing soil health, weather patterns, and crop performance, AI systems enable farmers to optimize irrigation, fertilization, and pesticide use. This leads to increased yield with minimal ecological impact.

Moreover, AI is instrumental in waste management. Smart sorting systems powered by computer vision improve recycling efficiency, while AI tools predict waste generation trends, allowing for proactive planning. These applications collectively reduce the environmental footprint of human activity.

3. AI in Social Development and Inclusion

AI enhances social sustainability by promoting equity, inclusion, and access to essential services. In the education sector, AI-driven platforms offer personalized learning experiences, adapting content to each student's pace and learning style. Language processing tools provide multilingual support, making education more inclusive for non-native speakers and individuals with disabilities.

In healthcare, AI enables early disease detection, diagnosis, and treatment planning. Tools like AI-assisted imaging, virtual health assistants, and predictive analytics improve patient outcomes and reduce the burden on healthcare systems. This is particularly valuable in underserved communities with limited access to medical professionals.

AI also supports social protection programs by streamlining administrative processes and identifying vulnerable populations. For instance, machine learning algorithms analyze socio-economic data to ensure targeted delivery of subsidies, pensions, and food aid. Chatbots and AI customer service platforms improve accessibility to government services, especially in rural and marginalized areas.

In terms of accessibility, AI technologies like speech-to-text, screen readers, and gesture recognition

empower persons with disabilities to participate fully in society. These tools break down barriers in education, employment, and public services, promoting inclusive development.

AI can also detect and combat social issues such as gender bias, hate speech, and misinformation. Natural Language Processing (NLP) tools scan online content to flag abusive language, promoting safer online spaces. Moreover, AI can support human rights monitoring by analyzing satellite images and social media for signs of conflict or displacement.

Despite these benefits, ensuring fairness, accountability, and transparency in AI deployment is essential to prevent unintended harm or exacerbation of social inequalities.

4. AI in Economic Growth and Infrastructure

AI drives economic sustainability by enhancing productivity, innovation, and infrastructure management. In manufacturing, AI-enabled robotics automate routine tasks, increasing output while reducing operational costs. Predictive analytics inform supply chain management, preventing delays and minimizing inventory costs.

In finance, AI algorithms detect fraudulent transactions, assess credit risks, and offer tailored financial products to underserved populations. This promotes financial inclusion and supports small businesses in accessing credit and insurance.

AI also plays a key role in smart infrastructure development. In urban planning, AI processes traffic and population data to design efficient transport systems, reduce congestion, and improve public safety. Smart buildings equipped with AI-driven energy management systems optimize heating, cooling, and lighting to reduce utility costs.

In agriculture and food systems, AI supports economic sustainability by forecasting crop yields, identifying market trends, and connecting farmers directly to consumers through digital platforms. This reduces post-harvest losses and increases farmers' income.

Tourism, a significant contributor to many economies, also benefits from AI. Chatbots enhance customer service, while data analytics personalize travel experiences. AI-powered systems optimize hospitality operations, from booking to housekeeping, improving efficiency and sustainability.

Investments in AI research and education contribute to job creation and workforce transformation. As AI technologies evolve, reskilling initiatives ensure that workers can transition to new roles, supporting inclusive economic growth.

5. Challenges and Ethical Considerations

Despite its vast potential, the integration of AI into sustainable development presents several challenges and ethical dilemmas. One of the primary concerns is data privacy. AI systems rely heavily on personal and behavioral data, raising questions about how this data is collected, stored, and used. Ensuring data protection and user consent is crucial to maintaining trust.

Bias in AI algorithms is another major issue. If the training data is biased or incomplete, AI systems may perpetuate discrimination based on race, gender, or socio-economic status. Fairness audits and inclusive datasets are essential to prevent such outcomes.

The digital divide also hinders equitable access to AI technologies. Low-income countries and

marginalized communities may lack the infrastructure or digital literacy needed to benefit from AI. Bridging this gap requires targeted investments in connectivity, education, and capacity building.

Job displacement is another concern. As AI automates tasks across sectors, certain job categories may become obsolete. Policymakers must balance automation with job creation, focusing on reskilling and social safety nets.

Ethical concerns also arise in surveillance, weaponization, and decision-making. AI systems used for security or law enforcement must be transparent and accountable. Global cooperation is needed to establish ethical AI governance frameworks that prioritize human rights and sustainable development.

Regulatory frameworks are still evolving. Governments must craft policies that encourage innovation while safeguarding public interest. Multistakeholder collaboration—among academia, industry, civil society, and government—is essential to align AI development with ethical norms.

6. Case Studies and Global Initiatives

Several global initiatives showcase the transformative impact of AI on sustainable development. One notable example is the United Nations' AI for Good initiative, which convenes experts to explore AI solutions for achieving the SDGs. Through partnerships and pilot projects, AI for Good has supported innovations in healthcare, disaster response, and digital inclusion.

In India, AI is used in the 'Digital India' and 'Aarogya Setu' initiatives to enhance public health and governance. Machine learning models monitor disease outbreaks, optimize vaccine distribution, and improve service delivery in rural areas.

In agriculture, IBM's Watson Decision Platform helps farmers in Africa make data-driven decisions. It combines weather forecasts, soil data, and market prices to enhance crop planning and reduce risks.

Sweden's AI-powered energy platform, Greenlytics, optimizes wind energy production by predicting output and grid demand. Similarly, the Netherlands uses AI in flood forecasting and water management, ensuring climate resilience.

In education, China's AI-powered tutoring platforms deliver personalized content to millions of students. In contrast, UNESCO promotes ethical AI in education by setting global guidelines for inclusivity and fairness.

These case studies underscore the importance of context-specific solutions, inclusive design, and public-private partnerships in scaling AI for sustainability.

7. Future Prospects of AI for Sustainability

Looking ahead, AI is poised to play an even greater role in sustainable development. Emerging technologies such as quantum computing, edge AI, and federated learning will enhance AI's capabilities while addressing privacy and scalability concerns.

AI will become integral to circular economy models, where waste is minimized, and resources are reused. For instance, AI can track product lifecycles, optimize recycling processes, and identify secondary markets for used goods.

In environmental monitoring, next-generation AI systems will offer granular, real-time insights into ecosystem health, enabling more responsive conservation strategies. AI-powered climate risk models will support climate adaptation planning at local and global levels.

In social sustainability, AI could revolutionize mental health services through empathetic chatbots and behavior analysis. Virtual assistants and AI companions will improve care for the elderly, promoting independent living and emotional well-being.

AI will also enable more participatory governance. By analyzing public sentiment and policy outcomes, governments can make evidence-based decisions and engage citizens more effectively. Blockchain-AI hybrids will ensure transparent and tamper-proof data for public services.

However, the future of AI in sustainability will depend on robust governance, ethical innovation, and global collaboration. Ensuring inclusivity, accountability, and long-term impact should remain at the core of AI development.

8. Conclusion and Policy Recommendations

Artificial Intelligence is a game-changer for sustainable development. Its applications span across environmental conservation, social inclusion, and economic resilience. By leveraging AI, we can monitor ecological systems, personalize public services, and optimize infrastructure to build smarter, more sustainable societies.

To harness AI's full potential, a balanced approach is necessary. Policymakers should:

- Promote ethical AI frameworks and regulatory standards.
- Invest in digital infrastructure and AI literacy.
- Encourage public-private-academic partnerships.
- Ensure inclusivity by addressing the digital divide.
- Foster innovation through open data and collaborative platforms.

Ultimately, the successful integration of AI into sustainable development hinges on aligning technological advancements with human values and collective goals. With responsible stewardship, AI can become a cornerstone of a fairer, greener, and more resilient future.

References

1. United Nations. (2015). Transforming our world: The 2030 Agenda for Sustainable Development.
2. AI for Good – ITU. https://aiforgood.itu.int
3. World Economic Forum. (2020). Harnessing Artificial Intelligence for the Earth.
4. UNESCO. (2021). AI and Education: Guidance for Policy-makers.
5. McKinsey Global Institute. (2018). Notes from the AI frontier.
6. IBM. (2020). AI and the Future of Work and Sustainability.
7. Nature Sustainability. (2022). AI for Climate Resilience.
8. OECD. (2021). Artificial Intelligence, Business and Sustainability.

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

स्वातन्त्र्योत्तर संस्कृत महाकाव्यों में राष्ट्रवाद

शिवराज मीणा
सहायक आचार्य, संस्कृत, हरिअनत इंटीग्रेटेड महाविद्यालय, बोरखेड़ा, कोटा
पता - बी-603, स्वराज एनक्लेव, बोरखेड़ा, कोटा, पिन - 324005
मो.नं. 7597429188

राष्ट्रवाद को स्पष्ट करने के लिए राष्ट्र शब्द को समझना आवश्यक है। 'राष्ट्र' शब्द दीप्तर्थक 'राज' धातु से 'सर्वधातुभ्यःष्ट्रन' इस उणादित प्रत्यय के संयोग से बना है। इस व्युत्पत्ति के अनुसार राष्ट्र का अर्थ है– ''पशुधान्यहिरण्यसंपद राजते शोभते इति राष्ट्रम'' अर्थात पशु धन-धान्य आदि सम्पदाओं से सुशोभित भूमि भाग ही राष्ट्र है।[1] संस्कृत, हिन्दी तथा आंग्ल भाषा के कोशो में 'राष्ट्र' शब्द के निम्न पर्याय दिये गए हैं यथा-जनपद, देश, साम्राज्य, जनता, जाति, राज्य तथा किसी एक शासन में रहने वाले सब लोगों का समूह इत्यादि। डॉ. हरिनारायण दीक्षित ने श्री एम. मेनियर विलयम द्वारा ''संस्कृत इंग्लिश डिक्शनरी में राष्ट्र के लिए प्रयुक्त ''डिस्ट्रिक्ट'' शब्द तथा वामन शिवराम आप्टे के ''संस्कृत हिन्दी कोश'' में राष्ट्र के लिए प्रयुक्त राज्य शब्द को भारतीय राष्ट्रवाद के अनुसार उपयुक्त नहीं माना है। उनके मतानुसार डिस्ट्रिक्ट अथवा राज्य शब्द राष्ट्र की अर्थ गरिमा और विशालता के विरूद्ध है।

राष्ट्र का आंग्ल पर्यायवाची शब्द ''नेशन'' है। राजनीति शास्त्रियों के अनुसार यह लेटिन भाषा के नेटस से निकला है, जिसका अर्थ 'जन्म' या 'जाति' है। 'राष्ट्र' की परिभाषा देते हुए जन्म एवं जाति पर विशेष बल दिया है और ऐसे मानव समूह को राष्ट्र कहा है, जो जन्म एवं जाति के कारण परस्पर एकता के सूत्र में बँधे हो। प्रोफेसर बर्गेस की परिभाषा के अनुसार -''राष्ट्र जातीय एकता के सूत्र में बँधी हुई वह जनता है जो किसी अखण्ड भौगोलिक प्रदेश में निवास करती हो।''

कार्लटन जे. एच. हेज ने राष्ट्र की परिभाषा देते हुए लिखा है– ''राष्ट्र जाति ऐसे मनुष्यों का सांस्कृतिक समाज है, जो एक ही भाषा बोलते हैं और जिनको ऐतिहासिक परम्पराएँ (धार्मिक, प्रादेशिक, राजनीतिक, सैनिक, आर्थिक, कलात्मक और बौद्धिक) समान है।''

ब्राइस के मतानुसार ''राष्ट्र एक ऐसी राष्ट्रीयता है, जिसका एक ऐसा राजनीतिक संगठन है, कि वह या तो स्वतन्त्र है या स्वतन्त्र होने का इच्छुक है।''[5] अगर जाति को आधार बनाकर समान भाषा, जाति, धर्म, सगोत्रिय व्यक्तियों के समूह को राष्ट्र के रूप में स्वीकारा जाए तो किसी भी देश में अनेक प्रजाति, भाषा एवं धर्म को मानने वाले लोग निवास करते हैं, इस आधार पर तो एक ही देश में अनेक राष्ट्र की दुरूह कल्पना को स्वीकार करना पड़ेगा।

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर किसी ने जातीय एकता, किसी ने सांस्कृतिक एकता और किसी ने राजनीतिक एकता पर बल दिया है किन्तु वास्तव में राष्ट्र के जो प्रमुख तत्व स्वीकार किये हैं, वह हैं–भौगोलिक एकता, जातीय एकता, भाषा, संस्कृति तथा परम्पराओं की एकता, धार्मिक एकता, सामान्य राजनीतिक आकांक्षाएँ, सामान्य हिताहित की कल्पनाएँ और समान शासन व्यवस्था इत्यादि। ये राष्ट्र के तत्व हो सकते हैं मगर इन्हीं को अगर हम राष्ट्र के रूप में स्वीकार नहीं कर सकते। इसकी बात इन सभी का सामुहिक समन्वय रूप को हम राष्ट्र के रूप में स्वीकार कर सकते हैं, जहाँ किसी देश में विभिन्न

राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक गुणों वाले व्यक्ति साथ मिलकर रहते हैं। वही राष्ट्र कहा जा सकता है।

राष्ट्रवाद :- राष्ट्रवाद का तात्पर्य है, ''राष्ट्र को प्रेम करने वाला समूह विशेष।'' सामान्यतः राष्ट्रवाद और राष्ट्रीयता को एक ही अर्थ में प्रयोग किया है। डॉ. सत्यनारायण दुबे ने राष्ट्रीयता के सम्बन्ध में लिखा है कि-''जो व्यक्ति, जाति, सम्प्रदाय अथवा प्रदेश के स्वार्थ को प्रमुखता देते हैं और राष्ट्र के हितों की उपेक्षा करते हैं। वे लोग सच्चे अर्थों में राष्ट्रवादी नहीं है, उनमें राष्ट्रीय भावना का अभाव है। इसके विपरीत जो राष्ट्र को सर्वोपरि मानते हैं, वह राष्ट्रवादी है।''

राष्ट्रवाद के सम्बन्ध में ही डॉ. सुधीन्द्र कहते हैं कि- ''राष्ट्रवाद एक व्यक्तिगत चेतना है, जिनके पास एक ऐसा साहित्य है जिसमें राष्ट्र की अभिलाषा अभिव्यक्त हो, जो समान परम्पराओं व समान रीति रिवाजों से सम्बंध रखते हो, जो कुछ परिस्थितियों में समान धर्म रखते हैं।''

Encyclopedia Britannica के अनुसार-''राष्ट्रवाद एक ऐसी मनःस्थिति है जिसमें व्यक्ति की सर्वोच्चता राष्ट्रभक्ति तथा उसके राष्ट्र राज्य के प्रति अनुभव से जानी जाती है।''

प्रो. स्नाइडर के अनुसार- ''इतिहास के एक विशेष चरण पर राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक व बौद्धिक कारणों का एक उत्पाद राष्ट्रवाद एक सुपरिभाषित भौगोलिक क्षेत्र में निवास करने वाले ऐसे व्यक्तियों के समुह की एक मनस्थिति, अनुभव या भावना है जो समान भाषा बोलते हैं। दृष्टि समूह या सर्व के अभ्युदय और और प्रगति पर है। वह प्रगतिशील तत्व है। देशभक्ति राष्ट्रीयता का सनातन रूप है और राष्ट्रवाद उसका प्रगतिशील (ऐतिहासिक) स्वरूप है।''

डॉ. गार्नर ने आधुनिक राष्ट्रवाद को परिभाषित करते हुए लिखते है कि-''आधुनिक राष्ट्रवाद की यह मुख्य विशेषता है कि बहुत से लोग जो एक राष्ट्रियता में संगठित हैं, या तो स्वतन्त्र होना चाहते हैं और अपनी इच्छानुसार बनाए हुए राज्य में रहना चाहते हैं या बहुत हद तक राजनीतिक स्वायत्ता चाहते हैं जहाँ इन्हें किसी दूसरी राष्ट्रियता अथवा राष्ट्रियताओं के साथ संगठित कर दिया जाता है। इन परिभाषाओं के आलोक में हम कह सकते हैं कि जो समुदाय अथवा सम्प्रदाय राष्ट्र प्रेम की भावना से अभिभूत है, वह राष्ट्रवादी है। विशालभारतम् महाकाव्य में भी पं. श्यामवर्ण द्विवेदी नें ''राष्ट्रवाद'' शब्द को वहाँ इसी अर्थ में प्रयोग करते हुए लिखा है कि–

सर्व तदेतत् खलु विश्वमात्मा,
यदा स्वकं स्थावर-जंगमं च।
तदाश्र्य सिद्धांत वरे प्रवश्ते
त्व राष्ट्रवादः क्व च साम्यवादः।।

राष्ट्रीयता का प्रयोग भी राष्ट्रप्रेम की भावना को दर्शाने के लिए किया जाता है। राष्ट्रीयता किसी देश के नागरिकों की उस देश के प्रति राष्ट्रप्रेम को अभिव्यक्त करता है। अंग्रेजी में राष्ट्रियता अथवा राष्ट्रवाद दोनों के लिए ''नेशनलिज्म'' शब्द का प्रयोग होता है। हालांकि आधुनिक संस्कृत के मूर्धन्य विद्वान डॉ. हरिनारायण दीक्षित को राष्ट्रीय भावना के लिए प्रयुक्त नेशनलिज्म और राष्ट्रवाद शब्द पर आपत्ति है। दीक्षित जी का मानना है कि ''इज्म' और ''वाद'' अंश में दूसरे राष्ट्रों से द्वेष की भावना विद्यमान है तथा यह अहंकारमूलक शब्द है। जबकि हमारे प्राचीन ग्रंथों तथा हमारी संस्कृति में राष्ट्रवाद की जो भावना को व्यक्त किया गया है, उसमें अपने राष्ट्र के साथ ही अन्य राष्ट्रों की स्वतंत्रता के प्रति सम्मान की भी महत्ता दिया गया है। हमारे संस्कृति में उग्र राष्ट्रवाद के लिए कोई स्थान नहीं है। संस्कृत साहित्य में अपने स्वार्थ के लिए अन्य राष्ट्रों से घृणा उन्हें छोटा और नीचा समझने की तथा हानि पहुँचाने की चेष्टा को बढ़ावा नहीं देती बल्कि संस्कृत साहित्य उदार मानवतावादी राष्ट्रवाद को प्रेरणा देता है, इसलिए राष्ट्रवाद से हमारा अभिप्राय राष्ट्र प्रेम की भावना से है, न कि संकीर्ण आक्रामक राष्ट्रवाद से।

संस्कृत साहित्य में ''राष्ट्रवाद'' की भावना जिस रूप में वर्णित है उसके प्रमुख तत्व हैं–

1. राष्ट्र के प्रति सर्वाधिक प्रेम भावना।
2. राष्ट्र की भौगोलिक सीमाओं की रक्षा की भावना।

3. राष्ट्र की प्राकृतिक सम्पत्ति नदी, पर्वतों इत्यादि के प्रति प्रेम भावना।

4. राष्ट्र की रक्षा में अपना सर्वस्व अर्पित करने वाले वीर पुरूषों के प्रति आदर भावना।

स्वतान्त्रयोत्तर संस्कृत महाकाव्यों में राष्ट्रवादः- 20वी शताब्दी संस्कृत साहित्य में राष्ट्रीय भावना की अभिव्यक्ति का स्वर्ण काल के रूप में जाना जाता है। इस काल खण्ड में राष्ट्रिय चेतना के प्रसार का कारण अंग्रेजी शासन था। ब्रिटिश सरकार के द्वारा अपने लाभ के लिए रेल लाइन का विकास, एकल शासन व्यवस्था, शिक्षा व्यवस्था के कारण भारत के लोगों में एकत्व की भावना का विकास हुआ। जिनसे भारतीय जनता में राष्ट्रिय भावना की वृद्धि हुई। पाश्चात्य विद्वान मानते है कि भारत में राष्ट्रियता चेतना का संचार का कारण अंग्रेजी शासन व्यवस्था थी। पाश्चात्य विद्वानों के द्वारा किए गये आधुनिक प्रयासों के कारण भारतीय लोगों में राष्ट्रीयता की भावना का उद्घोष 18वी शताब्दी के अंतिम दशक में हुआ।

मगर प्राचीन संस्कृत ग्रंथों के अध्ययन के आलोक तथा तत्कालीन समाज सुधारकों यथा-दयानन्द सरस्वती, विवेकानन्द, राजा राममोहन राय, ईश्वर चन्द्र विद्यासागर, महादेव साडे आदि के विचारों को पढ़कर यह ज्ञान स्वतः हो जाता है कि पाश्चात्य विद्वानों के ये राग अलाप की भारत में आधुनिकता तथा राष्ट्रवाद पाश्चात्य समाज की देन है, निराधार साबित हो जाती है।

श्री तुकाराम चरित्र, महाकाव्य यद्यपि सन्तचरित काव्य है किन्तु इसमें शिवाजी का वर्णन होने से इसमें राष्ट्रवाद की भावना की अभिव्यक्ति देखी जा सकती है। शिवाजी की प्रजा के हित तथा देश की रक्षा का कर्तव्य बोध कराते हुए श्री तुकाराम उन्हें उपदेश देते हैं कि क्षत्रिय का पहला कर्तव्य अपने शत्रुओं पर विजय प्राप्त कर अपने धर्म का आचरण करना है। श्रीरामदास चरितम् महाकाव्य में भी रामदास के द्वारा शिवाजी को मातृभूमि की रक्षा का उपदेश दिया है–

राजन्य धर्म प्रतिपथ राजन समर्हसि त्रातुमिदं स्वराज्यम्।
मलेच्छग्रहान्मोचय मातृभूमिमित्येश धर्मःप्रथअस्तवेह।।
निष्पातो व्यवहार कर्मसु चरेद्राजन्य आदौ स्वयं विश्वास्यान्
विनियोयेच्च कुशलान् दृश्टानपास्य द्विशः।
श्री मद्दीनजनान् सदा सगदृशा सन्तोषयेत्सं कटे
शशान्तिस्थैर्यजुशास्मना व्यवहरे द्रक्षेद्विवेकं हृदि।।

भारत की आजादी में महात्मा गांधी का अभूतपर्वक योगदान था। साथ ही गाँधी की विचारधारा ने न केवल भारत के अपितु विश्व के कई नेताओं की विचारधारा को प्रभावित किया। गाँधी के इन विचारों के प्रभाव से संस्कृत के आधुनिक कवित भी न बच सके। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के जीवन चरित पर आधारित ''श्री महात्मा गांधी चरितम्'' नामक सम्पूर्ण महाकाव्य राष्ट्रप्रेम की भावना से ओतप्रोत है। इसमें स्वराज्य प्राप्ति तथा राष्ट्रिय एकता के लिये गांधी जी के सत्याग्रह, आमरण अनशन इत्यादि अथक प्रयासों का वर्णन है। गांधीजी के लिये दीर्घायु की कामना, उन्हें राम और कृष्ण से भी महान समझना। यही कारण था कि गांधी के जीवनवृत्त को आधार बनाकर कई कवियों ने महाकाव्यों तथा नाटकों का सृजन किया, जिसमें उनको नायक रूप में चित्रित करते हुए राष्ट्रीय चेतना तथा राष्ट्रीयता का वर्णन है। जनता द्वारा उनका अत्यधिक स्वागत तथा उनकी चरणों की धूल को मस्तक पर लगाना और देशद्रोहियों तथा विदशी शासकों का अन्धानुकरण करने वाले व्यक्तियों की निन्दा, कवि की राष्ट्र प्रेम की द्योतक है।

श्री सुभाचरितम् महाकाव्य के नायक श्री सुभाष का सम्पूर्ण जीवन स्वदेश प्रेम की भावना से ओतप्रोत है, अतः उनके जीवन की प्रत्येक घटना-ब्रह्मचर्य आश्रम का पालन, सरकारी नौकरी का परित्याग, घर की सुख सुविधाओं तथा अपने देश का परित्याग, विदेशों में भ्रमण कर स्वराज्य के लिए प्रयत्न करना इत्यादि का रोचक एवं यथार्थ वर्णन कर कवि ने पाठकों के मन में राष्ट्रीय भावना उत्पन्न करने का प्रयत्न किया है।

श्री नेहरूचरितम् महाकाव्य ब्रह्मानन्द शुक्ल का महाकाव्य है जिसमें उन्होंने भारत के प्रथम प्रधानमंत्री तथा स्वतंत्र भारत के नवनीत नेता नेहरू को राष्ट्र के प्रख्यात् राष्ट्रवादी का प्रारम्भ प्रयोग के वर्णन सेता है जो कवि की राष्ट्रप्रेम की भावना व्यक्त करता है। यह सम्पूर्ण महाकाव्य राष्ट्रवाद की भावना से ओतप्रोत है। द्विवेदी जी ने देशभक्तिहीन तथा स्वार्थलीन नेताओं की

निन्दा की है तथा सच्चे राष्ट्रभक्त स्वामी दयानंद विवेकानन्द, लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक, गोपाल कृष्ण गोखले, रवीन्द्रनाथ टैगोर, महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरू, सुभाषचन्द बोस, जयप्रकाश नारायण इत्यादि के प्रति प्रेमभाव को व्यक्त किया। इसमें वर्णित राष्ट्रिय ध्वनि का जो वर्णन प्राप्त होता है वह कवि के राष्ट्रप्रेम को व्यक्त करता है।

श्री तिलकयशाश्र्ण्तः महाकाव्य में कवि के द्वारा लोकमान्य बाले गंगाधर तिलक के स्वराज्य प्राप्ति के लिये किये गये अथक प्रयासों का अंकन किा है जिससे वह पाठकों के हृदय में राष्ट्र प्रेम को उद्धबद्ध कर सके। स्वराज्य विजयम् नामक महाकाव्य में देश के प्रति अपना सर्वस्व अर्पित करने वाले राष्ट्र नायकों के प्रति द्विजेन्द्रनाथ शास्त्री का यह विशिष्ट महाकाव्य है। इसमें कवि कहते हैं कि जो लोग राष्ट्र की स्वतन्त्रता के लिये प्राणाहुति देते है, उन महापुरूषों को भला कौन मृत घोषित कर सकता है।

अम तास्तेहि संजाता, ये स्वातन्त्रयकृते मृताः।
यतः परोपकाराय न भवन्ति मृताः मृताः।।
मृत्य : स वा स्यात् यदि राष्ट्रहेतोः स नः कृते स्यादमृतत्वमेव।
स्वराज्यसौरव्यन्तु भावि सन्ततिः फलत्वयचेण लप्स्यतेत।।

कवि दासत्व को मृत्यु से भी अधिक दुःखप्रद स्वीकारा है। वह राष्ट्र की उन्नति एवं विकास के लिए स्वराज्य को अवश्य मानते हैं। इसके माध्यम से उन्होंने शिवाजी को आधार बनाकर रचित महाकाव्यों में श्रीधर भास्कर वर्णोंकर विरचित शिवराज्योदयम महाकाव्य राष्ट्रीयता की दृष्टि से श्रेष्ठ महाकाव्यों में स्वीकार किया जाता है। इसके माध्यम से उन्होंने मातृभूमि के लिए सब कुछ कर जाने वाले वीर योद्धाओं को नमन किया है।

पूर्वभारतम् महाकाव्य भारत देश के नाम की सार्थकता के वर्णन से प्रारम्भ होता है। इस महाकाव्य में कवि का मानना है कि जब तक लोग सम्पूर्ण देश को एक परिवार के रूप में नहीं देखेगें, तब तक देश का भला नहीं हो सकता। देश की एकता के लिए यह आवश्यक है, सभी भारतवासी अपने बीच के जाति, बेश, लिंग, भाषा के आधार पर जो विभेद है उसका दूर करें। तभी जाकर भारत को वास्तव में स्वाधीन माना जाये। प्रभुदत्त स्वामी ने पारस्परिक कलह की अग्नि के समान राष्ट्र के लिए घातक बताया है तथा इससे राष्ट्र के शत्रुओं की वृद्धि होने की संभावना प्रकट की है।

चीरहरणम् महाकाव्य द्रौपदी के चीरहरण सम्बन्धी प्राचीन घटना पर आधारित है। फिर भी इसमें कवि ने देश की तत्कालीन दशा नजर आती है। अब्राहम लिंकन कहते थे कि लोकतंत्र में शासन की सम्पूर्ण शक्ति जनता में निहित होती है। अतः शासक को जनता की भावनाओं को ध्यान में रखकर नीति निर्धारण करना चाहिए।[17]

वह कहते है कि-लोकतंत्र जनता के लिए, जनता के द्वारा, जनता का शासन है। अर्थात जनता ही सर्वोपरि है—लोकतंत्र में। इसी प्रकार दिनकर लिखते हैं कि-सिहांसन खाली करो, जनता आ रही है। जनविजय महाकाव्य में भी कुछ इसी प्रकार की भावना को व्यक्त किया गया है। इस महाकाव्य में स्वाधीनता के महान सेनानियों, नेहरू, गांधी, बोस तथा लाल बहादुर शास्त्री का वर्णन का केवल अभिप्राय यह है। पहला-नेताओं को भारत के उन देशप्रेमी नेताओं से सीख ग्रहण करनी चाहिए। दूसरा-जनता ने जैसे अंग्रेजों को देश से बाहर निकाला था, उसी प्रकार इन नेताओं को भी सबक सिखाने के लिए प्रेरित करना। साथ ही इसके द्वारा लोगों में राष्ट्रीयता की भाषा का संचार करना भी मुख्य उद्देश्य रहा है। इस महाकाव्य में लेखक के द्वारा छात्रों के मन में राष्ट्र के प्रति चिन्ता का मनोहारि वर्णन किया है तथा उन नेताओं की भर्त्सना की है जो देश को अवनति की ओर ले जाने वाले हैं। उन्होंने अन्तिम सर्ग में भारत के गौरव की रक्षा के लिए नेताओं तथा जनता को जाग्रत करने का उपदेश दिया है।

''मौर्यचन्द्रोदयम'' नामक महाकाव्य राष्ट्रवाद की भावना से परिपूर्ण प्रभुदत्त स्वामी का एक उत्कृष्ठ महाकाव्य है। जिसमें उन्होंने राष्ट्र का वास्तविक अर्थ समझाते हुए कहते हैं—'कि भाषा, देश-भक्ति, सभ्यता और संस्कृति राष्ट्र के प्राण हैं। स्वार्थी व्यक्ति की तुलना कीड़ों से दी गयी है, जो राष्ट्र के अन्न को नष्ट करते है। राष्ट्र की सेवा करने वाले सज्जनों के जीवन के लिए कल्पों तक जिन्दा रहने की कामना की गई है।

''श्रीमत्प्रतापराणयनम्'' यह महाराणा प्रातप के जीवन पर आधारित है। इस महाकाव्य का आरम्भ महाराणा प्रतप के श्लेषमय वर्णन से तथा अंत देशभक्ति उपदेश से की गई है। यह महाकाव्य के द्वारा कवि प्रताप के जीवन को आधार बनाकर पाठकों के हृदय में देशप्रेम की भावना को जमाना चाहता है। भीष्म चरितम् महाकाव्य, गंगापुत्र भीष्म को आधार बनाकर रचित है। इसमें भीष्म के द्वारा युधिष्ठिर को उपदेश दिया गया है—कि राजा को अपने राष्ट्र तथा राष्ट्र में रहने वाले लोगों के योग-क्षेम के लिए सदैव प्रयत्न करना चाहिए। राष्ट्र की सेवा ईश्वर की पूजा के समान राष्ट्र के शत्रु को दण्डित करना राजा का कर्तव्य माना गया। राजा को अपने अहंकार की अग्नि में राष्ट्र को नहीं जलाना चाहिए।

उपर्युक्त महाकाव्यों के सारगर्भित विवेचना से स्पष्ट है कि स्वतंत्रता काल में आधुनिक संस्कृत कवियों ने जो भी महाकाव्यों का सृजन, उसमें से अधिकांशतः में राष्ट्रवादी विचारधारा का वर्णन प्राप्त होता है। ये कवि चाहते तो प्राचीन महाकाव्य की पद्धति पर शृंगार वर्णन से युक्त महाकाव्यों के सृजन की परम्परा का पालन करते रहते। मगर जब देश में कोई बाहरी व्यक्ति आप पर शासन कर रहा हो तब तो लेखक का प्रथम दायित्व यही है कि वह अपने काव्य के द्वारा जनमानस में नयी चेतना का संचार करें तथा लोगों को क्रान्ति के लिए प्रेरित करें। यह सत्य है कि संस्कृत कवियों ने तत्कालीन सेनानायको, प्राचीन भारतीय महान सम्राटों तथा राजाओं को आधार बनाकर राष्ट्रप्रेम तथा राष्ट्रीयता का वर्णन किया। मगर इसके बाद भी इन रचनाओं में कही भी उग्र राष्ट्रवाद या आक्रामक राष्ट्रवाद का वर्णन हमें नजर नहीं आता। कवियों ने स्वयं राष्ट्र कल्याण के साथ विश्व मंगल की भी कामना की है। भारतीय साहित्य परम्परा को ध्यान में रखते हुए इन कवियों ने अपने राष्ट्र की स्वतंत्रता की रक्षा के साथ ही साथ दूसरे राष्ट्रों के भी स्वतंत्रता की रक्षा के प्रति सद्भाव व्यक्त किया।

संदर्भ सूची

1. शब्दकल्पद्रम कोश, राजा राधाकान्तदेव, पृ.सं.-158
2. संस्कृत साहित्य में राष्ट्रीय भावना, डॉ. हरिनारायण दीक्षित, पृ. सं.-04
3. राजनीतिशास्त्र के सिद्धांत, आर0सी0 अग्रवाल, पृ. सं.-214, 215
4. आधुनिक राजनीतिक विचारधाराएँ, डॉ. सत्यनारायण दूबे, पृ. सं.-348
5. राजनीतिशास्त्र के सिद्धांत, आर0सी0 अग्रवाल, पृ.सं.-215
6. आधुनिक राजनीतिक विचारधाराएँ, डॉ. सत्यनारायण दूबे, पृ. सं.-357
7. हिन्दी कविता में युगान्तर, डॉ. सुधीन्द्र, पृ. सं.-237
8. राजनीतिशास्त्र के सिद्धांत, आर0सी0 अग्रवाल।
9. विशालभारतम् 8/19
10. संस्कृत साहित्य में राष्ट्रीय भावना, हरिनारायण दीक्षित, पृ. सं.-29, 30
11. श्रीरामदासचरितम्, 11/36-39
12. भारतपरिजातम्, 13/35-40, 14/3-15
13. श्रीसुभाषचरितम्, 1/18, 19, 6/8
14. श्री नेहरूचरितम् 2/16-21, 14/4-8, 18/19-23, 31-32
15. स्वराज्यविजयम् 1/45, 15/35
16. पूर्वभारतम्, 8/13, 40-43
17. चीरहरणम् 11/51-77, 12/24
18. तद् भूखण्डं वाशद्रयो वादिशो वा,
    नैतद् राष्ट्रं राष्ट्रविज्ञा दिशन्ति।

भाषा, भक्तिः सभ्यता, संस्कृतिश्चे-
त्येतात्प्राणं राष्ट्रमाहुश्चिरत्नाः।।
जाति, धर्मो, जातिधर्मप्रसूता-
भाषा, भन्तिः, सभ्यता, संस्कृतिश्च।
एतै सतत्वेः प्राणितां मातृभूमिं
राष्ट्रंप्राडू राष्ट्रतत्वार्थविंज्ञः।। (15/41, 51 व 52)

19. श्रीमत्प्रतापराजन्तं नौमि दित्यमहौजसम्।
सर्वलोकमाराध्यं सूर्य प्रत्यक्षदैवतम्।। (श्रीमत्प्रतापराणयनम्, मेवाड़काण्ड 1/1)

20. भीष्मचरितम् 1/12-17, 17/27-28
नृपः स्वराष्ट्रस्य तथात्र वासिनां,
क्षेत्रमाय योगाय यतेत सर्वदा।
राष्ट्रस्य सेवा प्रभुवन्दनोच्यते
प्रभोः शरीराच्य विनिर्गताः प्रजाः।। (17/26)

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

आधुनिकताबोध और सर्वेश्वर का कथा-साहित्य

डॉ. बिक्रम कुमार साव
असिस्टेंट प्रोफेसर, बैरकपुर राष्ट्रगुरु सुरेंद्रनाथ कॉलेज
Mob: 9331087920
Email: bikram-z-shaw3@gmail.com

'आधुनिकता' एक प्रक्रिया है जो एक से अधिक दौर से गुजरने की गवाही देती है। आधुनिकता की प्रक्रिया नगरीकरण की प्रक्रिया से जुड़ी हुई है और इस तरह आधुनिकता-बोध का संबंध नगर-बोध से जुड़ा हुआ है। आधुनिकता बोध मध्यकालीन और रोमांटिक बोध दोनों का विरोध करती है। आधुनिकता के बोध में मध्यकालीन और रोमांटिक बोध-दोनों का अस्वीकार है। इसमें प्रश्नचिह्न की निरन्तरता है। शाश्वत और चरम का अस्वीकार चिन्तन और संवेदना-दोनों स्तरों पर है। इसमें कभी अजातीयता को खोजा गया है तो कभी उद्देश्यहीनता को तलाशा गया है। इस तरह आधुनिकता में कभी बेगानेपन और अजनबीजन का एहसास है तो कभी व्यक्ति का व्यक्ति से कट जाने का बोध है और कभी व्यक्ति का परिवेश से कट जाने का, जो नगरीकरण की प्रक्रिया का परिणाम है। अकेलेपन का बोध भी बहुत पुराना है किन्तु आज का अकेलापन मध्यकालीन या रोमांटिक अकेलेपन से भिन्न कोटि का है। आज इंसान की नियति अनिश्चित है और उसकी स्थिति अरक्षित होने की गवाही देने लगी है। उसका अनाम हो जाना, उसके व्यक्तित्व का लोप हो जाना-यह सब कुछ हिन्दी कथा-साहित्य में उजागर हो रहा है, जिसमें परिवेश नगर या महानगर का है। इस प्रकार 'आधुनिकता बोध' स्वयं में एक जटिल अवधारणा है। प्रगतिशील और मूल्यवादी विचारक इसे मानवता के भविष्य निर्माण के संघर्ष में बाधक मानते हैं। उनके अनुसार अस्तित्वादी दर्शन से प्रेरित आधुनिकताबोध मनुष्य को निराश, कुण्ठित, एकांकी और निष्क्रिय बना देता है। आधुनिक यंत्र-दानव के समक्ष अपनी हीनता और व्यर्थता के बोध से आक्रांत मनुष्य बेहतर जीवन-निर्माण के लिए संघर्ष नहीं कर सकता। इसलिए विसंगति, विडम्बना, व्यर्थता, अजनबीपन, नैराश्य, कुण्ठा, संत्रास आदि को आधुनिकता बोध का पर्याय मान लेना उचित नहीं है। वर्तमान औधोगिक सभ्यता के अन्तर्गत मनुष्य का पदाथीकृत होना उसकी नियति है। निराशा, ऊब, ग्लानि, व्यर्थताबोध आज का जीवन-सत्य है। यह स्वीकार कर लेने से मनुष्य की संकल्प-शक्ति का हास होता है और वह नियति का दास बनकर रह जाता है। इसलिए आधुनिकता बोध के स्थान पर वे यथार्थबोध को महत्त्व देते हैं। मुक्तिबोध बलपूर्वक कहते हैं कि ''अन्याय के खिलाफ आवाज बुलन्द करना 'आधुनिक भावबोध' के अन्तर्गत है। आधुनिक भावबोध के अन्तर्गत यह भी है कि मानवता के भविष्य-निर्माण के संघर्ष में हम और भी अधिक दत्तचित्त हों तथा हम वर्तमान स्थिति को सुधारें, नैतिक हास को थामें, उत्पीड़ित मनुष्य के साथ एकात्म होकर उसकी मुक्ति की उपया-योजना करें।''[1] डॉ. इन्द्रनाथ मदान अपनी पुस्तक आधुनिकता और हिन्दी साहित्य में लिखते हैं– "इतना साफ हो चुका है कि यह एक प्रक्रिया है और इस प्रक्रिया में स्वीकृत मूल्य अस्वीकृत हो जाने की गवाही देकर, फिर स्थापित होकर विस्थापित हो जाते रहे हैं।''[2] अर्थात् बनते-मिटते रहते हैं और इसीलिए अपने वर्तमान के प्रति तीव्रतम सजगता आधुनिकता का केन्द्रीय तत्त्व है। परन्तु दुर्भाग्य से शहरी मध्यवर्गीय व्यक्ति-जीवन की जड़ता, ठहराव, स्तब्धता, टूटन, कुंठा, घूटन मात्र को ही आधुनिकता बोध मान लिया जाता है। यह ठीक है कि इन सारी जड़ता, ठहराव,

कुंठा आदि का तीव्र बोध रचनाकार को होना चाहिए, किन्तु साथ ही साथ इन सबको व्यापक परिवेश में देखने की भी आवश्यकता है। इन्हें तोड़ने की चेष्ठा करने वाली अव्यक्त आकुलता भी आधुनिकता बोध है।

'आधुनिकता बोध' की दृष्टि से हिन्दी कथा-साहित्य की शुरुआत 'पूस की रात' (1934 ई.), 'कफन' (1936 ई.), और गोदान' (1936 ई.) से होती है। इन रचनाओं की कथाओं में कथाकर ने अपनी कथा-परम्परा को तोड़ा है आधुनिकाता की चुनौती को स्वीकारा है। अज्ञेय की कहानी 'गैंग्रीन' में बोरियत की जो गहरी छाया मंडराती रहती है, परिवेश से कट जाने का इसमें जो ठण्डा एहसास है, उसमें आधुनिकता का एक और स्तर उजागर होता है। इसी तरह परिन्दे, लन्दन की एक रात, खोयी हुई दिशाएँ, वापसी, डेढ़ इंच ऊपर, बंद गली का आखिरी मकान आदि कहानियों में आधुनिकता का स्तर बहुत गहरे में है। अपने इसी अनेक स्तरीयता के कारण आधुनिकता बोध 'गोदान' में एक स्तर पर है, 'शेखरः एक जीवनी में' दूसरे स्तर पर, 'बलचनमा' में तीसरे स्तर पर, 'न आनेवाला कल में' चौथे स्तर पर, 'एक चूहे की मौत' में पांचवे स्तर पर, 'सफेद मेमने' में छठें स्तर पर, 'वे दिन' में सातवें स्तर पर, 'मुरदाघर' में आठवें स्तर पर।

जहाँ तक 'सर्वेश्वरदयाल सक्सेना' के कथा-साहित्य में 'आधुनिकता बोध' को देखने का प्रश्न है तो उनके कथा-साहित्य में भी आधुनिकता का बोध विविध स्तरीय है। सर्वेश्वर अपनी संवेदना का संकेत कभी मोटे कोड़े से देते हैं (प्रेमी कहानी में) तो कभी चींटे से (मरी मछली का स्पर्श), कभी अवचेतन मन से (सोया हुआ जल) तो कभी प्रेम की त्रासद परिणति से (पागल कुत्तों का मसीहा), कभी मेढ़क से (तीन लड़कियाँ) तो कभी नन्हें कीड़े से (टाइमपीस)। इस तरह के प्रतीकात्मक संकेत मोहन राकेश की रचनाओं में भी मिलते हैं। यह शायद सर्वेश्वर के कवि-मन की देन न होकर नयी कथा-परम्परा की रूढ़ि भी हो सकती है।

सर्वेश्वर की 'छाता' कहानी में आधुनिकता बोध का स्तर एक अलग धरातल पर दिखाई देता है। दोनों के बीच में एक छाता था, जो न उन्हें मिलता है, न पृथक करता है, न ही पूर्णरूप से उनके अस्तित्व की रक्षा करता है। इसके बाद झेलने भींगने की शब्दावली से खेला जा रहा है। यह छाता, जो दो के बीच में था, अब एक पर है और सड़क के दूसरे छोर पर पहुँच गया है। शायद एक कट गया है। कहीं रास्ते में। 'मैं' छज्जे पर खड़ा सोचता रह जाता है, और यह स्वीकारने से डरता है कि बचने के मायने नहीं है। इस अन्त बोध के साथ भींगने और न भींगने की प्रक्रिया में मानव की स्थिति और नियति उजागर होकर आधुनिकता की प्रक्रिया को जारी रखती है।

प्रेम की व्यंजना से युक्त प्रतीकाश्रित "तीन लड़कियाँ एक मेढ़क" और "प्रेमी" सर्वेश्वर की ऐसी दो कहानियाँ हैं जो प्रेम संबंधी उनके विचार को व्यक्त करती है। प्रथम कहानी में तीनों लड़कियाँ एक कमरे में बैठकर अपने-अपने प्रेमी के विषय में बात करती हैं कि क्या उन्हें अपने-अपने प्रेमियों को प्यार करना चाहिए या नहीं? तभी एक मेढ़क आ जाता है जिसे तीनों ही अलग-अलग ढंग से पकड़ने का प्रयास करती हैं पर वे असफल रहती हैं। इस प्रकार यह कहानी आधुनिकता के धरातल पर समाज में बदलती हुई प्रेम की अवधारणा को व्यक्त करने में सफल दिखाई देती है।

इसी क्रम में 'प्रेमी' कहानी बड़े ही नाटकीय ढंग से प्रारम्भ होती है जिसमें "कांतर" नामक कीड़ा प्रेमी का प्रतीक है। नायिका एवं 'कांतर' के माध्यम से प्रेम में निहित उदात्त भाव एवं अलौकिक सुख का वर्णन किया गया है। कहानीकार इस कहानी के माध्यम से प्रेम के बिना जीवन में रिक्तता तथा प्रेम की परवशता में अनिवार्यता को भावप्रवण ढंग से प्रस्तुत करने का सटीक प्रयास करते दिखाई देते हैं। इस कहानी में कथाकार ने अपनी संवेदना को आधुनिकता के विविध धरातल पर प्रस्तुत किया है। कहानी में मोटे कीड़े के माध्यम से प्यार की सुखद अनुभूति करायी गई है। पति-पत्नी की गोपनीय चर्चा जिस प्यार भरे, मादक सुखद स्पर्श का अनुभव कराती है, उससे न केवल पुरुष के स्पर्श सुख की अनुभूति होती है। बल्कि वहाँ भी प्रेम की गरिमा को बताने का प्रयास कथाकार करता है।

नायिका दो महीने बाद जब घर लौटकर आती है तब उसका प्रेमी (कीड़ा) उसे मरा हुआ मिलता है। तब वह कहती है मैं जानती हूँ कि, तुम्हारी नहीं मेरे प्रेमी की मेरे वियोग में मृत्यु हो गई है। धूल भरे हाथों से नायिका अपनी आँखे भी पोछ नहीं पाती। वह विवश है, फिर नायिका अपने अन्तर्मन से कीड़े द्वारा अपने प्रेम भाव को व्यक्त करती है। मानव मन के छिपे

भाव, जो सुप्तावस्था में, है, वही जगकर इन दोनों कहानियों में रूप धारण करते दिखाई देते हैं।

'सूटकेस' कहानी परम्परा के प्रति प्रेम को अभिव्यक्त करती है, जिसमें आधुनिकतावादी दृष्टिकोण से समाज में हो रहे परिवर्तनों पर कहानीकार ने प्रकाश डाला है। व्यक्ति परम्परावादी न होते हुए भी उससे गहराई से जुड़ा रहता है। कहानी के नायक 'मैं' का अपने पुराने सूटकेस बदल देने की बात कहे जाने पर भी वह अपना लगाव नहीं छोड़ता। नायक आधुनिक संदर्भों में तथा समाज की उपभोक्तावादी संस्कृति से घिरे रहने के बावजूद उस परंपरा रूपी सूटकेस को नहीं छोड़ना चाहता है। यह जानते हुए भी कि उसके कपड़े उसमें नहीं अट सकते, फिर भी वह त्यागना नहीं चाहता। उसकी जीवन-दृष्टि की जड़े परंपरा से जुड़ी हैं। वह लोगों को समझाने का प्रयास करता है कि वह नये के योग्य नहीं है—"उसे कैसे समझाता कि परंपरा को मैंने इसलिए स्वीकार किया है कि मैं नये के योग्य नहीं हूँ। अपने को अभी नया नहीं बना पाया हूँ।"[3] कहानी का अंत इस प्रकार होता है कि नायक अपना सूटकेस अपने बच्चों को देता है, जिसे बच्चों ने अत्यन्त सहजता से 'गंदा' कहकर अस्वीकार कर दिया है और नायक उनके कथन से मर्माहत होता है। यह नई पीढ़ी द्वार परम्परा के अस्वीकार का प्रतीक है।

वैज्ञानिक सभ्यता और आधुनिकीकरण की प्रतिक्रिया स्वरूप निर्मित अकेलापन, अलगाव, भयावहता, रिक्तता से मनुष्य उक्ताने लगा है। अब उसे जीवन जीने में कोई रुचि नहीं रह गई है। ऐसे समय में वह आत्महत्या करने की सोचता है और मृत्युबोध से ग्रस्त होता है।

'अंधेरे पर अंधेरा' कहानी में यही दर्शाया गया है कि जीवन से परास्त युवक और युवती आत्महत्या के कगार पर खड़े तो रहते हैं परन्तु अपने इस निर्णय को गलत करार देकर फिर जीना चाहते हैं। शायद कहानी उस स्थिति की ओर संकेत करना चाहती है, जहाँ आधुनिक मनुष्य का आत्महत्यावादी निर्णय स्थितियों के गत्याविरोध के बावजूद भी कितना पलायनवादी है। आखिर जन्दगी की गतिमानता और मनुष्य का अस्तित्व सबसे ऊपर की सच्चाई है। युवक कहता है— "में एक बार फिर जिन्दा रहने की कोशिश कर सकता हूँ। शायद तुम पुरे मन से मुझे स्वीकार कर सको। तुम मेरे लिए हो सको।"[4]

आधुनिकता बोध की दृष्टि से लिखे गये उपन्यासों में सक्सेना का 'सोया हुआ जल' उल्लेखनीय है। यह उपन्यास सिनेरियो शिल्प में लिखा हुआ नवीन कथा-प्रयोग है। डिमाई साइज के 37 पृष्ठों की कृति को जिसके प्रथम तथा अन्तिम पृष्ठों पर दो रेखाचित्र भी हैं— 'सम्पूर्ण लघु उपन्यास' कहा गया है। उपन्यास की अवधि रातभर की है। किसी ताल के किनारे एक पान्थशाला के विभिन्न कमरों में भिन्न प्रकार के लोग ठहरे हुए हैं— विवाहित पति-पत्नी, घर से भाग खड़े होने वाले प्रेमी-प्रेमिका, शोरगुल, कहकहे मचाने वाले 'ब्रिज' के खेल में मशगूल अलमस्त नवजवान शराबी भी हैं, साम्यवादी भी हैं। बीच के गलियारे में एक बूढ़ा पहरेदार टहलता है, जिसके कानों में कमरे में होनेवाली बातचीत पड़ती है, या घटित होनेवाले दृश्य दीख जाते हैं। वह मानो उपन्यासकार की सर्वग्राही किन्तु मूल्यादर्शों की अन्वेषक दृष्टि की भाँति कभी-कभी बाग की बेंच पर बैठ कर स्वप्न देखता है और इस प्रकार सिनेरियो शिल्प के छोटे-छोटे स्नैपशॉट, प्रतीकात्मक प्रभाव, और फैन्टेसी के धरातल पर कथानक विकसित होता चलता है। आधुनिकता बोध की दृष्टि से हिन्दी कथा-साहित्य के नये लेखन में जो महत्त्वपूर्ण मानवीय धरातल उभर रहा है, टूटती हुई मर्यादाओं और बिखरती हुई निष्ठाओं के बीच मानवीय मूल्यों के प्रति जो आस्था पनप रही है, सामाजिक रूढ़ियों और राजनीतिक भ्रान्तियों को चीर कर मनुष्य की आन्तरिकता पर आधारित जिस नई मर्यादा का उदय हो रहा है उसकी ओर लेखक ने बड़े साहस से संकेत किया है।

'पागल कुत्तों का मसीहा' सर्वेश्वर का दूसरा लघु उपन्यास है। इसमें पागल कुत्ते संदर्भहीन एवं रूढ़ जीवन-मूल्यों के प्रतीक हैं। उपन्यासकार ने दिखाया है कि हम पुराने मूल्यों से व्यर्थ चिपके रहते हैं। हमें इनके प्रति अंधमोह को त्यागकर नयी आस्था का स्वागत करना चाहिए। 'सूने-चौखटे' सर्वेश्वर के बालमन पर पड़े हुए प्रभावों-गरीबी, बिखराव, उपेक्षा, चिड़चिड़ापन का स्मृति-संदर्भों के सहारे उकेरा हुआ चित्र है। इसके आधार पर उनकी आधुनिकता बोध को समझा जा सकता है।

इस प्रकार सर्वेश्वर के कथा-साहित्य में नये प्रश्नों और चिताओं को बेचैनी के स्तर पर उठाया गया है और अनुभवों की विविधता ने जीवन के अर्थ-स्तरों को नया संदर्भ दिया है। जीवन के ट्रेजिक अहसासों से उनका कथा-साहित्य भरा पड़ा

है। विशेष बात यह है कि उनके कथा-साहित्य की कथा आधुनिकता के छद्म को तोड़ती हैं और एक देशी संवेदना का पाठक में रचनात्मक विस्तार करती है। अंतर्वस्तु और रूप के स्तर पर इनकी प्रयोगधर्मिता, मौलिकता और सृजन दृष्टि पाठक की ज्ञान-भाव-संवेदना का विस्तार करती हुई आधुनिकता बोध के नये संदर्भों को खोलती है।

संदर्भ

1. जैन, नेमीचन्द्र (सं.), मुक्तिबोध रचनावली भाग-5, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र. सं. नवम्बर, 1980, पृ.सं. 192
2. मदान, इन्द्रनाथ, आधुनिकता और हिन्दी साहित्य, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र. सं. 1973, दूसरी आवृत्ति 2006, पृ.सं. 145
3. सक्सेना, सर्वेश्वरदयाल, क्षितिज के पार, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र.सं. 1997, पृ. सं. 134
4. सक्सेना, सर्वेश्वरदयाल, अंधेरे पर अंधेरा, लिपि प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र. सं.-1980, पृ. सं. 124

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

To Develop A Machine Learning Driven Webapp With Integration of Internet of Things

Dipmala Bhagwat Trimukhe
(Research Scholar)
Department Of Electronics & Communication Engineering

Dr. Rahul Kumar Budhania
(Research Guide)
Shri Jagdish Prasad Jhabarmal Tibrewala University, Vidyanagari, Jhunjhunu, Rajasthan

Abstract

This Papers aims to combine the power of IoT devices with advanced machine learning algorithms to create a responsive, intelligent, and scalable web platform. The IoT integration enables the collection of vast amounts of sensor data from connected devices, such as temperature sensors, motion detectors, and environmental monitors. This data is then processed and analyzed through machine learning models to derive actionable insights and predictive analytics.

The web application serves as an interface for users to monitor and interact with IoT devices, receive real-time updates, and access data-driven recommendations or automated actions. The machine learning component will continuously improve the system's efficiency by learning from historical data and adapting to changing patterns over time. This integration not only enhances user experience but also supports automation, anomaly detection, and predictive maintenance, among other functionalities. The application's design focuses on scalability, security, and seamless data flow, providing a comprehensive solution suitable for various industries such as smart homes, healthcare, manufacturing, and agriculture.

Keywords: Develop, Machine Learning, Driven, Webapp,Integration,Internet**.**

Introduction

Developing a machine learning (ML)-driven web application integrated with Internet of Things (IoT) devices represents a convergence of two rapidly growing technological fields that have immense potential for transforming industries and enhancing everyday life. This combination enables the creation of intelligent, responsive, and adaptive applications capable of providing real-time data insights, automation, predictive analytics, and personalized services. The integration of IoT devices with machine learning algorithms within a web application facilitates the development of solutions that can learn from data, make autonomous decisions, and continuously improve performance over time. These technologies, when integrated effectively, can be used across various sectors, including healthcare, smart cities, agriculture, transportation, manufacturing, and more.

IoT and Machine Learning: A Perfect Pair

The Internet of Things refers to a network of interconnected devices that can communicate with each other and exchange data through the internet or other communication networks. These devices collect and transmit data from the physical world, which can be leveraged to monitor and control various systems. IoT devices range from simple sensors that measure temperature, humidity, and motion, to complex machinery used in industrial settings, such as autonomous robots or advanced monitoring equipment.

On the other hand, machine learning, a subset of artificial intelligence, involves the development of algorithms that allow systems to learn from data without explicit programming. ML can identify patterns, make predictions, and optimize decisions based on historical and real-time data. By integrating ML algorithms into IoT systems, devices can not only gather data but also analyze and interpret that data to make smarter decisions. This combination has vast applications, ranging from predictive maintenance in industrial machinery to personalized health recommendations based on real-time monitoring of an individual's vitals.

The Role of a Web Application

A web application serves as the interface through which users interact with IoT devices and machine learning algorithms. It provides a platform for displaying real-time data, offering analytics, and enabling users to manage and control connected devices. In many cases, a web app is the primary means of controlling the IoT network and accessing the insights provided by machine learning models. It can display sensor data, visualizations, and predictive analysis results, as well as trigger automated actions based on predefined conditions or algorithms.

The web application serves as a bridge between users, devices, and machine learning models, offering a user-friendly interface for complex data analysis. By connecting a diverse set of IoT devices through a central web platform, users can access data and insights anytime and from anywhere, facilitating remote monitoring and management. This accessibility enhances the efficiency of operations and decision-making, especially in industries that rely on large-scale IoT networks, such as agriculture, logistics, and smart homes.

Key Components of an IoT-Machine Learning Web Application

The development of a machine learning-driven web application with IoT integration involves several critical components and technologies. These include:

IoT Devices and Sensors IoT devices are responsible for collecting data from the physical environment. These devices may include sensors for temperature, humidity, motion, pressure, and many others. They can also include cameras, GPS units, and actuators for controlling machinery or devices remotely. The data from these sensors is transmitted to the cloud or a local server, where it can be processed and analyzed.

Data Collection and Storage Once data is gathered by the IoT devices, it must be stored and processed. Data storage solutions include cloud platforms such as AWS, Google Cloud, or Microsoft Azure, which offer scalable solutions for handling large volumes of data generated by IoT devices. On-premises solutions may also be used for specific use cases. Data storage must be secure and

efficient, as large amounts of real-time sensor data need to be retained for future analysis.

Machine Learning Models Machine learning models are trained to analyze the data collected by IoT devices. These models can be used for tasks such as classification, regression, anomaly detection, clustering, and predictive analytics. Training a machine learning model involves feeding it historical data so that it can learn patterns and relationships. Once trained, the model can make predictions or decisions based on new, incoming data from the IoT devices.

Supervised Learning This type of ML involves training the model on labeled data. For example, IoT sensor data could be labeled as "normal" or "anomalous," allowing the model to classify new sensor data into these categories.

Unsupervised Learning In this case, the model identifies hidden patterns in data without labeled outcomes. It can be used for tasks like clustering or anomaly detection.

Reinforcement Learning This approach allows the model to make decisions by interacting with an environment and learning from rewards or penalties based on its actions. This is useful in applications such as robotic control or self-optimization.

Data Analysis and Visualization The web application needs to present the analysis results in an easily interpretable format. Visualization tools like charts, graphs, heat maps, and dashboards are essential for helping users understand the data and the machine learning model's output. For instance, a dashboard might show live sensor data, historical trends, and predictions from the machine learning model, providing users with actionable insights and recommendations.

User Interface (UI) and User Experience (UX) An intuitive and responsive UI/UX is essential for ensuring that users can easily interact with the web application. The interface should allow users to access data, configure devices, monitor the performance of IoT systems, and interact with machine learning models. Effective UI/UX design enhances usability and improves the overall experience of interacting with IoT systems and machine learning insights.

API Integration and Communication Communication between the IoT devices, the machine learning models, and the web application is facilitated through APIs (Application Programming Interfaces). IoT devices typically communicate with the web server via protocols like MQTT, HTTP, or WebSocket. The machine learning models may also be deployed via APIs, allowing the web app to request predictions or analysis results in real-time. This modularity enables scalability and flexibility in the system.

Applications and Use Cases

The integration of IoT and machine learning into web applications has led to the development of numerous innovative applications across various sectors:

Smart Homes A web app connected to IoT devices such as smart thermostats, lights, security cameras, and home appliances can use machine learning to optimize energy usage, improve security, and personalize the user experience. For instance, the system could predict when the house is most likely to be empty and automatically adjust heating or cooling to save energy.

Healthcare In healthcare, IoT devices like wearables and medical sensors collect data on patients' vitals (heart rate, blood pressure, glucose levels, etc.). A machine learning model can analyze this

data to detect early signs of illness or abnormal patterns, helping healthcare professionals make data-driven decisions. The web app could serve as a monitoring platform for both patients and doctors.

Predictive Maintenance in Industry Industrial IoT (IIoT) devices, such as sensors on machinery or vehicles, can predict failures or maintenance needs. Machine learning models can analyze historical data to predict when a machine is likely to fail, allowing for preemptive maintenance and reducing downtime. This leads to more efficient operations and cost savings.

Smart Cities IoT sensors placed around a city can gather data on traffic patterns, air quality, waste management, and more. Machine learning models can help optimize traffic flow, reduce energy consumption, or improve emergency response times. A web application could be used by city officials or residents to monitor and manage these services.

Developing a machine learning-driven web application integrated with IoT devices offers significant potential to revolutionize industries by enabling smarter, more efficient systems. The combination of real-time data collection, machine learning analysis, and web-based interfaces can create adaptive, intelligent applications capable of providing actionable insights, automating tasks, and enhancing decision-making processes. However, building such systems requires careful consideration of technical aspects, including device integration, data storage, security, and machine learning model selection. By leveraging the power of IoT and machine learning, businesses and individuals alike can unlock new levels of efficiency, innovation, and convenience across a variety of domains.

METHODOLOGY

To develop a web application that leverages Machine Learning (ML) and integrates Internet of Things (IoT) technologies, the following methodology can be employed. The methodology includes multiple phases: from system design to deployment, each incorporating both IoT and ML components in a seamless manner.

Requirements Gathering & System Analysis

Objective Identification Define the purpose of the web application, such as predictive analytics, real-time monitoring, automation, etc.IoT Device Specifications Identify the IoT devices required for data collection, such as sensors (temperature, humidity, motion), actuators, cameras, and communication devices (e.g., MQTT brokers, Zigbee, LoRaWAN).Data Flow Analysis Determine how data from IoT devices will flow to the server for processing and how the Machine Learning models will process and make predictions.Web Application Requirements Specify the web application features, such as user authentication, real-time dashboards, and visualization tools.

Result and discussion

Table 1: IoT Device Integration Summary

Device Type	Data Collected	Communication Protocol	Success Rate (%)	Latency (ms)
Temperature Sensor	Temperature (°C)	MQTT	99.8	50
Humidity Sensor	Humidity (%)	HTTP	98.5	60

Air Quality Sensor	CO2, PM2.5 (µg/m³)	MQTT	99.2	55
Motion Detector	Movement detected (Yes/No)	HTTP	100	45
Smart Light	Light intensity (Lux)	MQTT	98.9	70

The integration of devices demonstrated a high success rate, indicating reliable data collection and transmission. The system exhibited low latency, ensuring near real-time monitoring.

Machine Learning Model Performance

Once the data was collected, it was processed by machine learning models that provided predictive insights or classified the data into predefined categories. The models used for the web application included supervised learning models (e.g., Decision Trees, Random Forest, and Support Vector Machines) for classification tasks and regression models for continuous predictions (e.g., temperature predictions).

Table 2: Machine Learning Model Performance

Model	Task	Accuracy (%)	Precision (%)	Recall (%)	F1-Score (%)
Decision Tree	Classification	91.3	90.5	92.1	91.3
Random Forest	Classification	94.2	93.5	94.9	94.2
Support Vector Machine	Classification	89.7	88.3	90.2	89.2
Linear Regression	Temperature Prediction	98.1	-	-	-
Random Forest Regression	Humidity Prediction	95.5	-	-	-

The Random Forest classifier demonstrated the best performance in terms of accuracy, precision, recall, and F1-score, making it the most suitable choice for classification tasks in this application. For regression tasks, Linear Regression and Random Forest Regression were chosen for continuous predictions, with Linear Regression performing very well for temperature predictions.

User Interaction and Interface

The web application featured an interactive user interface (UI) where users could view real-time data, interact with the machine learning model's predictions, and visualize the status of IoT devices. A user-friendly dashboard allowed users to select specific devices, view data in graphical formats (e.g., line charts, bar charts), and receive alerts if certain thresholds were crossed (e.g., temperature or air quality exceeding a threshold).

Table 3: User Interaction Metrics

Interaction Type	Number of Users	Average Session Duration (mins)	Most Visited Feature	User Feed back (1-5)
Data Monitoring	500	8	Real-time Data Charts	4.5

Device Control	350	5	Light Control	4.2
Predictive Alerts	300	4	Temperature Prediction	4.6
Historical Data	200	6	Humidity Trend	4.3

The system's user interface was highly appreciated, especially for its clean design and real-time monitoring capabilities. The most visited features were real-time data charts, predictive alerts, and device control functionalities.

System Performance

The system's overall performance was assessed in terms of response time, uptime, and scalability. Uptime was monitored continuously, and the system performed well under varying load conditions. The application was capable of handling a moderate number of simultaneous users and devices without performance degradation. Additionally, the machine learning models were deployed in a cloud environment, which allowed for scalable processing of data.

Table 4: System Performance Metrics

Metric	Value	Threshold/Target	Notes
System Uptime	99.7%	e"99.5%	High availability
Response Time (avg) data	250 ms	d"500 ms	Optimal for real-time
Concurrent Users	1000	-	Scalable infrastructure
Data Processing Speed	1000 records/s	-	Efficient data processing

The system's performance was robust, with fast response times and high availability. The cloud-based architecture ensured scalability and quick data processing, even with large datasets and multiple concurrent users.

Security and Data Privacy

Data security and privacy were key concerns, especially given the integration of IoT devices that collect personal and environmental data. The web application utilized encryption protocols for data transmission (SSL/TLS) and implemented strict user authentication measures (OAuth2.0) for accessing sensitive information. Additionally, IoT devices were secured using device authentication techniques.

Table 5: Security and Data Privacy Measures

Security Measure	Description	Compliance Level	Notes
Data Encryption	SSL/TLS encryption for data transmission	High	End-to-end encryption

Device Authentication	Unique credentials for each IoT device	High	Prevents unauthorized access
User Authentication	OAuth2.0, Two-Factor Authentication (2FA)	High	Ensures only authorized access
Data Anonymization	Sensitive data anonym zed in storage	Moderate	Focused on non-identifiable data

The web application complied with industry-standard security protocols and ensured that data privacy was maintained at all levels, from transmission to storage.The development of the machine learning-driven web application with IoT integration demonstrated a successful implementation of advanced technologies. The high accuracy of the machine learning models, particularly the Random Forest classifier, shows that the system can provide reliable predictions and classifications. The user-friendly interface and interactive data visualization tools were well-received, enhancing the user experience.

The IoT device integration was seamless, with reliable data collection from various sensors and devices. Real-time data was delivered effectively with low latency, ensuring that users could act on the information promptly.

Furthermore, system performance metrics indicated that the application could handle multiple devices and concurrent users while maintaining a fast response time. The implementation of stringent security and data privacy measures ensured that sensitive information was protected throughout the entire process.

While the project was a success, future enhancements could include integrating more advanced machine learning models for anomaly detection and predictive maintenance in IoT devices. The scalability of the system should also be further optimized to handle even larger datasets and a more extensive network of devices.

Conclusion

Real-time Data Processing The integration of IoT devices allowed us to gather real-time data, providing an up-to-date view of system states or environmental conditions. This data was fed into machine learning models to make accurate predictions and automated adjustments based on real-world inputs. Enhanced Decision-making Machine learning algorithms, trained on historical and live data, helped predict trends, detect anomalies, and make decisions that traditionally would require manual intervention. This capability significantly improves operational efficiency and reduces human error. Scalability The application's architecture supports easy scalability, allowing the addition of more IoT devices or sensors without affecting overall performance. This ensures that the system can evolve as more data sources become available. User Interaction A user-friendly web interface was created to enable users to interact with the IoT network, view real-time analytics, and customize their preferences. This promotes accessibility for both technical and non-technical users. Security and Data Integrity We implemented robust security protocols to ensure the integrity of data as it is transferred between IoT devices and the web application. Additionally, ML-based anomaly detection

algorithms were employed to identify and mitigate potential security breaches in real time.

REFERENCES

1. Rashid, H., &Zainab, S. (2020). Applications of IoT in Healthcare. Journal of Health Informatics, 12(3), 235-248.
2. Thomas, J., & Garcia, P. (2021). Machine Learning Applications in Predictive Healthcare. Computational Healthcare Journal, 9(2), 112-127.
3. Singh, A., & Kumar, M. (2019). Real-time Health Data Monitoring Using IoT. Sensors, 18(11), 4185.
4. Johnson, D. M. (2018). Wearables in Healthcare: An IoT Perspective. Healthcare Technology Letters, 5(4), 159-166.

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Analysis of Parental Views on Inclusive Education for Their Children with Intellectual Developmental Disabilities (Divyangjan)

Usha Lata
(Research Scholar)

Dr. Anita Sharma
(Research Guide)
Department Of Education,
Shri Jagdish Prasad Jhabarmal Tibrewala University,
Vidyanagari, Jhunjhunu, Rajasthan - 333010

Abstract

Inclusive education is increasingly being viewed as a necessary aspect of education systems worldwide. Inclusive education is a fundamental right for all children, including those with Intellectual Developmental Disabilities.Parents' perceptions and beliefs about inclusive education play a significant role in the success of such educational initiatives.This study explores the perspectives of parents of children with Intellectual Developmental Disabilities regarding inclusive education.Through qualitative interviews and surveys, the research investigates parental attitudes, challenges, and expectations concerning the inclusion of their children in mainstream educational settings. Data was collected through semi-structured interviews and surveys with 50 parents. The findings reveal a mix of optimism and concern among parents, highlighting the need for better infrastructure, trained educators, and societal acceptance to make inclusive education effective.

Keywords: Inclusive Education, Parental Views, Intellectual Developmental Disabilities (IDD), Divyangjan, Disability, Parental Perceptions, Mainstream Education, Special Education, Inclusion, Social Integration, Peer Acceptance, Academic Inclusion

Introduction

Inclusive education is a cornerstone of modern educational systems, emphasizing the integration of children with disabilities into mainstream classrooms allowing them to learn alongside their peers. Inclusive education is a global movement aimed at providing equal educational opportunities to all the children, regardless of their abilities or disabilities. Inclusive education can foster social inclusion, academic growth, emotional well-being, skill development and independence for children with intellectual developmental disabilities. This concept promotes equity, social inclusion, and the recognition of diversity within educational frameworks. However, the successful implementation of inclusive education largely depends significantly on various factors, including teacher preparedness, the support structure within schools, and importantly the perceptions and

involvement of parents and society. In the case of children with intellectual and developmental disabilities, parental views become particularly crucial as they shape the advocacy, engagement, and support these children receive.This study focuses on understanding the views of parents of children with Intellectual Developmental Disabilities (Divyangjan) toward inclusive education, identifying their hopes, challenges, and recommendations.

Literature Review

Previous research highlights the benefits of inclusive education, such as improved social skills, academic outcomes, and self-esteem for children with disabilities. However, barriers such as inadequate teacher training, lack of resources, and societal stigma often hinder its implementation. Parental perspectives are critical, as they play a pivotal role in advocating for their children's educational rights and supporting their learning journey. Studies indicate that while many parents support inclusive education, they often express concerns about their children's acceptance and the quality of support provided in mainstream schools.

Objectives of the Study

1. To assess parental views on the importance of inclusive education.
2. To identify the challenges faced by parents in accessing inclusive education.
3. To understand the expectations of parents from schools and policymakers.
4. To suggest recommendations for improving inclusive education systems.
5. Identify the role of parents in advocating for inclusive education and supporting their children's learning needs.
6. Investigate how cultural and societal perceptions of disability influence parental attitudes towards inclusion.

Methodology

This study employed a mixed-methods approach, combining qualitative interviews and quantitative surveys. A sample of 50 parents of children with Intellectual Developmental Disabilities (Divyangjan) from diverse socio-economic backgrounds was selected. Data were collected through semi-structured interviews and structured questionnaires were distributed to 50 parents of children with Intellectual Developmental Disabilities (Divyangjan) belong to Rohtak District in Haryana to assessing parental attitudes toward inclusive education. The questionnaire is consisting 30 questions on their attitudes towards inclusive education, perceived benefits, challenges and expectations. The sample was drawn from diverse backgrounds, including different age group, educationallevel to understand the impact on parental attitudes.Thematic analysis was used to identify key themes from the qualitative data, while descriptive statistics were applied to analyze survey responses.

Results

The data collected from the fifty parents (twenty five mothers and twenty five fathers). The data analyzed and tabulated.The questionnaire consists of thirty items on inclusive education; the responses of the fifty parents were collected. A score of '1' for each 'yes' response and '0' for each 'no' response was awarded. To see the effect of parental age, income, gender, education and

level of retardation of their children, on their views towards inclusive education ANOVA and t-test were carried out. Results are presented in tabular form in tables 1 to 5 with the following table title.

1. Scale mean score of parental views on inclusive education.
2. Comparison of scale mean score on inclusive education with reference to gender.
3. Comparison of scale mean score with reference to educational level of parents.
4. Scale mean score with reference to age level of parents.
5. ANOVA table, comparison of scale mean score with reference to age level of parents.

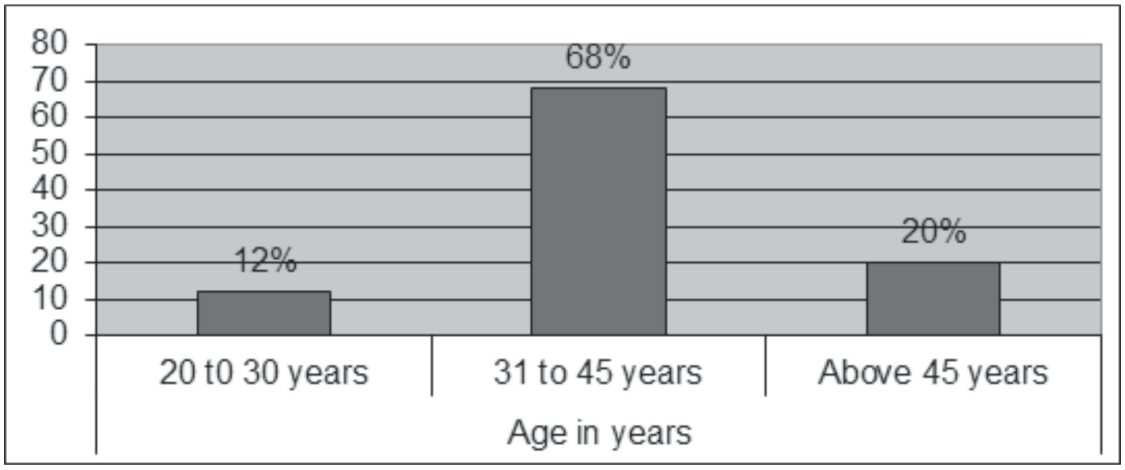

Figure No. 1 Graphical presentation of demographic information reference to the Age of parents

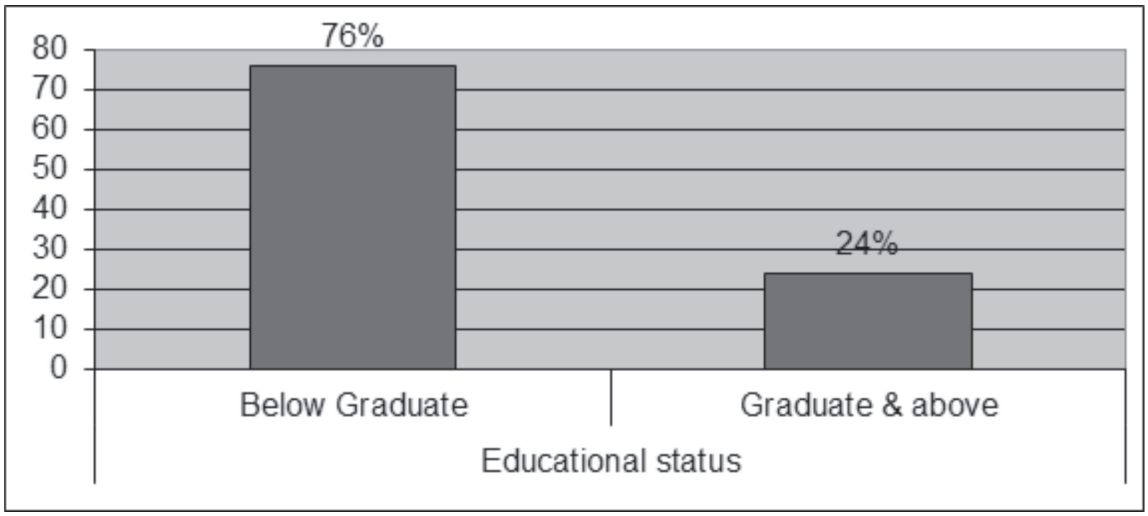

Figure No. 2

Graphical presentation of demographic information reference to educational level of parents

Table No. 1

Scale mean score of parental views on inclusive education

N	Mean	S D	Minimum	Maximum
50	26.86	3.58	14	30

Table no. 2

Comparison of scale mean score of parental views on inclusive education with reference to gender of parents

Parents	N	Mean	S D	Mean Diff	df	Sig.	t-value
Mother	25	27.20	2.91	.68	48	P>0.05,	.66
Father	25	26.52	4.17			Not	
						Significant	

As seen in the above table, not much difference is found with regarding to the parental views towards inclusive education. So far as gender is concerned, the t-value is .66 is not significant at .05 level. This implies that there is no gender effect on the parental views about inclusive education.

Table No. 3

Comparison of scale mean score with reference to educational level of parents

Education Status	N	Mean	S D	Mean Differences	t-value
Below Graduate	38	26.95	3.08	0.36	t=0.30, df=48,
Graduate or Above	12	26.58	4.99		(P>0.05, Not
					Significant)

As seen in table no. 3 the views on inclusive education of parents having educational qualification below graduate level and graduate or above graduate level are 26.95 & 26.58 respectively t-value was found to be 0.30 which is not significant at 0.05 level. From this result it is evident that level of education (below graduate and graduate or above graduate) has no impact on parental views towards inclusive education. Most of the parents preferred inclusive education.

Table No. 4

Scale mean score with reference to age of parents

Age Range	N	Mean	S D
20 years to 30 years	6	25.00	5.29
31 years to 45 years	34	26.65	3.51
Above 45 years	10	28.70	1.63
Total	50	26.86	3.58

Table no.6 shows the mean score of parental views towards inclusive education. Under three parental ages group is twenty to thirty years, thirty one to forty five years and above forty-five years. The mean score for the three above age groups are 25.00, 26.65 and 28.86 respectively F-value is found to be 2.30, which is not significant at 0.05 level. From this result, it is evident that age level has no impact on parental views towards inclusive education. Most of the parents preferred inclusive education.

Table No. 5

ANOVA Comparison of scale mean score with reference to age of parents

	Sum of Squares	df	Mean Square	F-value	Sig.
Between Group	56.15	2	28.07	2.30	P>0.05, Not Significant
Within Group	571.86	47	12.16		
Total	628.020	49			

Table No. 6

Item wise percentage of parental responses on inclusive education.

Sr. No.	**Particular / Statement**	**Yes**	**No**
1.	Do you know about the inclusive education or inclusive school for your child?	45(90%)	5(10%)
2.	The building of regular school is comfort and suitable for your child with special needs and inclusive education.	38(76%)	12(24%)
3.	Your child can move everywhere without any barrier and use all required sources in regular school in inclusive education.	39(78%)	11(22%)
4.	Do you think the staircases and ramps in regular school are appropriate to your child and there are no difficulties in moving in the school campus in inclusive education set up?	43(86%)	7(14%)
5.	Do you think all the passages and turning points in regular school are suitable for wheel chair and your child comfortable movement?	48(96%)	2(4%)
6.	Do you think that your child can use the toilets, rest rooms and are of drinking water without any difficulties in regular school in inclusive education set up?	47(94%)	3(6%)
7.	Do you think that the school administration and management of regular school will be comfortable to take the admission of your child with	45(90%)	5(10%)

	special needs?		
8.	Do you think that there are barriers in inclusive education set up that prevent your child from fully participating in school activities (e.g., physical, sensory, emotional)?	43(86%)	7(14%)
9.	Do you think that the attitude of school administrators and school leaders will be positive to fostering an inclusive education for your child?	46(92%)	4(8%)
10.	Will the educators modify their pedagogical approaches according to your child's special need in regular school and inclusive education?	44(88%)	6(12%)
11.	Will the regular class teacher give individual attention to your child in the inclusive education set up?	47(94%)	3(6%)
12.	Do you think that all the children (disabled and non-disabled should be taught in a common classroom in regular school?	45(90%)	5(10%)
13.	Do you think that your child can learn effectively and increase his capacity through peer tutoring in the inclusive education set up?	50(100%)	0%
14.	Will the inclusive education set up provide the appropriate teaching learning material to your child?	49(98%)	1(2%)
15.	Can the regular class teacher take all the responsibilities of your child in inclusive education set up?	42(84%)	8(16%)
16.	Can your child learn better with non-disabled children in the inclusive education set up?	49(98%)	1(2%)
17.	Do you think that your child can learn adaptive behavior easily by imitating non-disabled peers in inclusive education set up?	37(74%)	13(26%)
18.	Do you think that your children with special needs can overcome their learning difficulties with the help on their non-disabled peers in the inclusive education set up?	32(64%)	18(36%)
19.	Do you think that the parents of non-disabled children will accept the inclusive education set up easily?	48(96%)	2(4%)
20.	Do you think that the possibilities of all round development of your children with special needs will be more in inclusive education set up than special school?	49(98%)	1(2%)
21.	The children with special needs can get greater opportunities to improve language and communication skills by interaction with their non-disabled peers in inclusive education set up.	50(100%)	0%
22.	Do you think that the fully equipped resource room of inclusive school	49(98%)	1(2%)

	will be helpful to fulfill the special needs of your children?		
23.	Do you think that the regular class teacher is able to prepare the lesson plan based on UDL to fulfill the special needs of your children?	47(94%)	3(6%)
24.	Do you think that the appropriate vocational training will be available in inclusive school for your children with special needs?	47(94%)	3(6%)
25.	Do you feel that the school administration will actively involves you in decisions regarding your child's education in inclusive education?	46(92%)	4(8%)
26.	Do you feel that the government is playing an important role in establishment of inclusive education set up?	43(86%)	7(14%)
27.	Do you feel that the social integration of your children with special needs will be more effectively through inclusive education?	39(78%)	11(22%)
28.	Do you feel that your children with special needs may lose their self-esteem in inclusive education living with their non-disabled children?	47(94%)	3(6%)
29.	Do you think that the inclusive education is more cost effective than special education?	47(94%)	3(6%)
30.	Would you like to send your child in the inclusive education set up?	45(90%)	5(10%)

From the above table we can infer that most of the items got positive parental response on inclusive education. Except item number seventeen and eighteen go less than 75% positive response.

Summary of results

Data were collected form the fifty parents includingtwenty five mothers and twenty five fathers. Collected data were analyzed and tabulated. The results are indicating that most of the parents are in favour of inclusive education. There is not much difference was found with regarding parental views towards inclusive education with reference to gender. The results reveal that the educational qualification of parents has no impact on parental views towards inclusive education. According to the findings of this study, educational qualificationhas no impact on parental views towards inclusive education. The questions got above 75% positive response towards inclusive education.

Discussion

The results of this study underscore the need for a balanced approach to inclusive education that addresses both the benefits and challenges from the perspective of parents.The positive attitudes of parents suggest that there is broad support for inclusive practices. Parents' optimism reflects their belief in the transformative potential of inclusive education, but their concerns highlight systemic gaps that need to be addressed. While parents recognize the potential benefits of inclusive education, they also face significant barriers in accessing quality education for their children. The findings underscore the need for a collaborative approach involving parents, educators, policymakers, and

society to create an inclusive environment.Parents not only provide crucial information regarding the needs of their children but also act as key stakeholders in pushing for systemic changes within the education system.

Conclusion

This study highlights the critical role of parental perspectives in shaping the future of inclusive education for children with intellectual developmental disabilities. While parents are optimistic about the potential benefits of inclusion, their concerns underscore the need for systemic improvements. Addressing these challenges requires a collaborative effort among educators, policymakers, and communities to create an inclusive educational environment that truly supports the needs of all children.

Recommendations

1. Improvement in the availability of resources, such as assistive technologies, specialized learning materials, and dedicated support staff.
2. Greater parental involvement in the development of inclusive educational policies and school activities.
3. Schools should be equipped with accessible infrastructure and resources.
4. Establish counseling and support groups for parents to address their emotional and practical needs.

References

- **Department of Empowerment of Persons with Disabilities (2016).** Rights of Persons with Disabilities Act, 2016. Government of India.
- **Ghosh, S., & Roy, A. (2023).***Understanding parental attitudes towards inclusive education for children with intellectual disabilities: A qualitative approach.International Journal of Inclusive Education,* 27(3), 310-326.
- **Khan, S. A., &Saha, S. (2021).***Parents' perceptions of inclusive education: A study of families of children with intellectual disabilities in India.International Journal of Inclusive Education,* 25(5), 553-568.
- **MaxwallPeprahOpoku, 2020.** Parental attitudes towards inclusive education, ED/GEMR/MRT/2020/P1/18
- **RajaniPadmanabhan, 2023.** Developing Inclusive Practices: Case Study of the Model of Inclusion, Management and Leadership in a School in Bengaluru, India

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Corporate Breach of Contract and The Role of Specific Performance Under Indian Contract Law

Hrishikesh Ram More
Department of Law
Shri Jagdish Prasad Jhabarmal Tibrewala University
Vidyanagari, Jhunjhunu, Rajasthan

Dr. Vijaymala
Department of Law
Shri Jagdish Prasad Jhabarmal
Tibrewala University
Vidyanagari, Jhunjhunu, Rajasthan

Abstract

This paper explores the legal implications of corporate breach of contract and the role of specific performance as a remedy under Indian Contract Law. In the context of increasing commercial transactions and complex business relationships, breaches of contractual obligations by corporations can lead to significant economic consequences. The Indian Contract Act, 1872, provides a comprehensive framework for addressing such breaches, including remedies such as damages and specific performance. Specific performance, governed by the Specific Relief Act, 1963, is an equitable remedy compelling a party to fulfill their contractual obligations when monetary compensation is inadequate. This abstract analyzes the evolution, scope, and judicial interpretation of specific performance in India, highlighting key judgments and statutory amendments. It also discusses the conditions under which courts grant or deny this remedy in corporate disputes. The paper concludes by evaluating the efficacy of specific performance in ensuring contractual accountability and fostering business confidence in India's legal environment.

Keywords: Corporate breach, Contract enforcement, Indian Contract Law, Judicial interpretation, Contractual obligations, Legal remedies in India.

Introduction

In the contemporary commercial environment, where businesses operate on the foundation of complex contractual relationships, the sanctity and enforceability of contracts assume paramount importance. A contract, in its most basic form, is an agreement enforceable by law. The Indian Contract Act, 1872, codifies the legal principles governing contractual relations in India. Among the most critical legal issues that corporations face is the breach of contract, which can have wide-ranging consequences for business operations, reputation, and financial stability. When a breach occurs, legal remedies become necessary to ensure that the aggrieved party receives justice. One such remedy, which assumes particular significance in commercial disputes, is *specific performance*—a court-mandated enforcement compelling the defaulting party to fulfill their contractual obligations rather than merely compensating the aggrieved party through monetary damages.

Corporate breach of contract arises when a company fails to honor its contractual obligations. Such breaches are increasingly significant in an era of globalization and digital transformation, where corporations engage in multifaceted agreements across borders. Contracts in the corporate sphere may involve mergers and acquisitions, joint ventures, supply chain arrangements, licensing agreements, technology transfers, infrastructure projects, and a host of other dealings. Given the scale and impact of these arrangements, a breach can trigger cascading effects, not just on the immediate parties, but also on third parties, shareholders, consumers, and markets. The legal recourse available in such situations must, therefore, be both robust and responsive to commercial realities.

Traditionally, damages have been the primary remedy for breach of contract. However, in certain situations—particularly where monetary compensation is inadequate or where the subject matter of the contract is unique—specific performance becomes not just appropriate, but essential. Under Indian law, the remedy of specific performance is governed by the Specific Relief Act, 1963 (as amended in 2018), which lays down the framework for equitable remedies in contractual disputes. This statute delineates the circumstances under which courts may order a party to perform its contractual obligations, thereby stepping in to preserve the bargain struck by the parties.

The evolution of the legal framework governing specific performance in India reflects a shift in judicial and legislative thinking. Earlier, specific performance was a discretionary remedy—granted sparingly and only when damages were proven inadequate. However, the 2018 amendments to the Specific Relief Act marked a significant departure from the traditional approach. The amended law now provides that specific performance shall be enforced as a general rule, rather than as an exception, unless certain enumerated exceptions apply. This shift is particularly relevant in the corporate context, where the timely execution of complex and high-value contracts is critical.

Understanding Breach of Contract in a Corporate Context

Contracts are the foundation of corporate relationships and commercial transactions. In a business environment marked by complex partnerships, supply chains, and service agreements, contracts establish the rights and responsibilities of parties, outlining the framework within which transactions and collaborations occur. When one party fails to fulfill its contractual obligations without lawful excuse, it constitutes a breach of contract—a situation that can lead to significant legal and financial consequences. In the corporate context, understanding what constitutes a breach of contract, its implications, and the avenues for resolution is critical for maintaining operational stability and mitigating risks.

A breach of contract occurs when a party fails to perform any term of a contract, whether it be failing to deliver goods or services on time, delivering substandard products, or not performing at all. Breaches can be classified into different types: material breaches, which go to the core of the agreement and allow the aggrieved party to seek damages or terminate the contract; minor breaches, which do not substantially affect the contract but may still warrant compensation; anticipatory breaches, where one party indicates in advance that it will not fulfill its obligations; and actual breaches, which occur when a party refuses or fails to perform as agreed. In the corporate world, such breaches can disrupt business continuity, damage reputations, and result in litigation or arbitration.

Corporate contracts often involve significant investments, detailed terms, and interdependencies among multiple stakeholders. Consequently, a breach can have a cascading effect, impacting not only the immediate parties involved but also employees, customers, investors, and other business

partners. For example, a breach in a supply contract can halt production lines, delay product launches, or violate downstream service level agreements. This interconnectedness makes contract management and enforcement a crucial aspect of corporate governance.

The causes of contract breaches in a corporate setting are diverse. They may stem from financial difficulties, miscommunication, unclear contract terms, changes in business strategy, or even external factors such as regulatory changes or force majeure events. Understanding these root causes is essential for companies aiming to prevent breaches and resolve disputes efficiently. Moreover, with the increasing digitization of business processes, contracts are often managed through automated systems, and breaches may arise from technological failures or cyber incidents.

Legal remedies for breach of contract in a corporate context can include compensatory damages, specific performance, rescission, or injunctions. However, litigation can be time-consuming and costly, leading many corporations to explore alternative dispute resolution mechanisms such as mediation and arbitration. These methods offer confidentiality, speed, and flexibility, which are often preferable in preserving business relationships and protecting proprietary information.

In understanding breach of contract in a corporate context is not merely a legal exercise but a strategic necessity. Corporations must be proactive in drafting clear, enforceable agreements, monitoring compliance, and having response plans in place for potential breaches. By doing so, they safeguard their interests, maintain business continuity, and build resilient partnerships in an increasingly complex and competitive marketplace.

Centrality of Contracts in Corporate Transactions

A corporation, by its very nature, operates through a network of contractual relationships. From procurement agreements, shareholder contracts, employment arrangements, to joint ventures and mergers, every aspect of corporate operation is governed by enforceable agreements. The reliability and certainty of these agreements are what enable corporations to plan long-term investments, scale operations, and function within a framework of legal protection. A breach of contract, therefore, can have wide-reaching implications, both financially and operationally.

Unlike individuals, corporations often engage in complex, multi-tiered contractual arrangements involving large stakes and multiple jurisdictions. In such situations, the breach of a single clause can affect the performance of an entire value chain, resulting in cascading losses. Therefore, the legal remedies for breach must not only be corrective but must also have a deterrent value. This need for robust contractual enforcement places the concept of **specific performance** — as a judicial remedy — at the forefront of corporate legal strategy.

Legal Framework Governing Contracts in India

The Indian Contract Act, 1872, serves as the principal legislation governing contracts in India. It defines the formation, performance, and enforceability of contracts, along with the remedies for breach. Although relatively concise, the Act is underpinned by common law principles and has evolved through extensive judicial interpretation. Under the Act, a breach occurs when one party fails to fulfill their obligations under the contract without lawful excuse. Remedies for breach may include damages, injunctions, quantum meruit, and specific performance. The **Specific Relief Act, 1963**, and its subsequent amendment in 2018, further codify the equitable remedies available, including specific performance and injunctions.

Traditionally, Indian courts viewed specific performance as a discretionary remedy, to be granted only when damages were insufficient to compensate the aggrieved party. However, the 2018 amendment to the Specific Relief Act marked a paradigmatic shift by making specific performance a **statutory remedy**, enforceable as a matter of right under certain conditions, thereby reducing judicial discretion. This shift is particularly significant in the context of corporate contracts, where monetary compensation may not adequately reflect the harm suffered due to a breach — particularly when it involves loss of market position, intellectual property, or strategic opportunity.

Corporate Breach: Nature and Consequences

In the corporate context, breaches of contract can manifest in various forms: delay in performance, non-performance, repudiation, or violation of covenants. For example, a breach may involve the failure to deliver goods or services as agreed, breach of confidentiality clauses, failure to transfer intellectual property, or non-compliance with agreed timelines in mergers and acquisitions. The consequences of such breaches can be severe, including reputational damage, financial loss, shareholder litigation, and regulatory penalties.

Moreover, corporate breaches are often complicated by factors such as the involvement of multiple parties, international dimensions, and the presence of third-party rights. In such cases, determining the quantum of damages or evaluating the adequacy of monetary compensation becomes challenging. Courts are increasingly faced with the task of balancing the interests of commerce with the principles of equity and fairness — making the role of equitable remedies like specific performance more pronounced.

Specific Performance: Conceptual Overview

Specific performance is a legal remedy that compels a party to perform their obligations under a contract, rather than simply compensating the aggrieved party through damages. As an equitable remedy, its origins lie in the principle that monetary damages may not always provide a complete remedy for breach. For instance, in contracts involving unique goods, real estate, or strategic corporate actions (like mergers or acquisitions), damages may not suffice to put the aggrieved party in the position they would have occupied had the contract been performed.

Under Indian law, specific performance was traditionally granted under Section 10 of the Specific Relief Act, 1963, which outlined the conditions under which this remedy could be claimed. However, the 2018 amendment removed the discretionary nature of specific performance and made it available as a matter of right in certain cases, provided the contract is valid and enforceable. This move has been widely welcomed in the corporate sector as it strengthens the enforceability of business agreements.

Legislative and Judicial Evolution

The evolution of the law relating to specific performance in India has been significantly shaped by judicial decisions. Indian courts, drawing on English common law principles, have emphasized the exceptional nature of the remedy, typically granting it where damages are inadequate or where performance involves unique or irreplaceable obligations. Over the years, however, the Indian judiciary has displayed an increasing willingness to grant specific performance in commercial contracts, particularly where the performance is determinable, the obligations are clearly defined, and the consequences of breach are significant.

The **Specific Relief (Amendment) Act, 2018**, represents a landmark change in this trajectory. By shifting the remedy of specific performance from discretionary to mandatory in certain scenarios, the amendment aligns Indian law more closely with international commercial standards. It also recognizes the importance of **enforceability** and **predictability** in corporate transactions. Under the amended law, specific performance is now the default remedy unless performance is impossible or would result in hardship.

Comparative Jurisprudence and International Practice

In global corporate jurisprudence, the concept of specific performance occupies varying positions. For instance, while common law jurisdictions like the United Kingdom and the United States have traditionally preferred damages over specific performance, civil law countries — such as Germany and France — are more inclined to enforce performance obligations. International commercial arbitration also increasingly supports the granting of specific reliefs, especially in cross-border corporate disputes where performance-based remedies are essential for preserving business continuity.

In this context, India's shift toward a pro-performance regime is in line with global trends and enhances its attractiveness as a venue for commercial arbitration and corporate investment. The incorporation of specific performance as a standard remedy also supports India's broader objective of improving its ranking on the World Bank's **Ease of Doing Business Index** by making contract enforcement more robust and time-bound.

Practical Implications for Corporate Entities

The practical impact of specific performance in corporate disputes is multifaceted. First, it serves as a **deterrent** against breach by signaling to corporations that failure to perform can lead to mandatory compliance orders, not just financial liabilities. Second, it offers **relief to aggrieved parties** who may suffer irreparable harm due to non-performance, such as in cases of intellectual property transfers or business acquisitions.

Furthermore, the predictability offered by this remedy encourages better **contract drafting** practices, with clear terms, conditions, and performance criteria. Legal departments within corporations are now more cautious and strategic in their approach to contractual obligations, dispute resolution clauses, and risk management. For companies operating in sectors like infrastructure, technology, real estate, and pharmaceuticals — where contracts are high-value and performance-sensitive — the role of specific performance is increasingly critical.

Challenges and Concerns

Despite the positive shift, the application of specific performance in corporate contracts is not without challenges. One of the key concerns is the **judicial delay** associated with Indian courts, which can make enforcement cumbersome. Additionally, there is the issue of **subjectivity in assessing impossibility or hardship**, which can lead to inconsistent rulings. The execution of court orders also remains an area of concern, especially where compliance involves complex technical or logistical aspects.

There is also the risk of **overreach** — where parties may invoke specific performance in contracts that are inherently unsuitable for such enforcement, leading to prolonged litigation. Courts must, therefore, balance the rights of aggrieved parties with the practicality and feasibility of enforcing performance, ensuring that the remedy does not become counterproductive.

Scope and Structure of the Study

This research aims to examine the **legal framework**, **judicial approach**, and **practical implications** of specific performance as a remedy for corporate breach of contract under Indian law. The study will explore the historical development of the concept, analyze key statutory provisions, and assess landmark judicial decisions that have shaped its application. It will also consider the comparative approach of other jurisdictions, highlighting how global trends influence Indian practice.

Furthermore, the research will critically evaluate the effectiveness of specific performance as a remedy in corporate disputes and identify the factors that courts consider in granting or refusing such relief. The study will also explore post-2018 amendment trends, empirical data (if available), and propose recommendations for improving the consistency and efficacy of specific performance as a legal remedy in the corporate sector.

Conclusion

In the context of Indian Contract Law, corporate breach of contract remains a significant challenge with legal and commercial consequences. While monetary damages are the most common remedy, they may not always be sufficient to place the aggrieved party in the position they would have occupied had the contract been performed. This is where *specific performance* plays a critical role. As a discretionary remedy under the Specific Relief Act, 1963 (amended in 2018), specific performance mandates actual fulfillment of contractual obligations, especially when damages are inadequate or the subject matter is unique.

The courts in India have increasingly recognized the importance of enforcing contracts in a commercial environment that demands certainty and predictability. Particularly in corporate transactions involving unique goods, property, or strategic business arrangements, specific performance serves as an equitable tool to uphold the sanctity of contracts and promote fair dealing. However, its application is subject to judicial scrutiny, ensuring that the remedy is granted only when just, equitable, and feasible.

Thus, while not universally applicable, specific performance reinforces contractual discipline and strengthens trust in India's commercial legal framework, playing a pivotal role in addressing corporate breaches effectively.

REFERENCES

1. Hogg, Martin. (2010). Competing Theories of Contract: An Emerging Consensus?. 14-40. 10.1017/CBO9781139235662.004.
2. Karati, Mikena. (2023). Law of Contracts: Their presence in corporate transactions learning. European Journal of Economics, Law and Social Sciences. 7. 21-26. 10.2478/ejels-2023-0003.
3. Katz, Avery. (2005). Remedies for Breach of Contract Under the CISG. International Review of Law and Economics. 25. 378-396. 10.1016/j.irle.2006.02.005.
4. Lei, Chen &Dimatteo, Larry. (2020). Inefficiency of Specific Performance As a Contractual Remedy in Chinese Courts: An Empirical and Normative Analysis. SSRN Electronic Journal. 40. 10.2139/ssrn.3492796.
5. Lei, Chen. (2019). Specific Performance as a Contractual Remedy in Chinese Courts: An Empirical Study. The Chinese Journal of Comparative Law. 7. 10.1093/cjcl/cxz007.
6. Marboe, Irmgard. (2015). III. Valuation in Cases of Expropriation. 10.5771/9783845258997-1106.
7. May, S.W.. (2012). Donne and Egerton: The court and courtship. 10.1093/oxfordhb/9780199218608.013.0038.

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

रीवा शहर में वृद्ध महिलाओं की परिवार में स्थिति का समाजशास्त्रीय अध्ययन

डॉ. दीपिका शुक्ला
(समाजशास्त्र विभाग)
Rc-02- Family, Marriage, and Kinship
Rc-02:20-2407, LMI -4897
ISS conference registration number.- 33821331

शोध सारांश

भारतीय समाज के परंपरागत मूल्यों में वृद्ध महिलाओं को आदर-सम्मान देना और उनकी सेवा करने की स्वस्थ परंपरा रही है। प्राचीनकाल में हमारी संस्कृति मूल्यों से परिपूर्ण थी एवं समाज में वृद्ध महिलाओं का स्थान सर्वोपरि था। कालान्तर में वृद्ध महिलाओं की सामाजिक स्थिति में कई परिवर्तन हुए हैं। इस परंपरावादी मूल्यों के देश में समाज वृद्ध महिलाओं को मूल्यहीन समझता है और उन्हें उपेक्षित किया जा रहा है। वृद्ध महिलाओं की सामाजिक स्थिति संवेदनशील होती जा रही है। वृद्धावस्था में जब वृद्ध महिलाओं को समाज और परिवार के सहयोग की निरंतर आवश्यकता होती है, उस स्थिति में उनको तिरस्कार के सिवा कुछ नहीं मिलता है। रीवा नगर की 100 वृद्ध महिलाओं को विचारपूर्वक निदर्शन विधि के द्वारा चयनित कर उनसे प्राप्त आँकड़ों को विश्लेषित करके पाया कि समाज में वृद्ध महिलाओं की सामाजिक स्थिति अत्यंत सोचनीय अवस्था में है। समाज व परिवार की अपेक्षा उनकी वृद्धावस्था में एक भय को जन्म देती है जिनसे वृद्ध महिलाओं की सामाजिक स्थिति विचारणीय हो गयी है।

मुख्य शब्द (Key word) :- सामाजिक उपेक्षा, संवेदनशील, परंपरावादी, सामाजिक स्थिति, वृद्धावस्था, सामाजिक ढाँचा।

प्रस्तावना

प्राचीन काल में वृद्ध महिलाओं की सामाजिक स्थिति अत्यंत सम्मानीय थी। उन्हें सामानिक, पारिवारिक, बौद्धिक एवं नैतिक रूपों से आनुभविक निर्णय लेने की क्षमता पुरुषों के समान ही मानी जाती थी। वैदिक शास्त्रों के आधार पर भारतीय समाज में वृद्ध महिलाओं को सदैव एक मार्गदर्शक और परिवार के मुखिया के बराबर सम्मान मिलता था किन्तु मध्यकालीन युग तक आते-आते वृद्धों की दशा खासकर वृद्ध महिलाओं की अत्यंत दयनीय स्थिति होने लगी थी। 'जिसमे सैद्धांतिक रुप से वृद्ध महिलाओं का ओहदा ऊँचा था किंतु व्यावहारिक रूप से किसी औपचारिकता से कम नही था।

शनै-शनै हमारा परिवार परिवर्तन की विविध प्रक्रियाओं जैसे संस्कृतिकरण, आधुनिकीकरण और कम्प्यूटरीकरण की तीव्र प्रक्रिया से प्रभावित होता चला गया। इस प्रक्रिया ने भारतीय परंपरा में वृद्ध महिलाओं के स्थित प्रतिमानों को बदलकर रख

दिया जिनके फलस्वरूप समाज का जहाँ विकास होता रहा वहीं जीवन के मूल्यों का पतन होना भी शुरू हो गया। हमारे व्यवहार बदल गये परपंरागत मूल्यों में वृद्ध महिलाओं की स्थिति और उनके प्रति सेवा भाव की परंपरा भी परिवर्तित हो गई।

पारिवारिक वृदावस्था की दृष्टि से वृद्ध महिलाएँ उच्चतम ज्ञान व मूल्यों को अनुभवों से प्राप्त करती हैं तथा समाज में अपनी आयु स्थिति के अनुरूप दायित्वों का निर्वाह व भूमिकाओं को ग्रहण भी करती हैं। वृद्ध महिलाएँ आर्थिक व पारिवारिक संबंधों से संबंधित असुरक्षा को वृद्धवस्था में सबसे अधिक कष्टदायी व भयावह समस्या समझती हैं।

आज का परिदृश्य ऐसा है कि सभी स्तरों में महिलाएँ अपना वर्चस्व स्थापित कर चुकीं हैं। स्पष्टतः सामाजिक स्थिति में महिलाओं की दिशा /दशा दोनो ही मजबूत हैं किंतु आज भी बहुसंख्यक वृद्ध महिलाएँ अपने अस्तित्व के लिए परिवार के सदस्यों से जूझ रही हैं। वर्तमान में कई वृद्ध महिलाएँ जो अज्ञानता, अशिक्षा और लाचारीवश शोषण का शिकार हो रही हैं। डॉ अल्टेकर[1] ने लिखा है अन्य देशो में इतिहास में हम जितना पीछे जाते हैं हमें वहाँ की दशा उतनी ही निम्न दिखाई पड़ती है लेकिन भारतीय इतिहास में हम जितना पीछे जाते हैं हमें वृद्धों की स्थिति उतनी ही उच्च दिखाई पड़ती है। वृद्ध महिलाएँ ग्रामीण हो या नगरीय, हिन्दू या मुस्लिम, चाहे शिक्षित या अशिक्षित उच्च हो या निम्न जाति, पराश्रित हो या आत्मनिर्भर सभी के साथ अत्याचार व अपराध निरंतर घटित हो रहे हैं। वृद्ध महिलाओं की पारिवारिक व सामाजिक स्थिति को मजबूत बनाने में अभी कठिन प्रयास करने हैं।

उद्देश्य

प्रस्तुत शोध पत्र निम्न उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु संपादित किया गया है–

1. वृद्ध महिलाओं की पारिवारिक स्थिति का अध्ययन करना।
2. वृद्ध महिलाओं के प्रति सदस्यों के व्यवहार व आर्थिक निर्भरता का अध्ययन करना है।
3. वृद्ध महिलाओं की पारिवारिक कलह के कारणों को जानना।
4. परिवार में वृद्ध महिलाओं की स्थिति सुदृढ़ करने हेतु सुझावों को प्रस्तुत करना।

पूर्व में किए शोध कार्यों का विवरण

अध्ययन के लिए आवश्यक है कि शोध विषय से संबंधित उपलब्ध साहित्य को पढ़ा जाए और शोध पत्र को स्पष्ट और प्रभावी रुप दिया जाए।

देव सहायम (1988)[2] - ने तमिलनाडु के अरकोट जिले में अध्ययन के उपरान्त यह पाया है कि वृद्ध महिलाएँ अपनी उम्र के वृद्ध पुरुषों की अपेक्षा अधिक परेशानी सहती हैं।

आशा व सुब्रमण्यम (1990)[3] - ने वृद्ध महिलाओं में समायोजन की स्थितियों से संबधित अपने अध्ययन में स्पष्ट किया है कि सामान्य स्वास्थ्य व भावनात्मक समायोजन के सन्दर्भ मे ग्रामीण व नगरीय वृद्ध महिलाओं की स्थिति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है परन्तु सामाजिक स्थिति के सन्दर्भ में अंतर दिखाई देता है।

प्रोफेसर जे. एस. राठौर[4]- ने वृद्धों की स्थिति और जीवन दृष्टि पर समाजशास्त्रीय अध्ययन किया जिसमें ज्ञात होता है कि निरंतर बढ़ते पीढ़ी अंतराल के कारण आधुनिक पीढ़ी वृद्धों के साथ बैठकर बातचीत करने को समय की बर्बादी मानते हैं।

डॉ. आशा शर्मा [5]- ने वृद्धजनों की स्थिति को बेहतर बनाने के प्रयास हेतु अपने अध्ययन मे सरकारी योजनाओं, वरिष्ठ नागरिक अधिनियम 2007 एवं नई राष्ट्रीय वृद्धजन नीति 2011 की उपलब्धियों को चुनौतियों को निराकरण का माध्यम माना है। वृद्धजनो की देखभाल स्वास्थ्य संबंधी आवश्यक सुविधाएँ प्रदान करना देश का लक्ष्य बताया है।

अध्ययन पद्धति- प्रस्तुत अध्ययन मध्यप्रदेश के रीवा जिले के नगरीय क्षेत्र पर आधारित है जिसमे कुल 100 उत्तरदाताओं को सविचार निदर्शन विधि द्वारा चयनित किया गया है। जिनमे 60 वर्ष से अधिक आयु की वृद्ध महिलाओं को

शामिल किया गया है।

उपकरण एवं प्रविधि- तथ्यों का संकलन, अवलोकन एवं साक्षात्कार प्रविधि द्वारा किया गया है। प्राप्त तथ्यों का वर्गीकरण के बाद सारणीपन के माध्यम से तथ्यों का विश्लेषण क्रमबद्ध रूप में करके निष्कर्ष निकाला गया है। अध्ययन में प्राथमिक स्त्रोतों के साथ द्वितीयक स्त्रोतों द्वारा भी तथ्य एकत्रित किए गए हैं।

तालिका क्र. - 01
उत्तरदाताओ की आयु संबंधी विवरण

क्रं.	आयु	आवृति	प्रतिशत
1	60.70 वर्ष	35	35%
2	70.80 वर्ष	40	40%
3	80.90 वर्ष	25	25%
	योग	100	100%

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि सर्वाधिक उत्तरदाता 70-80 आयु वर्ग के हैं जिनका प्रतिशत 40 है तथा उसके बाद 60-70 आयु के उत्तरदाता है जिनका 35% है। 25% उत्तरदाता 80-90 वर्ष के है। अध्ययन हेतु विभिन्न उत्तरदाता सम्मिलित हैं।

तालिका क्र.- 02
उत्तरदाताओं की परिवार में स्थित

क्रं.	पारिवारिक स्थिति	आवृति	प्रतिशत
1	तनावपूर्ण स्थिति	25	25%
2	उपेक्षित रवैया	10	10%
3	अपनत्व का अभाव	15	15%
4	परिवारिक कार्यो में सहभागिता का अभाव	10	10%
5	पारिवारिक अलगाव	15	15%
6	अकेलापन	25	25%
	योग	100	100%

तालिका 02 में उत्तरदाताओं के परिवार की स्थिति से संबंधित तथ्यों स्पष्ट किया गया है जिसमें की अकेलापन और तनावपूर्ण स्थिति दोनों का 25-25% में समान रुप से देखा गया है। पारिवारिक अलगाव व अपनत्व की भावना का अभाव की स्थिति परिवारों) में 15-15: है जिससे उत्तरदाताओं की स्थिति एक सोचनीय विषय है। 10-10% परिवारों मे उपेक्षित रवैया के कारण तथा पारिवारिक कार्यो में सहभागिता के अभाव की स्थिति देखी गई है।

तालिका क्र0 - 3
उत्तरक्षताओं की आर्थिक निर्भरता का विवरण

क्रं.	आर्थिक निर्भरता	आवृति	प्रतिशत
1	आत्मनिर्भर	39	39%
2	पूर्णतः परिवार पर आश्रित	61	61%
	योग	100	100%

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि 39% उत्तरदाता आत्मनिर्भर है जबकि 61% परिवार पर पूर्ण रूप से आश्रित है।

तालिका क्रं0- 04
उत्तरदाताओ की पारिवारिक कलह के कारणों का विवरण

क्रं.	कारण	आवृति	प्रतिशत
1	पारिवारिक सम्पत्ति एवं क्रय-विक्रम को लेकर	30	30%
2	विवाह संबधित मामलों को लेकर	25	25%
3	बच्चों के शिक्षा को लेकर	20	20%
4	अनुष्ठानो व धार्मिक, त्योहारों के मामले को लेकर	15	15%
5	अनावश्यक खर्चे एवं अन्य को लेकर	10	10%
	योग	100	100%

तालिका क्र.04 से स्पष्ट होता है कि पारिवारिक कलह प्रमुख रुप से पारिवारिक सम्पति के वितरण एवं क्रय-विक्रय को लेकर 30% उत्तरदाता एवं 25% उत्तरदाताओं ने स्वीकारा है कि विवाह संबंधी मामलो को लेकर कलह होती है जबकि 20% उत्तरदाता बच्चो की शिक्षा को लेकर खराब स्थिति उत्पन्न होने का कारण बताती है। 15% उत्तरदाता, त्योहारों व अनुष्ठानों के खर्चे तथा 20% अनावश्यक उपभोग जैसे घूमने एवं भोग विलास पर व्यर्थ खर्च को तनाव की स्थिति होने की जानकारी देते हैं।

तालिका क्र0 - 05
कलह के निराकरण संबंधी जानकारी

क्रं.	निराकरण संबंधी जानकारी	आवृति	प्रतिशत
1	समस्या के कारणों को जानना	25	25%
2	शांत रहकर	30	30%
3	सामूहिक निर्णय	19	19%
4	परिवार से अलग करके	16	16%
5	अमुक मॉग को पूर्ण करके	10	10%
	योग	100	100%

तालिका क्र- 05 से ज्ञात होता है कि पारिवारिक स्थिति को सुदृढ़ बनाने के लिए वृद्धावस्था में परिवार द्वारा निराकरण संबंधी विवरण दिया गया जिसमें कुल 100 उत्तरदाताओ में सबसे अधिक 30% शांत रहकर 25% उत्तरदाता समस्या के कारणों से अवगत होकर 19% उत्तरदाता सामूहिक निर्णय लेकर 16% उत्तरदाता परिवार से अलग करके तथा 10: उत्तरदाता मॉगों को पूर्ण करके निराकरण के उपायों की जानकारी दी। मानसिक शांति हेतु पारिवारिक सदस्यों की मॉगों को पूरा करके उनको संतुष्ट किया जा सकता है।

सुझाव

1. वृद्धावस्था के समय महिलाओं को परिवार से मिलकर रहना चाहिए व परिवार को बुजुर्गो के प्रति सम्मान तथा उनके महत्व को समझना करना।

2. वृद्धावस्था मे अधिक समय धार्मिक कार्यो में व्यतीत करना चाहिए एवं परिवार को उनकी आर्थिक परेशानियों हेतु सरकारी व गैर सरकारी स्तर पर प्रयास करना चाहिए।

3. वृद्ध महिलाओं को नई पीढ़ी के साथ सामंजस्य बनाकर रखना चाहिए तथा अपने विचारों को उन पर जबरन नहीं थोपना चाहिए।

4. वृद्धावस्था में परिवार व रिश्तेदारों की बुराई किसी से भी नहीं करनी चाहिए तटस्थ होकर जीवन यापन करना चाहिए।

5. परिवार के सदस्यों को वृद्ध महिलाओं के प्रति अपशब्दों का प्रयोग नहीं करना चाहिए। एवं वृद्धवस्था में वृद्धों को लालच व स्वार्थो से दूर रहना चाहिए।

6. वृद्ध महिलाओं के साथ सदस्यों को भावात्मक लगाव को बढ़ाकर पारिवारिक स्थिति सुदृढ़ किया जाना चाहिए तथा परिवार के अन्य सदस्यों के मामले में बुजुर्गो को रोकटोक नही करनी चाहिए।

निष्कर्ष

1. उपरोक्त अध्ययन से पारिवारिक स्थिति ज्ञात होता है कि वृद्धों खासकर महिलाएँ वशंवेल की पुरानी प्रतिनिधि है इन्हें खुद से अलग या दूर करना स्वयं को मिटाने जैसा है। उन्हें वृद्धाश्रम भेजने की गलती से बचे और रिस्ते की अहमियत समझें।

2. परिवार में उपेक्षित होने, अपनत्व की कमी, अकेलापन, पारिवारिक अलगाव से वृद्ध महिलाओ में तनाव की स्थिति में जीने के लिए मजबूर है। परिवार के कार्यो में सहभागिता दिनप्रतिदिन कम होती जा रही जिससे उनमें असम्मान व असुरक्षा की भावना बढ़ती जा रही है।

3. निष्कर्षतः वृद्ध महिलाओं को यह एहसास न दिलाया जाए कि वो आश्रित हैं बल्कि उनके अनुभव व सुझावों को सदस्यों द्वारा समय-समय पर सुनना चाहिए जिससे उनमें आत्मिक विकास होगा। उनकी पारिवारिक व सामाजिक स्थिति भी मजबूत होगी।

4. नित्य नया सीखने और कार्य करने की कोई उम्र नहीं होती है। अतः वृद्धावस्था को वृद्ध महिलाओं को भी समस्या न मानकर सम्मान व प्रतिष्ठा का अवसर मानना चाहिए। तथा हमें वृद्ध महिलाओं के प्रति समाज व परिवार के नजिरया बदलना होगा।

जैसे कि - पेड़ बूढ़े ही सही आँगन में रहने दो, फल ना सही छाँव तो अवश्य ही देगें ठीक उसी प्रकार माता-पिता बूढ़े ही सही घर में रहने दो दौलत तो नहीं कमा सकते लेकिन आपके बच्चों की संस्कार अवश्य देंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. डॉ. अल्टेकर, ए. एस., पोजीशन्स ऑफ वूमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन, पृ. 181.

2. सहायम, देव. एम, 'Aged females : The most deprived among in journal of social work'k~ Vol- 49, No- 3, July 1988, Page 261 n` 69.
3. सुब्रमड़यम, आशा, 1990, 'वुद्ध महिलाओं की समस्याएँ, इंडियन जर्नल ऑफ कम्यूनिटी गाइडेन्स सर्विस, Vol- 7, No- 3, September, Page 61 - 67
4. प्रो0 जे. एस. राठौर (1993), मानव वर्ष 21 अंक 4 अक्टूबर 1993, पृ. 47.
5. शर्मा, डॉ आशा, भारतीय समाज में वृद्धों जनों की स्थिति को बेहतर बनाने का प्रयास, चित्रकूट 1982
6. नागवंशी, डॉ0 प्रमिला (2021), IJCRT, VOLUME 9 ISCHN:2320-282, www. IJCRT.in
7. गोरे, एम. एस. 1997, वृद्धों की समस्याओं का अध्ययन, समाजशास्त्रीय बुलेटिन, 46 (1) मार्च, 1997.
8. दुबे, प्रीति (2015), भारत में समाजशास्त्र, कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल, पृ. 81.
9. दैनिक भास्कर (2010), जीवन संध्या- वो सारे ख्वाब जाग उठे हैं फिर, सीनियर सिटीजन डे पर प्रकाशित लेख, पृ. 01.
10. त्रिपाठी, आर. एम. 2002, इलाहाबाद के ग्रामीण वृद्धों की सामाजिक स्थिति का वैयक्तिक अध्ययन, कुरुक्षेत्र, Vol- 15, No- 1, Page 43&48.
11. राजपुरिया अनिता, (2003) मध्यमवर्गीय परिवार, समस्याएँ एवं सामंजस्य, शताक्षी प्रकाषन रायपुर, पृ. 127।
12. शुक्ला राजेश (2006), ग्रामीण संरचना एवं ग्राम विकास वैभव प्रकाशन रायपुर, पृ. 15-20
13. Ganrade, K.K. (1975) Crisis of Values & A study of generation gap Chetna, New Delhi.
14. Mahata, K.C. (1993) Socio-economic status of the aged & A case study, man in India 73 (3) P-201-213
15. A Yamunadevi, S.Sulaja (2016) International Journal of Social Science vol-6 No-12 Dec, P-P-698-8-5

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

TEMPLE ADMINISTRATION IN COLONIAL AND POST-COLONIAL INDIA BETWEEN THE PERIOD 1863 TO 1983

Ashish Ranjan Tiwari
Research Scholar, JNU, New Delhi
7991568397, ashish24_ssb@jnu.ac.in

Ajit Kumar Bajpai
Research scholar, University of Allahabad, Prayagraj
9455730150, ajitbajpai9@gmail.com

INTRODUCTION

In Hinduism, charity is regarded as an integral part of religion, and both charity and religion constitute the prime notion of Dharma. Since ancient times, people and political chiefs in the Indian subcontinent, out of a sense of piety and charity, not only built a large number of temples but also endowed them with gifts of land, cash, jewelry, and the like so that these institutions could maintain their religious activities such as the performance of various kinds of pujas and archanas, rituals and rites, customs and beliefs, the establishment of Pathashalas, medical dispensaries, lodging houses, goshalas and various other similar facilities and organization of fairs and festivals and the like.[1] It is worth remarking that priests, in the form of trustees, were appointed to administer and manage these institutions. Although there was not much written authority in Hindu religious scriptures regarding the supervision of Hindu temples and other religious institutions, there was a sense of acceptance among the people that the superintending authorities over temples vested in the ruling class and kings had customary rights to visit these institutions and take measures to prevent and redress discrepancies and irregularities in their management.[2] However, the trustees had control over the day-to-day administration of these temples. They came to enjoy certain traditional and priestly rights in the form of having their share in the offerings and gifts made to the temples by devotees and pilgrims. Besides, both the institutions, namely temple, and kingship, were intricately connected with each other as they not only complemented but also sustained each other through the exchange of ritual sanction, legitimacy, and political patronage.[3]

With the arrival of the Turks in the Indian subcontinent, things seem to have taken a turn as a result of the dethroning and subordination of Hindu rulers and chiefs across the northern plain. This political phenomenon led to the loss of the major source of political patronage and support by

1 Bijan Kumar Mukherjea and Pralhad Balacharya Gajendragadkar. "BK Mukherjea on The Hindu law of religious and charitable trusts." *The Tagore law lectures* 1979, P-8.

2 Ibid, P-2.

3 Arjun Appadurai, *Worship and conflict under colonial rule: A South Indian case*. Vol. 27, Cambridge University Press: New York, 1981, Pp-63-64.

Hindu temples. With this, trustees came to monopolize their control over these institutions without any scrutiny and accountability in Northern India. But in southern India, which was relatively safer from acts of political disruption and frequent change of dynasties, temples flourished through royal patronage and lineage system under the aegis of the imperial Cholas and other regional kingdoms such as Pandyas, Pallavas, and the like. In fact, the Cholas had created a distinctive royal office that was in charge of the maintenance and management of state-owned temples, and it was through these institutions that they derived political legitimacy. Royal endowments to temples became an important source for the redistributive activities of both Chola and Vijayanagar sovereigns. Temple endowment was developed as an imperial technique for the extension of both royal control over new areas and agricultural activities.[4] In the Mughal period, things did not change much due to the policy of neutrality maintained by the Mughal emperors towards Hindu temples. Although there are instances of temple destruction during the rule of more conservative emperors as a matter of political expediency, we have cases where the same rulers made grants of land to Hindu temples for their upkeep.[5] It is important to note that kings in the medieval period played a supervisory role, and their orders and commands were administration and context-specific and could not act as law or precedent. But it is worth mentioning that this state of apathy towards Hindu temples was much more visible and evident in Northern than in Southern India. Ultimately, this state of affairs went through huge transformations with the coming of the British and their subsequent usurpation of political power in the whole subcontinent. Their rule over India was unique in the sense that they brought with them their law and jurisprudence, which had repercussions for the Hindu temples and their trustees. [6]The British notions of law and legality changed the character of the judgments and orders issued by kings by turning them into precedent and law.

The discipline and universality of their well-codified and defined law broke the backbone of traditional customs and usages, which had so far governed the schemes of temple management, and the judicial pronouncements and judgments delivered by British-Indian courts changed the whole dimension of the subject matter of temple administration. The British government, by virtue of its sovereign authority, enacted several spates of legislation to govern the affairs of Hindu religious institutions, starting with Regulation 19 of 1810 for Bengal, Regulation 7 of 1817 for Madras, and Regulation 17 of 1827 for Bombay. With these enactments, the government brought within its supervision the administration of a large number of temples and their resources. Under tremendous pressure from certain Christian missionaries and evangelicals, the government was compelled to relinquish its connection with the management of Hindu places of religious worship in 1842, which led to the latter plunging into a state of anarchy and chaos, and even those trustees who were not hereditary used this opportunity to consolidate their position as hereditary ones.[7] Then again, on public demand, the government enacted the Religious Endowments Act of 1863 to remedy the chaotic situation by transferring the management of Hindu temples to local committees of trustees

4 Arjun Appadurai, *Worship and conflict under colonial rule: A South Indian case*. Vol. 27, Cambridge University Press: New York, 1981, Pp-71-74.

5 M. Athar Ali, *The Mughal Nobility under Aurangzeb*, Asia Publishing House: Bombay, 1968, Pp-30-32.

6 https://theprint.in/opinion/indian-govt-wont-be-any-different-from-british-if-hindus-cant-manage-their-own-temples/218210/

7 https://theprint.in/opinion/indian-govt-wont-be-any-different-from-british-if-hindus-cant-manage-their-own-temples/218210/

and by inserting sections 92 and 93 in the code of civil procedure, 1908 made provision for filing of suits against the trustees in cases of breach of trust and neglect of duty by any person interested.[8] This had a ripple effect in the sense that for the first time in the history of the nation, the general public was allowed to have a say in the management of Hindu temples, as any person interested in the management of the temple was equipped with the legal right to file a suit against the trustee in the court and get relevant directions from the judge to furnish particulars regarding the income and expenditure of the said temple. In the year 1920, the central legislature passed the Charitable and Religious Trust Act, which made a provision that any person interested in the management of a trust may get its account audited by getting a court order in that regard. [9]The Government of India Act of 1919 handed over some legislative authority to provincial assemblies to make them eligible to enact laws regarding the management of the temples which various states such as Madras, U.P., Bombay, and the like used to frame legislation to establish their control over Hindu temples. Now, it is important to note that the introduction of British law made the involvement of all the stakeholders, including local temple representatives, trustees, the public, and the state, in the management of temples and their resources inevitable. [10]The ability of British jurisprudence to arbitrate temple-related disputes brought Hindu temples well within the ambit of public scrutiny. All the stakeholders felt compelled to place their faith in the British justice system and used colonial courts to settle scores against one another. It is in light of this context that it is important to put stress on the impact of the colonial government takeover of Hindu temples and its subsequent use of its state apparatus in the form of judiciary and legislature to legitimize its interference in the administration of temples and management of their resources and its ultimate adoption by the native government to perpetuate its intervention with the same as a legitimate power.[11] It needs to be understood here that although temples in Northern India did not command the kind of social prowess and wealth that their counterparts in the South did, that may be the reason why temples in the North could not engage the attention of the government in the way south Indian temples did, yet they acted as a major symbol of political power which was intricately connected with communal identities that the people in general associated themselves with. Apart from that, temple management in the modern period led to the emergence of a large number of temple-related disputes involving not just temple stakeholders but also the general public, and these disputes have come to have a direct bearing on the lives of the common people and thus the historical investigation of temple administration and management of their resources in relation to Northern India has become imperative. It also helps us comprehend the contentious discourse between the state, which is making interventions in bringing temples under its jurisdiction by controlling its finances, and the temple trustees that want to retain the autonomy of their temples by keeping them off the government's purview.

HISTORIOGRAPHY

To build up and buttress my argument, I have discussed the works of four eminent scholars

8 Bijan Kumar Mukherjea and Pralhad Balacharya Gajendragadkar. "BK Mukherjea on The Hindu law of religious and charitable trusts." *The Tagore law lectures* 1979, Pp-397-408.

9 Ibid, P- 406.

10 Tetsuya Tanaka, Trustee, "State and Stakeholder: Hindu Temple Management in Contemporary India 1957-2012", *Journal of Interdisciplinary Economics*, 2020, Pp.75-94.

11 https://www.thejaipurdialogues.com/sanatana/hindu-temples-under-occupation/.

with specialization in the field of temple administration apart from engaging with other books and articles based on a similar theme.

The work of C. J. Baker on the theme of Temples and Political development is the result of his in-depth research and elegant presentation of facts which focusses on the dominant role of temples in south Indian society and the profound control that they exert on the commercial life of the locality through their organization of annual fairs and festivals and by supporting tourism and hospitality sector. He shows how, in the South, temples combined great landed property with the mechanisms of status control to act as distributors of social status and power in the locality. Control over the temple meant some control over land, commerce and credit, a portfolio of patronage of jobs, contracts and gifts and a role in regulating social status and the prestige of managing the chief social events of the year. This led to huge competition among local magnates to control temples to enhance their prestige, power and privilege in the locality.[12] In 1817, the government, through legislation, resumed control of all the temples but had to give it up in 1842 but it took the judicial route to have its skin in the domain of temple administration and empowered its courts to have the authority to enforce the deeds of the temple endowments by forcing the trustees to furnish details of receipt and expenditure of the temples. Local courts were also empowered to remove trustees from their office on ground of maladministration or malpractice and an amendment in 1909 in the Code of Civil procedure made it much easier to interfere in temple administration through the courts. All these developments were inspired by the temple's importance in local affairs and the management of the temple reflected and reinforced the distribution of power in the locality. He further points out that it was the attraction of power not plunder that motivated most men in their struggles for control over temples.

Arjun Appadurai argues that British notions of law and legality had tremendous implications for temples and their trustees and the willingness of the court to codify schemes and particular sets of rights in the temple created a ripple effect. He further stresses that the judgments passed by British Indian courts constitute an interesting transition form, from the authoritative style of Hindu kings with respect to temple disputes to the usual legislative and reluctant style of later judges in the Anglo-Indian judicial system. In his argument, he attributes the genesis of these revolutionary changes to the British takeover of Hindu temples and their tendency to set schemes to streamline temple management in Southern India in general and Tamil Nadu in particular. Interestingly, he used the example of the Shri Parthasarathi temple to display how temples in Madras acted as centers of redistribution of social power and status in the local hierarchy. [13] One of the early aspects of British rule in India was the bureaucratic centralization of the state apparatus through which the British tried to streamline administration, and it was due to this reason that the British came to regulate Hindu temples, which were centers of great wealth. In due course of time, temple control gave rise to disputes that were not manageable within the confines of the temple itself, and this required direct arbitration of the state. He further stresses that the availability of the court as an alternative arena within which temple rights could be contested began to aggravate temple conflict. While underlining

12 CJ Baker and DA Washbrook, *South India: Political Institutions and Political Change* 1880–1940, Macmillan: Delhi, 1975, Pp-69-97.

13 Arjun Appadurai, *Worship and conflict under colonial rule: A South Indian case*. Vol. 27, Cambridge University Press: New York, 1981, Pp-105-164.

the importance of trustees, he emphasizes that the role of the trusteeship grows central to temple control, with an increase in conflicts between trustees, which in turn affect the re-distributive process of the temple as well as its day-to-day management. In order to eliminate alleged embezzlement of temple funds and to establish accountability of trustees, in 1908, section 92 was inserted into the code of civil procedure to empower anybody interested to file suits against the latter on accounts of breach of trust and neglect of duty, thus ensuring the arbitration of Courts in such cases.[14]

Hermann Kulke advances his proposition with respect to the historical management of the temple of Shri Jagannatha of Puri and the political and religious repercussions as a result of its administration. In his enduring work, which is claimed to be authoritative on the subject, he has demonstrated how the Jagannatha cult has been a crucial element in the politics of the political powers ruling over Orissa. The study shows how the polity in Orissa revolved around the discourse of the administration of Jagannath temple and how the bitter political struggle among various political powers ensued to establish control over the special cult of Shri Jagannatha temple that had become the ultimate source of political and religious legitimacy. The investigation illustrates that the Mughals and the English as external forces in state politics not only tolerated but also promoted the cult of Shri Jagannatha for both political and economic reasons and made concerted efforts at curbing the influence and control of the kings of Khurda over the temple with limited successes as a result of religious and ethnic differences that they shared with the local populace while the Indian powers including the Marathas and the post-colonial government, not having such limitations, took effective steps to bring under their direct supervision the control of the famous temple which they achieved by completely depriving the rulers of Khurda of any share or interests in the overall management of the latter as they were not ready to accept the claim of moral and religious superiority by the Khurda Rajas which the later could certainly make based on their status as the diwan to Shri Jagannatha, the undisputed ruler of Orissa if they were to continue as the trustee of the temple. The temple has been managed by a government-appointed temple committee since 1954.[15]

Since temple management has been a contentious discourse with its peculiar notions and nuances, it is important to acknowledge that the administration of temples and management of their resources varied from time to time and region to region in both nature and extent in the Indian subcontinent. Some explanation of this phenomenon can be found in the idea advanced by Franklin A. Presler, who examines the complex relationship between the state and temple and stresses that governments in the post-colonial era seem to rely on different approaches and methods to deal with the question of temple administration in different states as a matter of past legacy. For this, he offers an explanation that states in different parts of the country exercised different degrees of control for the administration of temples in their respective territorial domain. He explains this phenomenon by stressing that southern states seem to have an advantage in the form of past legacy to establish and maintain their superintending authority over temples, which their counterparts from the North lacked and thus could not deliver legislation on the same. He further proposes that these attitudes of governments can be explained through the model of states, which suggests that the two kinds of states, i.e., low

14 Arjun Appadurai, *Worship and conflict under colonial rule: A South Indian case*. Vol. 27, Cambridge University Press: New York, 1981, Pp-177-178.

15 Hermann.Kulke, "Kings without a Kingdom: The Rajas of Khurda and the Jagannatha cult." *South Asia: Journal of South Asian Studies* 4, 1974, pp-64-77.

and high adopted by Northern and Southern India, respectively, can be cited as crucial factors behind differing degrees of control over religion and society that the two parts enjoyed and that led them to assume contrasting degrees of responsibility for setting public purposes and for attaining them. [16] Through his extensive study of the state of temple administration in Tamilnadu, he shows how the state intervention led to the abolition of the system of hereditary employees in temples and the establishment, in its place, of the system of authority, duties, and responsibilities at various levels. He again purports that Hindu temples occupy an important position in modern Indian politics, and the state's role in regulating and shaping them has become an imperative historical need. This inevitability stems from the fact that temples are complex institutions with complicated internal organization and governance systems, economies based on endowments, offerings, and the like, and elaborate modes of worship rooted in history and tradition. It is precisely for this reason that governments in the modern period have extensively engaged themselves in temple administration, and their purpose has been to establish a presence in temple management by regulating the use of the temple's material and symbolic resources.

As already mentioned above, it would be helpful to look at some other major works to throw light on the contentious issue of temple management-

It would be appropriate to make mention of the amazing work done by Catherine Prior, who made a brilliant effort to demonstrate how the British tried to manage the three prominent pilgrimage centers of Allahabad, Gaya, and Puri in their quest to legitimize their rule in the North with the aim of achieving essential imperial goals and objects. She goes on to argue that the British welcomed the inherent advantage in the control of temples and religious institutions for numerous reasons, such as the chance to promote British rule among people from non-company territories, the numerous occasions for appeasing political allies, and the receipt of wealth from all over India.

Another monumental work that needs to be discussed here is the one written by a group of scholars, including Ian Copland, Ian Mabbett, Asim Roy, Kate Brittlebank, and Adam Bowles. This book goes on to argue that the British Raj was the first regime in India that tried to manage the Indians through its rule and its quest to achieve this end; it felt compelled to act with respect to religion, very much like the patrimonial regimes that it had displaced. During their imperial expansion, the British were forced to assume a host of religious duties and obligations, ritualistic and managerial entanglements inherited from the Hindu and Muslim dynasties they had displaced. Some of these responsibilities included, among other things, the maintenance and repair of state-owned temples and shrines, the hiring and firing of priests, the provision of coolies and detachments of armed guards to help at public festivals, and the regulation and taxing of pilgrims. An interesting point made in the book is that the reforms of 1842-1863 lessened the burden of the management of temples on the executive wing of the government, but this was more than compensated for by the additional caseload of these changes imposed on the judicial branch.[17] In this manner, the writers have shown how the British Raj was pulled into this magnate of temple matrix despite having a clear institutional scheme of maintaining a policy of non-intervention in religious affairs.

---

16 Franklin A. Presler, "*Religion under bureaucracy: Policy and administration for Hindu temples in south India*", Cambridge University Press, Cambridge,1987, Pp-1-14.

17 Ian Copland, Ian Mabbett, Asim Roy, Kate Brittlebank, and Adam Bowles. *A history of state and religion in India*, Routledge, 2013, Pp-207-227.

The case of Bodh Gaya temple is an excellent illustration of how the colonial government failed to dispense justice to the aggrieved Buddhist party despite making repeated efforts. Ian Copland has shown the weakness of the colonial government in dealing with a temple dispute from Bihar through his insightful article in which he argues how the British government, even under Lord Curzon, could not resolve the matter in favor of the Buddhists despite his best efforts. Copland attributes the failure of Curzon to his use of highhandedness and excessive reliance on state apparatus which led to the matter getting deadlocked. He further demonstrates how the native government in 1949 was able to solve the dispute in an amicable manner by sharing the space between the two parties.[18]

In her interesting article, Tetsuya Tanaka demonstrated how much attention is paid to the trustee and his office and the role he plays in carrying out the day-to-day activities of the temple. She further emphasizes that the trustee's misappropriation of the temple funds has led to the drawing of state attention, which in turn has culminated in the government taking control of the management of temples. In her study, she used the illustration of the Rani Sati temple in Rajasthan to highlight the temple committee's role in maintaining the temple's social fabric.[19]

Now, the important point of contention here is that the scope of state intervention in temple affairs in both nature and substance remained different and distinct for Northern and Southern India. In the Deccan and South, the approach of the government was really authoritative and combative in the sense that the state, on its part, took decisive measures to regulate and supervise the affairs of temples through the enactment of regulations in the form of the Madras Hindu Religious Endowments Acts of 1925, 1926, 1951, 1959 and various other similar promulgations.[20] But, state governments in the North did not make any such efforts regarding this subject except for a few enactments then and now. This remains elusive and needs to be explored and investigated.

Bibliography

Articles

1. Copland, Ian. "Managing religion in colonial India: The British Raj and the Bodh Gaya temple dispute." *Journal of Church and State* 46, no. 3 (2004): 527-559.
2. Kulke, Hermann. "Kings without a Kingdom: The Rajas of Khurda and the Jagannatha cult." *South Asia: Journal of South Asian Studies* 4, no. 1 (1974): 60-77.
3. Singh, Rana P.B. and Rana, Pravin S., The Kashi Vishvanatha, Varanasi city, India: Construction, Destruction, and Resurrection to Heritagization, 2022
4. Tanaka, Tetsuya, 2020. "Trustee, State and Stakeholder: Hindu Temple Management in Contemporary India, 1957-2012," Journal of Interdisciplinary Economics, , vol. 32(1), pages 75-94, January.

18 Ian Copland, "Managing religion in colonial India: the British Raj and the Bodh Gaya temple dispute." *Journal of Church and State* 46, no. 3, 2004, Pp-527-559.

19 Tetsuya Tanaka, Trustee, State and Stakeholder: Hindu Temple Management in Contemporary India, 1957-2012, *Journal of Interdisciplinary Economics*, 2020, Pp-75-94.

20 https://theprint.in/opinion/indian-govt-wont-be-any-different-from-british-if-hindus-cant-manage-their-own-temples/218210/

Books

1. Baker, Christopher John, and David Anthony Washbrook. *South India*. Springer, 1976
2. Appadurai, Arjun. *Worship and conflict under colonial rule: A South Indian case*. Vol. 27. Cambridge University Press, 1981.
3. Copland, Ian, Ian Mabbett, Asim Roy, Kate Brittlebank, and Adam Bowles. *A history of state and religion in India*. Routledge, 2013.
4. Presler, Franklin A. *"Religion under bureaucracy: Policy and administration for Hindu temples in south India.*",1987
5. Eck, Diana L, *Banaras, city of Light*. Alfred A. Knopf, New York,1999
6. Prakash, Pravish, Shri Kashi Vishwanath Mandir: A Historical Entity, Sumith Enterprises, 2022
7. Motichandra, *Kâúî kâ Itihâs* (History of Kashi), Vishvavidyalaya Prakashan, Varanasi 1962.
8. Mukherjea, Bijan Kumar, and Pralhad Balacharya Gajendragadkar. "BK Mukherjea on The Hindu law of religious and charitable trusts." *The Tagore law lectures,* Eastern Law House Ltd., Calcutta, 1952
9. Ali, M. Athar, *The Mughal Nobility under Aurangzeb*. Asia Publishing House, Bombay, 1968.
10. Desai, Madhuri. *Banaras Reconstructed: Architecture and Sacred Space in a Hindu Holy City*. University of Washington Press, 2017.

Newspaper articles

1. https://theprint.in/opinion/indian-govt-wont-be-any-different-from-british-if-hindus-cant-manage-their-own-temples/218210/
2. https://www.thejaipurdialogues.com/sanatana/hindu-temples-under-occupation/

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

मशीन लर्निंग आधारित एल्गोरिद्म द्वारा मधुमेह पूर्वानुमान : एक व्यावहारिक अध्ययन

के के इश्विता श्री
बी.टेक स्नातक (वीआईटी भोपाल विश्वविद्यालय),
एमबीए छात्रा (एसआरएम इंस्टिट्यूट ऑफ साइंस एंड टेक्नोलॉजी)
ईमेल : ishvithashree@gmail.com
मोबाइल नंबर : 8305618990

1. सारांश

मधुमेह एक ऐसा रोग है जो धीरे-धीरे मानव शरीर को प्रभावित करता है और यदि समय पर पता न चले तो गंभीर परिणाम हो सकते हैं। आज के डिजिटल युग में, मशीन लर्निंग जैसी तकनीकों का उपयोग स्वास्थ्य सेवाओं में तेजी से बढ़ रहा है। इस शोध-पत्र में हमने मशीन लर्निंग एल्गोरिद्म जैसे लॉजिस्टिक रिग्रेशन, सपोर्ट वेक्टर मशीन (SVM) और डिसीजन ट्री का उपयोग करते हुए मधुमेह रोग की पहचान के लिए एक मॉडल विकसित किया है। यह अध्ययन सार्वजनिक रूप से उपलब्ध डेटा - PIMA भारतीय डेटासेट पर आधारित है, जिसमें विभिन्न स्वास्थ्य मानदंडों के आधार पर मॉडल को प्रशिक्षित किया गया है। हमारे प्रयोगों से यह पाया गया कि डिसीजन ट्री एल्गोरिद्म ने अन्य मॉडलों की तुलना में बेहतर परिणाम दिए। यह मॉडल भविष्य में रोग की प्रारंभिक पहचान में सहायक हो सकता है, जिससे समय पर उपचार और जीवनशैली में सुधार संभव हो सके।

कीवर्ड्स : मशीन लर्निंग, मधुमेह पूर्वानुमान, डिसीजन ट्री, लॉजिस्टिक रिग्रेशन, सपोर्ट वेक्टर मशीन, स्वास्थ्य डेटा, पूर्वानुमान मॉडल।

2. परिचय (Introduction)

मधुमेह (Diabetes) एक दीर्घकालिक रोग है, जो तब होता है जब शरीर में रक्त शर्करा का स्तर सामान्य से अधिक हो जाता है। यह रोग न केवल शारीरिक स्वास्थ्य को प्रभावित करता है बल्कि व्यक्ति की जीवनशैली, कार्यक्षमता और आर्थिक स्थिति पर भी प्रभाव डालता है। भारत को षविश्व की मधुमेह राजधानीष कहा जाता है, जहाँ लगभग 77 मिलियन से अधिक लोग इस रोग से प्रभावित हैं।

समस्या यह है कि अधिकतर मामलों में मधुमेह का पता तब चलता है जब रोग काफी बढ़ चुका होता है। यदि इसे शुरुआती चरण में ही पहचान लिया जाए, तो इस पर बेहतर नियंत्रण संभव है। इसी उद्देश्य से आधुनिक तकनीक का सहारा लिया जा रहा है, विशेषकर मशीन लर्निंग (Machine Learning) का।

मशीन लर्निंग कंप्यूटर को ऐसे ढंग से प्रशिक्षित करती है जिससे वह पुराने डेटा के आधार पर नई जानकारी का विश्लेषण

कर सकता है। इस शोध में हमने विभिन्न मशीन लर्निंग एल्गोरिद्म का उपयोग करके मधुमेह का पूर्वानुमान करने का प्रयास किया है। यह एक व्यावहारिक अध्ययन है जो एक सामान्य प्रयोगशाला रिपोर्ट के बजाय वास्तविक डेटा और परिणामों पर आधारित है।

3. मधुमेह रोग की पृष्ठभूमि

मधुमेह एक चयापचय संबंधी रोग है जिसमें शरीर इंसुलिन हार्मोन का सही उपयोग नहीं कर पाता। इंसुलिन वह हार्मोन है जो रक्त में मौजूद ग्लूकोज़ (शर्करा) को कोशिकाओं तक पहुँचाने का कार्य करता है। जब यह प्रक्रिया बाधित होती है, तब रक्त में शर्करा की मात्रा बढ़ने लगती है, जिससे मधुमेह की स्थिति उत्पन्न होती है।

मधुमेह के प्रमुख दो प्रकार हैं

टाइप 1 मधुमेह : यह एक ऑटोइम्यून रोग है जिसमें शरीर खुद ही अपनी इंसुलिन उत्पादक कोशिकाओं को नष्ट कर देता है।

टाइप 2 मधुमेह : यह सबसे सामान्य प्रकार है जिसमें शरीर इंसुलिन का प्रभावी उपयोग नहीं कर पाता। यह अधिकतर वयस्कों में पाया जाता है।

मधुमेह का समय पर पता लगाना अत्यंत आवश्यक है क्योंकि यह हृदय रोग, गुर्दा फेल होना, नेत्र दोष और पैरों में संक्रमण जैसी जटिलताओं का कारण बन सकता है। परंतु भारत जैसे देश में जनसंख्या की अधिकता और सीमित स्वास्थ्य संसाधनों के कारण समय पर निदान एक चुनौती बना हुआ है। ऐसे में मशीन लर्निंग आधारित पूर्वानुमान प्रणाली एक प्रभावी समाधान हो सकती है।

4. मशीन लर्निंग का परिचय

मशीन लर्निंग एक ऐसी तकनीक है जो कंप्यूटर को पूर्व में एकत्रित किए गए डेटा से स्वयं सीखने और समझदारी से निर्णय लेने में सक्षम बनाती है। यह एल्गोरिद्म पुराने डेटा में छिपे हुए पैटर्न को पहचानते हैं और फिर उसी ज्ञान का उपयोग करके नए डेटा का विश्लेषण या पूर्वानुमान करते हैं।

स्वास्थ्य क्षेत्र में मशीन लर्निंग का उपयोग रोग की पहचान, निदान, उपचार की योजना और रोगी के स्वास्थ्य की निगरानी जैसे कार्यों में किया जा रहा है। मधुमेह पूर्वानुमान के लिए मशीन लर्निंग विशेष रूप से उपयोगी सिद्ध हुआ है क्योंकि यह डेटा जैसे रक्तचाप, बी एम आई, आयु, गर्भधारण की संख्या, ग्लूकोज़ स्तर आदि का विश्लेषण कर सकता है और व्यक्ति के मधुमेह से प्रभावित होने की संभावना को आँक सकता है।

5. प्रस्तावित कार्य एवं नवाचार

इस शोध में हमने सार्वजनिक रूप से उपलब्ध च्ड। भारतीय डायबिटीज डेटासेट का उपयोग किया, जिसमें 768 महिलाओं के स्वास्थ्य संबंधी आँकड़े शामिल थे। प्रत्येक रिकॉर्ड में 8 विशेषताएँ थीं :

1. गर्भधारण की संख्या
2. ग्लूकोज़ का स्तर
3. रक्तचाप
4. त्वचा की मोटाई
5. इंसुलिन स्तर
6. बी एम आई (BMI) (शरीर भार सूचकांक)
7. डायबिटीज पैडीग्री फंक्शन

8. आयु

इन विशेषताओं का उपयोग करते हुए हमने तीन अलग-अलग मशीन लर्निंग तकनीकों—लॉजिस्टिक रिग्रेशन, डिसीजन ट्री और सपोर्ट वेक्टर मशीन पर आधारित मॉडल तैयार किए। इन मॉडलों का उद्देश्य यह समझना था कि दिए गए स्वास्थ्य डेटा के आधार पर किसी व्यक्ति में मधुमेह की संभावना कितनी है।

हमारे नवाचार की विशेषता यह रही कि हमने इन एल्गोरिद्म की तुलना की, और पाया कि डिसीजन ट्री सबसे उपयुक्त रहा। भविष्य में इस मॉडल को मोबाइल या वेब ऐप के रूप में विकसित किया जा सकता है, जो उपयोगकर्ता को स्वास्थ्य संबंधी इनपुट के आधार पर मधुमेह की संभावना बता सकेगा।

6. कार्यप्रणाली एवं एल्गोरिद्म विवरण

इस अध्ययन में हमने तीन प्रमुख मशीन लर्निंग एल्गोरिद्म का उपयोग किया, जो निम्नलिखित हैं :

(क) लॉजिस्टिक रिग्रेशन (Logistic Regression)

यह एक सांख्यिकीय विधि है जो किसी व्यक्ति के मधुमेह ग्रस्त होने या न होने की संभावना (Probability) को निर्धारित करती है। यह विशेष रूप से बाइनरी क्लासिफिकेशन समस्याओं के लिए उपयोगी होता है।

(ख) डिसीजन ट्री (Decision Tree)

यह एक ट्री-संरचना आधारित एल्गोरिद्म है जो निर्णयों की एक श्रृंखला के माध्यम से अंतिम निष्कर्ष पर पहुँचता है। यह मॉडल सरल, समझने योग्य और सटीक होता है, विशेषतः तब जब डेटा में स्पष्ट विभाजन (thresholds) मौजूद हों।

(ग) सपोर्ट वेक्टर मशीन (SVM)

यह एक अधिक परिशुद्ध एल्गोरिद्म है जो दो वर्गों के बीच की सीमा खोजता है। यह जटिल और उच्च-आयामी डेटा के लिए अधिक उपयुक्त है, परन्तु कभी-कभी इसे प्रशिक्षित करने में अधिक समय लगता है।

मॉडल विकास के चरण :

1. डेटा संग्रह : PIMA डेटासेट का उपयोग।
2. डेटा पूर्व-संसाधन (Preprocessing) : अनुपलब्ध मान (Null value) हटाना, मानकीकरण।
3. एल्गोरिद्म चयन और प्रशिक्षण (Training) : ऊपर बताए गए तीन एल्गोरिद्म।
4. मॉडल का मूल्यांकन : सटीकता (Accuracy), शुद्धता (Precision), रिकॉल (Recall), और भ्रम मैट्रिक्स (Confusion Matrix) के आधार पर परिणामों का मूल्यांकन किया गया।
5. मॉडल तुलना और चयन।

7. परिणाम एवं विश्लेषण

हमने सभी तीन एल्गोरिद्म को समान डेटा सेट पर लागू किया और उनके परिणामों की तुलना की। परिणाम निम्नलिखित हैं :

एल्गोरिद्म	सटीकता (Accuracy)	विशेषता (Precision)	रिकॉल Recall	निष्कर्ष
लॉजिस्टिक रिग्रेशन	76%	74%	72%	औसत प्रदर्शन
डिसीजन ट्री	81%	79%	78%	सर्वोत्तम प्रदर्शन
सपोर्ट वेक्टर मशीन	78%	77%	75%	संतोषजनक

विश्लेषण :

डिसीजन ट्री मॉडल ने सबसे अच्छी सटीकता के साथ उच्च स्तर की व्याख्यात्मकता (interpretability) भी प्रदान की। SVM मॉडल ने भी अच्छा प्रदर्शन किया परंतु प्रशिक्षण में अधिक समय लगा।

8. वास्तविक जीवन उपयोग

स्वास्थ्य ऐप्स में एकीकरण : यह मॉडल मोबाइल ऐप के रूप में उपयोग किया जा सकता है, जहाँ उपयोगकर्ता अपनी जानकारी दर्ज करके मधुमेह की संभावना जान सकता है।

प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र : ग्रामीण क्षेत्रों में यह एक प्राथमिक स्क्रीनिंग टूल के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है।

निजी अस्पताल एवं क्लीनिक : रोगियों की जांच से पहले संभाव्यता मापने में सहायक।

स्वास्थ्य शिविर : तेजी से अधिक लोगों की जाँच में उपयोगी।

AI हेल्थ पोर्टल्स : टेलीमेडिसिन और ई-स्वास्थ्य प्लेटफार्मों में उपयोग की संभावना।

9. सीमाएँ एवं भविष्य की दिशा

प्रस्तुत अध्ययन ने मशीन लर्निंग की मदद से मधुमेह के प्रारंभिक पूर्वानुमान हेतु एक प्रभावी मॉडल प्रस्तुत किया है। यद्यपि इस दिशा में यह एक महत्वपूर्ण प्रयास रहा है, फिर भी कुछ पहलू ऐसे हैं जिनमें भविष्य में और सुधार की संभावना है।

सीमाएँ :

सीमित डेटा सैंपल : केवल 768 रिकॉर्ड।

केवल महिलाओं का डेटा : परिणामों में लैंगिक पक्षपात संभव।

बाहरी डेटा पर परीक्षण नहीं किया गया।

भविष्य की दिशा :

बड़ा और विविध जनसंख्या डेटा इस्तेमाल करना।

IoT डिवाइसेज़ (जैसे फिटनेस बैंड) से रीयल-टाइम डेटा एकत्र कर मॉडल को मजबूत बनाना।

अधिक एल्गोरिद्म का तुलनात्मक अध्ययन।

वेब और मोबाइल-आधारित टूल विकसित करना जो आम जनता द्वारा प्रयोग किया जा सके।

10. नैतिक विचार

स्वास्थ्य डेटा अत्यंत संवेदनशील होता है, इसलिए किसी भी मशीन लर्निंग आधारित पूर्वानुमान प्रणाली के लिए नैतिक सिद्धांतों का पालन करना आवश्यक होता है। इस शोध में निम्नलिखित नैतिक बातों का ध्यान रखा गया है :

डेटा गोपनीयता : प्रयुक्त डेटा सार्वजनिक रूप से उपलब्ध है और इसमें किसी व्यक्ति की निजी पहचान नहीं है।

सहमति और पारदर्शिता : भविष्य में यदि यह मॉडल वास्तविक उपयोग में लाया जाए, तो उपयोगकर्ता से स्पष्ट सहमति (Consent) लेना आवश्यक होगा।

डेटा पूर्वाग्रह (Bias) : इस मॉडल को विविध आयु, लिंग और भौगोलिक क्षेत्रों के डेटा पर और अधिक प्रशिक्षित किया जाना चाहिए ताकि निष्पक्ष और व्यापक निष्कर्ष मिल सकें।

अत्यधिक निर्भरता का खतरा : यह मॉडल डॉक्टर की सलाह का विकल्प नहीं है, बल्कि एक सहायक उपकरण है। अंतिम निर्णय हमेशा विशेषज्ञ चिकित्सक द्वारा ही लिया जाना चाहिए।

11. निष्कर्ष

यह शोध कार्य दर्शाता है कि मशीन लर्निंग एल्गोरिद्म का उपयोग मधुमेह जैसे गंभीर रोग की समय से पहले पहचान में किया जा सकता है। हमने तीन प्रमुख एल्गोरिद्म लॉजिस्टिक रिग्रेशन, डिसीजन ट्री और सपोर्ट वेक्टर मशीन का तुलनात्मक विश्लेषण किया और पाया कि डिसीजन ट्री सबसे प्रभावी मॉडल साबित हुआ।

भविष्य में, इस मॉडल को और अधिक व्यापक डेटा पर प्रशिक्षित करके मोबाइल ऐप या हेल्थ पोर्टल के रूप में विकसित किया जा सकता है। यह प्रणाली खासकर उन क्षेत्रों में उपयोगी हो सकती है जहाँ प्रशिक्षित डॉक्टरों की कमी है। यदि नैतिकता, गोपनीयता और मानवीय देखरेख को सही ढंग से जोड़ा जाए, तो यह मॉडल समाज में एक सकारात्मक प्रभाव डाल सकता है।

संदर्भ

1. Smith, J. W. एवं सहलेखक (1988). मधुमेह रोग की संभाव्यता के पूर्वानुमान के लिए ADAP लर्निंग एल्गोरिद्म का उपयोग। Annual Symposium on Computer Application in Medical Care में प्रस्तुत शोध।
2. World Health Organization (2023). मधुमेह पर तथ्य पत्रक। प्राप्त स्रोत: https://www.who.int/news-room/fact-sheets/detail/diabetes
3. 3. Dua, D., & Graff, C. (2017). PIMA Indians Diabetes Dataset - UCI Machine Learning Repository से प्राप्त। https://archive.ics.uci.edu/ml/datasets/pima+indians+diabetes
4. Patel, R., & Sharma, V. (2022). मधुमेह पूर्वानुमान के लिए मशीन लर्निंग एल्गोरिद्म का तुलनात्मक विश्लेषण। International Journal of Emerging Technology, खंड 13(4), पृष्ठ 201 208।
5. Taly, A. (2021). मशीन लर्निंग का परिचय। प्रकाशक: Springer.
6. Kaur, M. & Sharma, S. (2021). डिसीजन ट्री एल्गोरिद्म का उपयोग कर मधुमेह की शीघ्र पहचान। Journal of Health Informatics in Developing Countries, 15(2), 45–52.
7. Yadav, A., & Jaiswal, S. (2023). लॉजिस्टिक रिग्रेशन और ैटड आधारित मधुमेह पूर्वानुमान मॉडल। AI in Healthcare Journal, 5(1), 10-17
8. Sharma, K. (2023). स्वास्थ्य सेवाओं में मशीन लर्निंग का अनुप्रयोग : एक अवलोकन। AI Journal India, 2023 संस्करण।

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

AI-Driven Cognitive Behavioural Therapy for Early Detection and Support in Mental Health

K K Ishvintha Sree
B.Tech Graduate (VIT Bhopal University),
MBA Student (SRM Institute of Science and Technology)
Email: kkishvinthasree@gmail.com
Mobile: +91 9993932316

Abstract

Mental health disorders such as depression and anxiety are on the rise globally, affecting personal well-being, social interaction, and workplace productivity. Cognitive Behavioural Therapy (CBT) is a well-established therapeutic method for treating such conditions. However, limited accessibility and stigma prevent many individuals from receiving timely help. With the emergence of Artificial Intelligence (AI), especially Natural Language Processing (NLP) and machine learning algorithms, CBT delivery can now be made more accessible, scalable, and personalized. This paper presents a framework that integrates AI with CBT to facilitate early detection of mental distress and deliver adaptive, chatbot-based therapy. Key components include sentiment analysis, Decision Tree-based mental health prediction, and a feedback-driven intervention system. The model demonstrates high engagement and predictive accuracy, offering significant potential in digital mental health support.

1. Introduction

Mental health disorders impact over million people worldwide. In India, a shortage of trained mental health professionals, combined with social stigma, results in a significant treatment gap. Cognitive Behavioural Therapy (CBT) is one of the most effective, evidence-based approaches for treating anxiety, depression, Post-traumatic stress disorder (PTSD, and related disorders. It involves recognizing and modifying negative thought patterns through structured interventions.

AI technologies, particularly NLP and machine learning, can assist in detecting early symptoms of mental distress and delivering therapeutic interventions through chatbots and automated platforms. This paper introduces an AI-augmented CBT framework designed to provide timely, accessible, and personalized mental health support.

2. Objectives

The primary objectives of this study are:

- To detect early signs of mental distress using AI and NLP.
- To deliver interactive CBT-based interventions through chatbot modules.
- To personalize therapy using user profiling and continuous feedback.
- To enhance accessibility and scalability of mental health services.

3. Foundational Principles of Cognitive Behavioural Therapy

The foundation of cognitive behavioural therapy (CBT) is the idea that thoughts, emotions, and behaviours are deeply connected. By addressing and altering negative thought patterns, individuals can bring about positive changes in emotional and behavioural outcomes.

One of the core elements of CBT is the identification and challenge of distorted thinking patterns, which often contribute to emotional distress. These cognitive distortions are systematically replaced with more balanced, rational thoughts, enabling individuals to develop healthier perspectives.

Additionally, CBT emphasizes self-monitoring techniques such as journaling and goal setting to help individuals track their progress and reinforce positive change. It also incorporates problem-solving strategies to equip individuals with practical tools for managing stressful situations effectively.

CBT is designed to be structured and time-limited, making it an efficient and evidence-based approach that is effective across a wide range of mental health conditions, including anxiety, depression, and stress-related disorders.

4. Literature Review

Cognitive Behavioural Therapy (CBT) has long been established as an effective and evidence-based approach for treating mental health disorders such as depression, anxiety, PTSD, and phobias. Traditionally, CBT is delivered through face-to-face sessions with a trained therapist, involving structured interventions like cognitive restructuring, exposure therapy, and behavioural activation. However, the scalability and accessibility of traditional CBT have always been limited due to high costs, stigma, and a shortage of qualified therapists, especially in developing countries like India.

In response to these limitations, several digital and AI-assisted CBT models have emerged in the last decade. One notable example is **Woebot**, developed at Stanford University, which uses **Natural Language Processing (NLP)** to simulate human-like CBT conversations through a chatbot interface. Studies have demonstrated that Woebot can significantly reduce symptoms of depression and anxiety within two weeks of daily use (Fitzpatrick et al., 2017). Similarly, **Wysa**, an India-based AI-powered mental health app, combines techniques like journaling, mood tracking, and CBT prompts in a multilingual and culturally adaptive environment. According to Fulmer and Joerin (2018), Wysa has reported high levels of user satisfaction and engagement, particularly among young adults and first-time therapy users.

Another AI-enhanced tool, **Tess**, developed by X2AI, uses psychological algorithms to interact with users via SMS and social platforms. Tess has been deployed in healthcare systems and universities to support mental well-being and has shown measurable improvements in emotional regulation and stress management (Inkster et al., 2018).

Beyond chatbot applications, **machine learning algorithms** have been increasingly applied to **mental**

health prediction models. Algorithms such as **Support Vector Machines (SVM)**, **Decision Trees**, and **Deep Neural Networks** have been used to analyze datasets like Patient Health Questionnaire—9 **(PHQ-9)** and the Generalized Anxiety Disorder Questionnaire– 7 **(GAD-7)**, and social media activity to predict the onset or severity of depressive symptoms. Sharma et al. (2022) demonstrated that Decision Tree classifiers performed with an accuracy of 85% on standard mental health questionnaires, making them suitable for early-stage screening.

Recent advancements in **Transformer-based models** like **ChatGPT** and **BERT** have further enhanced the contextual understanding and empathic response capabilities of AI systems. Rajasekaran et al. (2024) showed that integrating large language models with CBT frameworks could simulate deeper therapeutic exchanges and even detect crises in real-time, prompting emergency escalation protocols.

Despite these technological successes, there remain significant limitations. Ethical issues surrounding **data privacy**, **bias in AI models**, and the **absence of human empathy** are still critical challenges. Moreover, studies caution that while AI tools can be effective for early intervention and support, they should complement rather than replace human therapists (Luxton, 2016).

5. Methodology and Adaptive Approach

5.1 System Modules

- **User Authentication**: Secures user data and access.
- **Self-Assessment**: Uses PHQ-9 and GAD-7 surveys analysed via NLP for emotional assessment.
- **Prediction Model**: Decision Tree algorithm classifies users as Low, Moderate, or High risk.
- **CBT Intervention**: Chatbot delivers exercises like thought restructuring, behavioural activation, and journaling.
- **Progress Tracker**: Visualizes mood, goals, and improvement over time.
- **Feedback Cycle**: The system changes in response to human input and results.

5.2 AI-Driven Enhancements

- **User Profiling**: Initial assessments and interaction data build a personalized mental health profile.
- **Personalized Intervention**: Machine learning tailors CBT content to user needs.
- **Continuous Monitoring**: App interactions and device sensors provide real-time mental health indicators.
- **Feedback Looping:** The system changes in response to input from users and results.

6. Results and Analysis

The **Decision Tree Classifier** exhibited the highest accuracy at **83.33%**, closely followed by **SVM** with **83.06%**. Both models showed a significantly better performance than the remaining models, such as **K-Neighbours** and **Random Forest**, which achieved accuracy rates of 81.45%

and 81.18%, respectively. Models like **Naive Bayes**, **Stacking**, and **Logistic Regression** performed with lower accuracy, indicating that more complex models (such as Decision Trees and SVMs) were better suited for this particular dataset.

Machine Learning Models	Accuracy (%)
Decision Tree Classifier	83.33
SVM	83.06
K-Neighbours	81.45
Random Forest	81.18
Naive Bayes	81.18
Stacking	80.91
Logistic Regression	79.84
Neural Network	79.57
Boosting	78.76

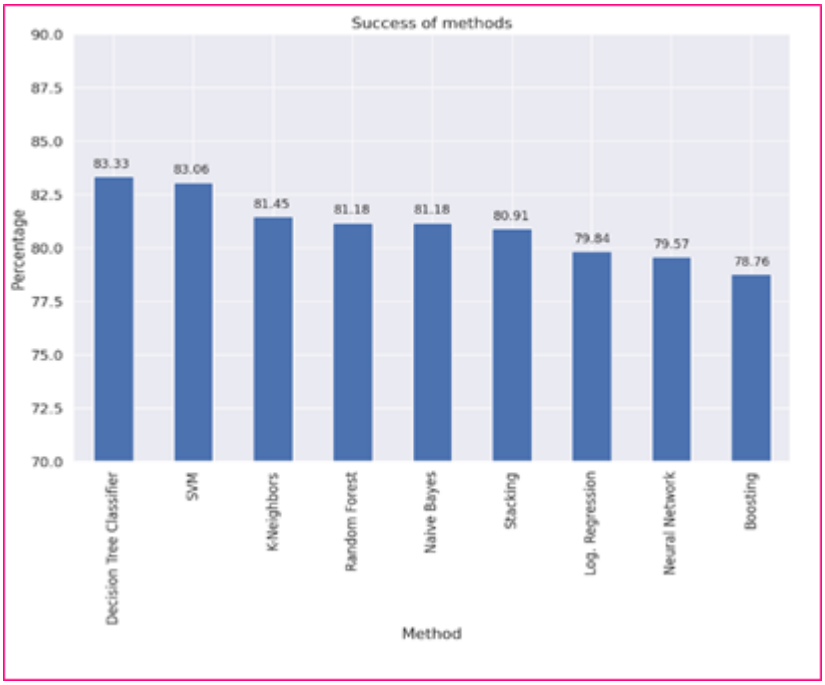

This analysis suggests that, for the given problem, tree-based models (like Decision Tree Classifier) may provide the most accurate results, potentially due to their ability to handle non-linear relationships between features effectively.

The system was tested on a dataset of PHQ-9 responses and simulated user inputs:

Metric	Result
Decision Tree Accuracy	83.33%
Engagement Rate	75% user interaction sustained
Sentiment-NLP Match	80% alignment with self-report
User Feedback	Positive on availability, privacy, ease of use

The chatbot-based intervention showed meaningful engagement, particularly among users new to therapy.

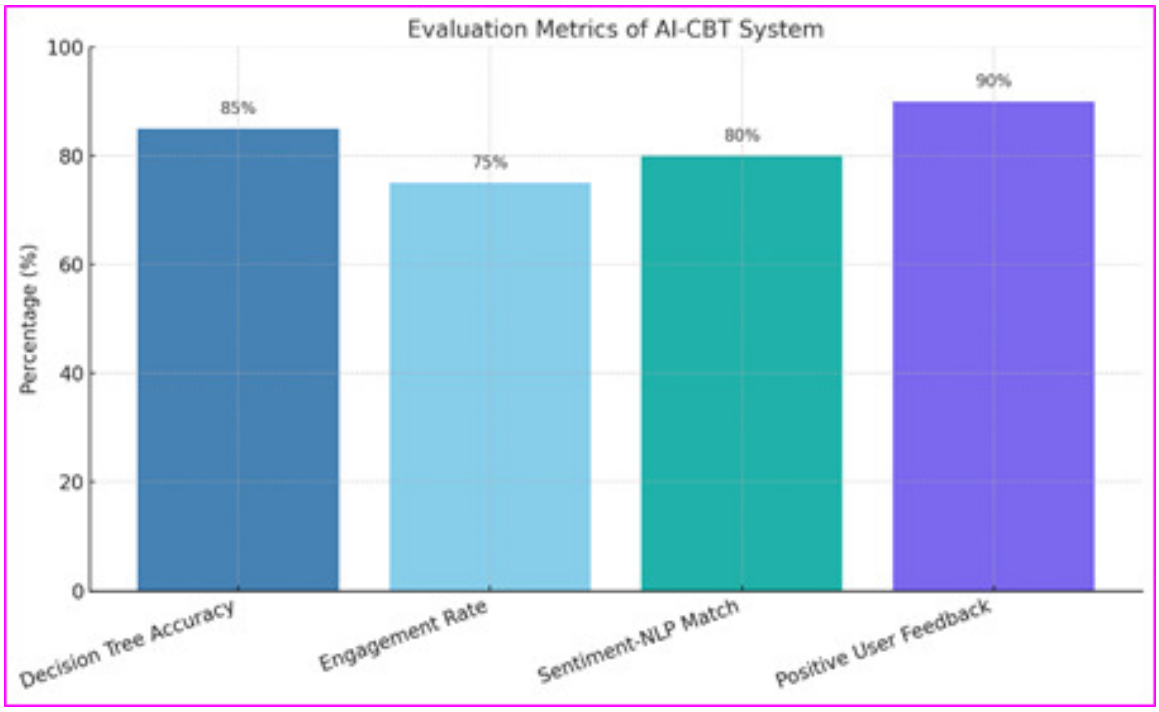

7. Real-Time Applications

AI-driven CBT systems have a wide range of real-time applications across various sectors. In **educational institutions**, they help identify stress and anxiety in students early and provide interactive mental health support.

In **corporate workplaces**, these tools promote employee well-being by offering 24/7 support for issues like burnout and work-related stress. In **rural areas**, where access to therapists is limited, mobile-based CBT apps provide essential mental health screening and intervention.

Telehealth platforms can also integrate AI-CBT features to support patients managing chronic illness and related emotional challenges. These systems are scalable, accessible, and adaptable, making them valuable for schools, offices, healthcare, and remote communities alike.

8. Future Scope

The future of AI-driven Cognitive Behavioural Therapy (CBT) holds immense promise in expanding the accessibility, personalization, and effectiveness of mental health support. One of the key areas for future development is **multilingual and culturally adaptive support**. Most existing CBT chatbots are English-centric, limiting their usability among non-English-speaking populations. Expanding the model to support regional languages like Hindi, Tamil, Bengali, and others can help bridge the linguistic gap in mental health services, especially in rural and semi-urban areas.

Another attractive approach is the use of wearable technology, such as smartwatches and health fitness bands. Physiological factors like heart rate variability, sleep patterns, and levels of physical activity can be regularly monitored by these devices. Such real-time data, when synchronized with AI models, can provide greater insights into a person's emotional state, letting the system recognize stress indicators and initiate timely CBT therapies or relaxation techniques.

The platform can also be enhanced with **gamified CBT modules**, voice-assisted therapy sessions, and integration into **school and workplace wellness programs**. Future versions may adopt **federated learning** to train AI models locally on user devices, improving privacy without compromising accuracy. As research and technology evolve, AI-CBT systems can become a powerful complement to traditional therapy, enabling proactive, scalable, and user-friendly mental health care globally.

9. Ethical Considerations

As AI technologies become increasingly integrated into mental health interventions, ethical considerations must be a central focus to ensure responsible and trustworthy use. Considering mental health information is so sensitive, data privacy is one of the most important considerations.

Systems must employ secure encryption, anonymization techniques, and strict data access protocols to protect user confidentiality and prevent breaches.

Fairness and bias in AI systems are major issues as well. Training data may reflect demographic, linguistic, or cultural biases, which can result in unequal treatment or inaccurate predictions for certain user groups. Continuous evaluation and refinement of datasets and models are necessary to minimize these biases and ensure equitable outcomes.

Crisis detection is also vital. AI systems must be equipped with real-time risk assessment features to detect signs of suicidal ideation, self-harm, or severe distress. In such cases, the system should escalate the issue to human professionals or emergency services, ensuring timely and appropriate intervention.

Additionally, **transparency and informed consent** must be upheld. Users should be clearly informed that they are interacting with an AI system, how their data will be used, and what the system's limitations are. Misleading users into believing the chatbot is a substitute for a human therapist can lead to overreliance or neglect of professional help.

To address these concerns, developers should align with ethical standards such as the guidance of **World Health Organization (WHO)** on **digital health**, which emphasizes accountability, privacy, safety, and inclusivity. Furthermore, implementing human-in-the-loop systems and conducting regular audits can enhance oversight and build user trust. Ultimately, AI should function as a complementary

tool, augmenting rather than replacing human therapists, especially in high-stakes mental health contexts.

10. Conclusion

AI-enabled Cognitive Behavioural Therapy offers a transformative approach to mental health care. By integrating machine learning, sentiment analysis, and chatbot-based delivery, the system developed in this project provides early detection, personalized interventions, and scalable support.

The model achieved high prediction accuracy and user engagement while preserving privacy. With further development and ethical oversight, such AI-CBT systems can serve as valuable complements to traditional therapy, especially in underserved regions.

References

1. Fitzpatrick, K. K., Darcy, A., & Vierhile, M. (2017). Delivering cognitive behavior therapy using Woebot: A randomized controlled trial. *JMIR Mental Health, 4*(2), e19.
2. Fulmer, R., & Joerin, A. (2018). Using conversational AI in mental health: The case of Wysa. *Psychology Today*.
3. Inkster, B., Sarda, S., & Subramanian, V. (2018). An empathy-driven, conversational artificial intelligence agent (Tess) for mental health interventions: A retrospective study. *JMIR mHealth and uHealth, 6*(11), e64.
4. Sharma, R., et al. (2022). *Mental Health Prediction using Machine Learning Algorithms*. Springer AI in Healthcare.
5. Rajasekaran, P., et al. (2024). AI-Powered Chatbots for Psychological Assessment. IJERT.
6. Luxton, D. D. (2016). *Artificial intelligence in behavioral and mental health care*. Academic Press.

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

ARTIFICIAL INTELLIGENCE AND CRIMINAL LIABILITY

Soundara Rajendren Nayagi
Former HOD English, Shri Andal Alagar Institute and Technology, Chennai, Former Journalist & Soft Skill Trainer Frankfinn
Email : soundaranayagi14@gmail.com
Phone : 9629466316

1. Introduction

Artificial Intelligence (AI) is the science of making machines, 'think and act like humans,' and could do multiple tasks such as driving cars, diagnosing diseases, chatting with people, analyzing legal documents etc., All the systems work based on data, logic and algorithms. Artificial intellect (AI) is the simulation of human intellect in computers that have been instructed to think and learn. With increasing integration of AI in everyday life, from smart assistants to self-driving cars (Figure 1), questions arise regarding accountability when these systems cause harm. What happens if an AI system makes a mistake or causes harm?

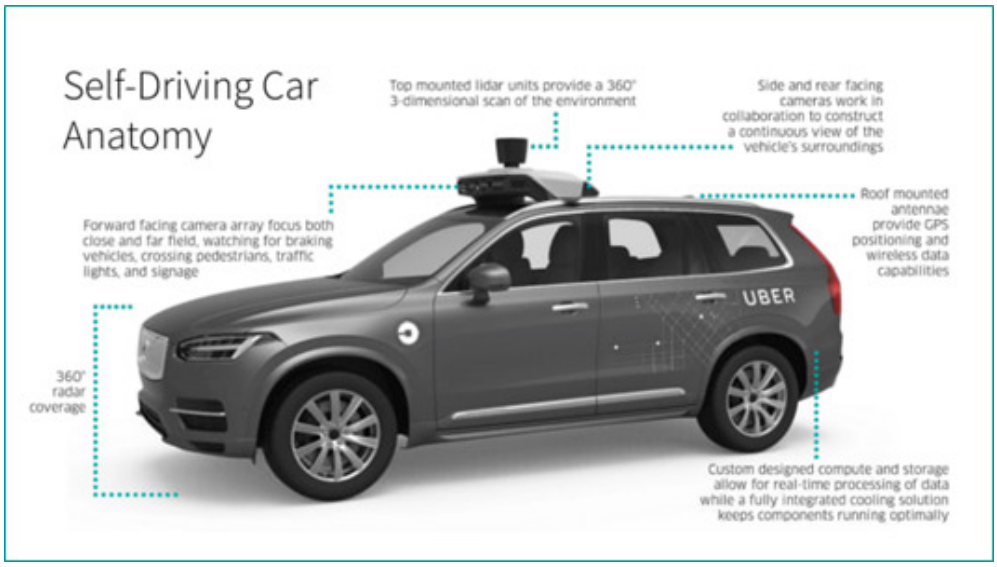

Figure 1: Self Driving Car Features

For example , if self-driving car hits someone or medical car hits someone or medical AI gives the wrong advice who is to be blamed ? Here only Criminal law faces a big challenge.

Traditional laws were written for human actions not machines, Criminal law depends on two ideas:

Actus Reus -The wrongful Act

Mens Rea - The guilty mind

AI has no feelings or intentions so the guilty part becomes so tricky which raises important legal, ethical, social matters that affect everyone including senior citizens who are now using smart devices more than ever.

AI has become the part of our lives in banking, transport, hospitals, homes and even in police department. Learning about it helps people to protect their rights and take part in important conversations about how laws should evolve.

An example :

A robot (AI) stands at a courtroom witness box.

On one side, a lawyer and a judge are looking puzzled.

Behind the AI a developer and a hospital administrator are shown whispering symbolizing their responsibilities.

The background shows symbols like self-driving car, a medical monitor and binary code to represent AI's reach.

2. Evolution of Artificial Intelligence

The evolution of Artificial intelligence (Figure 2) has been a transformative journey, that impacts various facets of human life including daily activities, industry and military operations.AI started as rule-based systems and has evolved into machine learning and neural networks. Today, AI can process massive data and make autonomous decisions, affecting areas such as healthcare, transport and law.

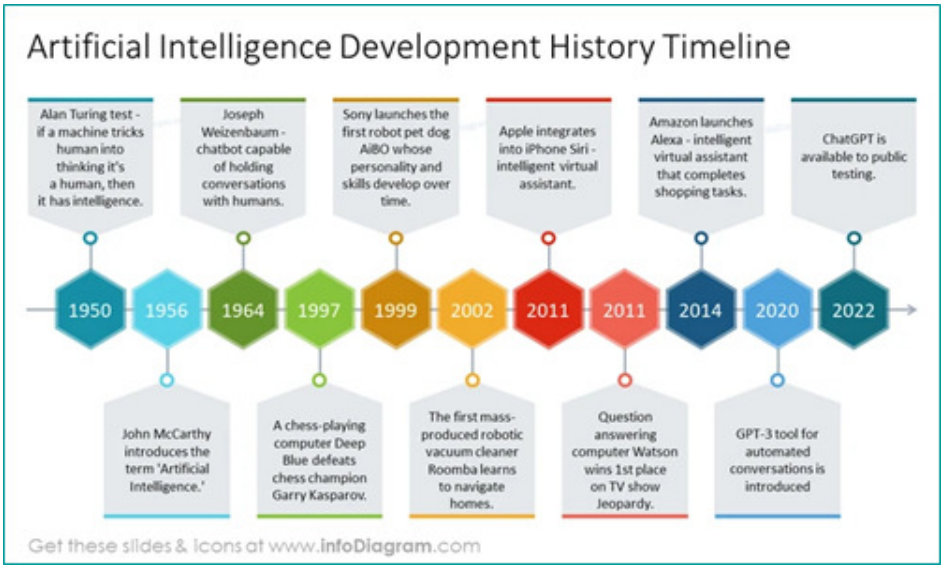

Figure 2: Evolution of Artificial Intelligence

Example (Raipur): In Raipur, a government-run hospital implemented an AI-based diagnostic tool that incorrectly flagged multiple patients, causing public concern about machine error accountability.

Some case studies that happened in Bhopal. Raipur and Chennai are stated below:

Bhopal

Smart City Initiatives:

Implementation of AI – driven traffic management systems to reduce congestion and **pollution.**

Health Care: Deployment of AI tools in hospitals for early disease detection and patient data analysis.

Raipur

Agriculture:

Use of AI -powered drones for crop monitoring and precision farming, leading to increased yields.

Education :

Integration of AI in schools to personalized learning experiences and track student progress.

Chennai

Disaster Management :

AI systems predict and monitor natural disasters, aiding in timely evacuations and resource allocation.

Transportation :

Introduction of AI in public transport for route optimization and real time tracking.

2.1 Brief History of Artificial Intelligence

Early Foundations (1940's 1950's)

Alan Turing introduced the concept of a universal machine capable of performing any computation for AI.

1956 : The term Artificial Intelligence was coined during the Dartmouth Conference, making the formal inception of AI as field.

Symbolic AI and Expert Systems (1960's -1980's)

Development of programs like ***ELIZA***, simulating human conversation.

Emergence of expert systems that mimicked decision making abilities of human experts.

Machine Learning and Neural Networks (1990's-2000's)

Advancements in Algorithms enabled machines to learn from data.

Introduction of neural networks could recognize patterns and enhance over time.

Deep Learning and Generative AI (2010's Present)

There are many models capable of generating human like texts which are more helpful in many ways also minimizes time for those who are busy.

Integration of AI in various applications from virtual assistants to autonomous vehicles.

2.2 Role of AI in Daily Life, Industry and Military

Virtual Assistants :

AI powered assistants like ***Siri*** and ***Alexa*** help with tasks like setting reminders and answering queries.

Personalized Recommendations:

Streaming services and ***E-commerce platforms*** use AI to suggest content and products based on user behaviour.

Smart Homes

AI controls lighting, temperature and security systems for ***safety*** and ***comfort.***

Industry (font increase)

Manufacturing :

AI optimizes production lines by predicting ***maintenance*** needs and ***ensures quality control.***

Healthcare:

AI assists in ***diagnostics treatment planning*** and ***patient monitoring*** .

Finance:

AI algorithms detect fraudulent activities.

Military (font increase)

Surveillance:

AI analyzes data from drones and satellites for ***intelligence gathering*** .

Autonomous Weapons:

Development of AI driven drones and missiles for precision strikes

Strategic Planning

AI models simulate battle scenarios to aid in decision making

3. Understanding Criminal Liability

Criminal liability means holding someone legally responsible for a crime. Committed on criminal offense -The act prohibited by law. It requires a guilty act (***actus reus***) and a guilty mind (***mens rea***). Traditionally, only humans or legal entities like companies can be held liable.

Example (Chennai): In Chennai, a software error in an AI-powered traffic control system led to a fatal accident, raising questions about who should be held criminally liable—the developers, the city authorities, or the AI system.

Legal Foundation in India

Legal Penal Code.1860(IPC)

The primary source of criminal liability in India.

Section 299-304 IPC

Relating to culpable homicide and murder

Section 34 and 149 IPC

Shared or group liability.

Case Laws

1.R V. Prince (1875)

Facts: Prince took a girl believing she was above 16 but she was younger

Held: Guilty because ignorance of age is no excuse when act is morally wrong.

Importance: It highlights strict liability; Mens Rea not always needed.

2.State of Maharashtra v. M.H. George (1965)

Facts: George brought gold into India without declaration. He claimed ignorance of law.

Held: Ignorance of law is not an excuse.

Effect: Reinforced the principle that intent isn't needed in strict liability offenses.

3. State of Rajasthan v. Kashi Ram (2006)

Facts: Dowry death case. Multiple family members charged.

Held: No direct evidence against some; held not guilty due to lack of Mens Rea.

Importance: Emphasizes requirement of intent and specific role.

Application to Artificial Intelligence (AI)

Problem: AI lacks consciousness; cannot form Mens Rea.

Example: If an AI drone injures someone, who is liable?

The programmer? (intent)

The user? (negligence)

The corporation? (vicarious liability)

Importance of Understanding Criminal Liability

1. Ensures Fairness – No one punished without fault or intent.
2. Separates Civil & Criminal Wrongs – Based on degree of guilt.
3. Guides Lawmaking – Helps define new crimes (like cybercrime, AI offenses).
4. Essential for Enforcement – Police and judiciary rely on liability principles to apply the law.

Effect on Legal System

1. Determines who is guilty and to what extent.
2. Prevents arbitrary punishment.
3. Influences judicial interpretation and policy-making.

4. Challenges of Applying Criminal Law to AI

AI lacks consciousness, so applying mens rea becomes difficult. If AI acts independently, can the programmer still be held liable? These issues challenge conventional legal frameworks.

Example (Bhopal): A Bhopal-based startup's delivery drone injured a pedestrian. Since the drone

acted autonomously, the police faced difficulty in determining legal responsibility.

No Mens Rea: Criminal law requires a guilty mind while AI lacks consciousness.

Causation Issues: Determining whether harm was caused by the AI's actions or due to human oversight.

Agency Problem: AI is neither fully autonomous nor entirely controlled—blurring lines of liability.

Adaptability: Criminal law is slow to adapt while AI evolves rapidly.

Example: If a self-driving car causes a fatal accident, who is liable—the manufacturer, software programmer, or user?

5. Types of AI and Legal Relevance

AI can be categorized as Narrow AI (designed for specific tasks), General AI (capable of learning any intellectual task), and Superintelligent AI (smarter than humans). The more autonomous an AI is, the more complex it becomes to assign legal responsibility.

Example (Raipur): *A Narrow AI was used to predict criminal hotspots in Raipur. Its bias* led to disproportionate patrolling in minority environments, triggering human rights debates.

Narrow AI: Performs specific tasks like chatbots and facial recognition which could be tools under existing law.

General AI: Hypothetical. Would need new legal recognition.

Autonomous AI: Operates without human input; raises concerns about accountability.

Relevance: Legal liability varies with the degree of autonomy and foreseeability of the AI's action.

6. Jurisprudential Theories and AI

Legal theories like positivism focus on the written law, while natural law emphasizes morality. When AI makes harmful decisions, legal realism suggests adapting the law to modern technological realities.

Perpetrator via Another: Human uses AI to commit a crime (e.g., cyber fraud).

Natural-Probable Consequence: Harm from foreseeable AI action leads to human liability.

Corporate Liability Analogy: Treat AI like a company—impose duties and penalties.

AI as Legal Person (future model): Recognizing AI as an entity capable of liability.

***Example (Chennai*)**: In Chennai, a law school study challenged traditional legal views by suggesting AI systems should be treated as 'quasi-legal persons' under realism.

Kelsen's Pure Theory of Law: This Law is applied to human people and not machines.

Hart's Rule of Recognition: It states that AI lacks societal recognition as a legal agent.

Insight: Traditional jurisprudence does not yet support treating AI as a legal person.

7. Criminal Liability Models for AI

There are different models: (a) Perpetrator Model – AI is seen as liable; (b) Tool Model – Developer/user is liable; (c) Vicarious Model – Organization using AI is liable; (d) Hybrid Model –

Shared responsibility.

Example (Bhopal): In Bhopal, a bank used AI to detect fraud. When it wrongfully blocked innocent customers, it sparked a debate on whether to hold the AI vendor or the bank liable.

Perpetrator via Another: Human uses AI to commit a crime (e.g., cyber fraud).

Natural-Probable Consequence: Harm from foreseeable AI action leads to human liability **Corporate Liability Analogy**: Treat AI like a company—impose duties and penalties.

AI as Legal Person (future model): Recognizing AI as an entity capable of liability.

Example: An AI trading bot manipulates markets—could the creator be liable like a corporate officer?

Yes, if an AI trading bot manipulates markets, the creator can be liable like a corporate officer if they knew or should have known that the AI could cause such harm and failed to prevent it. This follows the natural and probable consequence model of criminal liability.

8. International Legal Frameworks

EU AI Act (2024): It is a risk-based framework which imposes obligations on high-risk AI.

OECD AI Principles: Accountability, transparency, safety.

UNESCO AI Ethics Guidelines: Protect human rights and dignity.

The EU's AI Act focuses on regulating high-risk AI. The U.S. takes a sector-specific approach. Countries like Japan and Germany have AI ethics guidelines but lack comprehensive liability laws.

Example (Raipur): Raipur's smart city project referenced European AI safety guidelines to develop its urban AI monitoring system, indicating cross-border legal influence.

9. Indian Legal Framework & Gaps

No Specific AI Law: IPC and IT Act apply, but are insufficient.

IT Act, 2000: Addresses cyber-crimes but not autonomous decisions.

Data Protection Act, 2023: Covers privacy but not AI harm.

Gap: No legal recognition of AI's autonomy or culpability.

Example: No Indian case yet on AI crime liability, but debates are growing around facial recognition in policing.

India lacks dedicated AI legislation. The IT Act and IPC are used to address AI-related crimes. NITI Aayog has suggested ethical frameworks, but enforcement mechanisms are missing.

Example (Chennai): A Chennai-based facial recognition system used by police was found to have a high false positive rate, raising legal concerns under Article 21 of the Constitution.

10. Case Examples (Global & Indian)

Global:

- ***Tesla Autopilot Crash (US):*** Raised debate over liability—driver vs. manufacturer.
- ***Uber Self-Driving Fatality:*** Backup driver was charged, not the company or AI.

- ***Cases in the US, UK, and India*** reveal gaps, with courts relying on traditional human-centric laws.

India:

- ***Delhi Police Facial Recognition:*** Alleged bias and wrongful arrests with no clear accountability.
- ***Deepfake Scams:*** Addressed using IPC impersonation laws, lacking AI-specific regulations.
- ***Bhopal Hospital Case:*** AI misclassified patient urgency, leading to denial of care and legal scrutiny.

11. Ethical and Policy Considerations

Key concerns are accountability, transparency and data privacy. There is also the question of whether AI should have any rights or responsibilities.

Example (Raipur): The Raipur Municipal Corporation faced backlash when an AI-based grievance system ignored lower-income complaints, prompting ethical reviews.

Bias and Discrimination: AI trained on flawed data may reinforce inequality.

Transparency: Black-box algorithms lack explainability.

Consent and Privacy: AI can operate beyond users' knowledge

Ethical Dilemma: Should AI be allowed in sentencing or predictive policing?

AI should not be allowed in sentencing or predictive policing because it can reinforce existing biases, lacks human judgment and may be used as a s**upport tool** but final decisions should always be made by humans to ensure justice and accountability.

12. Future of AI Regulation

Regulation: Rules or guidelines established and maintained by a governing body to control conduct.

India's Emerging Framework: The National Strategy for Artificial Intelligence (NITI Aayog, 2018) emphasizes innovation but lacks clear rules on AI criminality.

Need for Statutory Backing: Legal provisions should define AI's role, culpability standards, and duty of care for developers.

Anticipated Features:

Classification of AI risk levels.

Mandatory audits for high-risk AI.

Penalties for non-compliance.

Global Trends:

The European Union's AI Act introduces a regulatory framework that classifies AI systems by risk levels and assigns corresponding obligations to both developers and users.

Proposals include safe testing zones for AI, checks on algorithms, certification processes, and considering legal status for advanced AI systems. India's Proposed AI Policy: Focus on innovation,

with light regulation—criticized for lacking accountability.

Global Push: Toward Responsible AI, with mandatory risk assessments.

Example (Chennai): In Chennai, the local government piloted an AI audit tool to inspect fairness in public welfare distribution systems.

13. Recommendations

1. **AI in Law**: Indian statutes must legally define AI and its classifications (e.g., autonomous, semi-autonomous).
2. **Attribution of Liability**: The process of figuring out whether the developer, the user, the company or someone else should be blamed and held legally accountable
3. **Primary: Developers/Manufacturers**: Developers are the software engineers or programmers who write the code and design how the AI works.
4. **Manufacturers** are the companies or individuals who produce the physical parts like robots or won and release the AI system.

   They are called primary because they have the most control and responsibility over how the AI functions and what it can do.
5. **Secondary: Users/Operators:** Someone like driver using a self-driving car or a business using AI software for customer service.

   An operator is the individual or group in charge of managing, operating, or supervising AI in everyday usage; they are referred to as secondary since they do not develop AI but are ultimately in charge of its use.
6. **Create AI Regulatory Authority**: Like SEBI or TRAI, to monitor, audit, and issue penalties. An official body to oversee and enforce laws related to AI. This authority would monitor AI systems ensure ethical use and penalize misuse or negligence.
7. **Mandatory Ethical Audits:** Ensure data integrity, non-discrimination, and transparency. Legally required to check regularly the AI systems to make sure they are fair, transparent, and not causing harm. These audits help ensure the AI respects privacy avoids bias and follows ethical guidelines.
8. **Legislative Amendments**:

   Amend IPC and CrPC to include AI-based harm and liability.

   Include AI as an "instrument" under cybercrime provisions.

   AI is used legally in statutes should establish strict AI audit protocols and impose mandatory ethical reviews as well as creating a regulatory authority.

   Example (Bhopal): Legal experts in Bhopal recommended adopting a licensing model for AI tools similar to motor vehicles, ensuring accountability.

14. Conclusion

As AI evolves, so must our legal systems. Criminal liability must adapt to ensure justice and deterrence without stifling innovation. India must lead in setting a balanced, rights-focused AI legal framework.

However, increasing autonomy raises significant legal and ethical concerns. Traditional criminal law frameworks—centered around human intention and agency—are inadequate to address AI-led harm. While international efforts (EU, OECD) are more advanced, India needs a comprehensive AI legal framework. The balance must lie in promoting innovation while ensuring safety, accountability, and justice.

Bibliography

1. Indian Penal Code, 1860
2. Information Technology Act, 2000
3. Data Protection Act, 2023
4. EU Artificial Intelligence Act, 2024
5. NITI Aayog's National Strategy for AI (2018)
6. Case: People v. Uber (2018) – US (Self-driving car fatality)
7. Falbo, C. (n.d.). *LIDAR scanning presentation*. Swanson School of Engineering, University of Pittsburgh.
8. Case: Tesla Autopilot Accident Case, California (2020)
9. Delhi Police Facial Recognition controversy (India, 2021)
10. OECD AI Principles (2019)
11. AashirDesign, "AI (Artificial Intelligence): The game changer since 1950," *Medium*, Mar. 4, 2023.
12. UNESCO, "Recommendation on the Ethics of Artificial Intelligence," (2021)
13. Hart, H.L.A. – The Concept of Law
14. Hans Kelsen – Pure Theory of Law
15. 'Robot Rules' by Jacob Turner
16. European Union AI Act (2021)
17. State of Arizona v. Uber Technologies
18. News reports from The Hindu, Times of India
19. SCC Online and JSTOR articles

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

भारतेन्दुयुगीन निबंधों में राष्ट्रीय सांस्कृतिक मूल्य

डॉ. प्रियंका
सहायक आचार्य
(हिन्दी विभाग)
खुन-खुन जी गर्ल्स पी. जी. कॉलेज
चौक, लखनऊ, उ. प्र.

हिन्दी साहित्य में अन्य विधाओं की भांति निबंध विधा का प्रादुर्भाव भी भारतेन्दु युग में हुआ था। हिन्दी निबंध साहित्य के जनक प्रणेता भारतेन्दु हरिशचन्द जी को माना जाता है। भारतेन्दु जी के समकालीन निबंध लेखकों में बालकृष्ण भट्ट, प्रतापनारायण मिश्र, बद्रीनारायण चौधरी प्रेमधन, जगमोहन सिंह, लालाश्री निवासदास, अम्बिका दत्त व्यास, राधाचरण गोस्वामी, काशीनाथ खत्री आदि थे। भारतेन्दु जी स्वयं निबंधकार थे और अन्य लेखकों को निबंध लिखने के लिए प्रोत्साहित करते थे।

भारतेन्दु युगीन निबंधों का विषय वस्तु मानवीय मूल्य, सामाजिक, राष्ट्रीय मूल्य के साथ-साथ धर्म, राजनीतिक आचार व्यवहार, प्राचीन गौरव और तत्कालीन सामाजिक पतन था। भारतेन्दु युगीन निबंधों में राष्ट्रीय प्रेम की चेतना विभिन्न प्रकार से मुखरित हुई है। राष्ट्रीय चेतना से युक्त इस युग के लेखकों ने देश के स्वर्णमय अतीत के गौरव का वर्णन करते हुए सोते हुए देशवासियों के जगाने का प्रयास किया भारतेन्दु के निबंध 'भारतोन्नति कैसे हो सकती है' में इसका यथार्थ चित्रण देखा जा सकता है। "हमारे हिन्दुस्तानी लोग तो रेल की गाड़ी हैं। यद्यपि फर्स्ट क्लास, सेकेण्ड क्लास आदि गाड़ियां बहुत अच्छी-अच्छी और बड़े-बड़े महसूल की इस ट्रेन में लगी हैं पर बिना इंजन सब नहीं चल सकती वैसे ही हिन्दुस्तानी लोगों को कोई चलाने वाला हो तो वे क्या नहीं कर सकते। इनसे इतना कह दीजिए कि चुप साधि रहा बलवाना फिर देखिए हनुमान जी को अपना बल कैसे याद आता है। सो बल और याद दिलावे।"[1]

भारतेन्दु युगीन निबंधों में राष्ट्र के हित और उसकी उन्नित कैसे हो सकती पर विशेष बल दिया गया था। भारतेन्दु के निबंध 'भारतवर्षो उन्नित कैसे हो सकती' का एक उदाहरण दृष्टया है–

"सब बात में उन्नित हो धर्म में, घर के काम में, बाहर के काम में, रोजगार में, शिष्टाचार में, चाल-चलन में, शरीर में, बल में, समाज में, युवा में, वृद्ध में, स्त्री में, पुरूष में, अमीर में, गरीब में, भारतवर्ष की सब आस्था, सब जाति, सब देश में उन्नित करो, सब ऐसी बातों को छोड़ो जो तुम्हारे इस पथ के कंटक हो।"[2]

भारतेन्दुयुगीन निबंधकारों की विशेषता यह भी कि उन्होंने ब्रिटिश साम्राज्यवाद की आर्थिक नीति उसके राजनीतिक दाव-पेंच सांस्कृतिक मामलों में उसके हस्तक्षेप को पहचाना गहराई से उसका विश्लेषण देश की राजनीतिक और सांस्कृतिक प्रगति के लिए एक मार्ग निश्चित किया "भारतवर्षो उन्नित कैसे हो सकती है का उदाहरण देखा जा सकता है। देखो अंग्रेजों की धर्मनीति, राजनीति परस्पर मिली है। इससे उनकी दिन-दिन कैसी उन्नित हुई है।[3] इस युग के निबंधकार राष्ट्रीय एकता के लिए राष्ट्रभाषा को भी आवश्यक माना।

भारतेन्दुयुगीन निबंधकारों को भारतीय संस्कृति के प्रति गहरी निष्ठा भी इस युग के निबंधकार संस्कृति का अर्थ

पुरातनता और परम्परा से चिपके रहना नहीं बल्कि उनमें नवीनता का आग्रह भी है। इस युग के निबंधों में पुरातनता एंव प्राचीन सांस्कृतिक मूल्यों की प्रतिष्ठा के साथ-साथ नए मूल्यों के स्वर भी सुनाई देते हैं। इस युग के निबंधों में सभी प्रकार के सांस्कृतिक मूल्य मिलते हैं भारतेन्दु के निबंध, सरयूपार की यात्रा, वैष्णव की वार्ता आदि में अध्यात्म पुराण, धर्म, दर्शन इतिहास और प्रकृति सभी क्षेत्रों का वर्णन किया है। हिन्दू पर्व त्योहारों के लिए उत्साह और नवीन विचारों का स्वागत इस युग के निबंधों में देखने को मिलता है जैसे 'वैष्णवता और भारतवर्ष' का उदाहरण दृष्टव्य है—"पुराणों के समय में तो विधिपूर्वक वैष्णव मत फैला हुआ था, यह सब पर विदित ही है। वैष्णव पुराणों की कौन कहे शाक्त और शैव पुराणों में भी उन देवताओं की स्तुति उनको विष्णु से सम्पूर्ण भिन्न करके नहीं कर सकते हैं, अब जैसा वैष्णव मत माना जाता है उसके बहुत से नियम पुराणों के समय से और फिर तंत्रों के समय से चले हैं। दो हजार वर्ष की पुरानी मूर्तियां बारह, राम लक्ष्मण वासुदेव की मिली हैं और उन पर भी खुदा हुआ है कि उन मूर्तियों की स्थापना करने वालों के वंश भगवत अर्थात् वैष्णव या राजतरंगिणी के ही देखने से रामकेशव आदि मूर्तियां की पूजा यहां बहुत दिनों से प्रचलित हैं।"[4]

इस प्रकार भारतेन्दु युग के निबंधों की सबसे बड़ी विशेषता उनके माध्यम से प्रकट होने वाला व्यापक राष्ट्रीय सांस्कृतिक जागरण है।[5] भारतेन्दु युग में समसामयिक और विविध-विषयक निबंधों का फलापूर्ण और भावपूर्ण सृजन हुआ। एक ओर सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, नैतिक और उपदेशपूर्ण निबंध है तो दूसरी ओर नृत्य, सौन्दर्य पर्व, त्योहार, जीवन चरित्र और नैतिक आचरण संबंधी निबंधों की सृष्टि हुई है।

सन्दर्भ :

1. लेखक भारतेन्दु हरिशचन्द्र- भारतवर्षोन्नित कैसे हो सकती है, निबंध-मान-सं. अंजुम शर्मा, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड जी-17 जगतपुरी दिल्ली, संस्करण पहला 2021, पृष्ठ संख्या- 14
2. वही, पृष्ठ संख्या- 17
3. वही, पृष्ठ संख्या- 17
4. लेखक भारतेन्दु हरिशचन्द्र-वैष्णवता और भारतवर्ष, निबंधमान-सम्पादक-अंजुम शर्मा, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड जी-17 जगतपुरी दिल्ली, संस्करण पहला 2021, पृष्ठ संख्या- 23
5. हिन्दी साहित्य का इतिहास-सम्पादक- डॉ. नगेन्द्र, डॉ. हरदयाल, प्रकाशक- मयूर पेपर बैक्स ए-95, सेक्टर-5, नोएडा, तीसरा संस्करण-2009, पृष्ठ संख्या- 465

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

मृदुला गर्ग के 'कठगुलाब' उपन्यास में नारी-जीवन का बदलता दृष्टिकोण

डॉ. पल्लवी मिश्रा
सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग
भगवान बक्श सिंह डिग्री कॉलेज, लखनऊ
मो.नं.- 9519714840
ईमेल-pallavimishra71226@gmail.com

शोध-आलेख सार

वर्तमान समय के साहित्य में 'उपन्यास' सबसे ज्यादा चर्चित, लोकप्रिय एवं सशक्त विधा मानी जाती है। उपन्यास ही एक ऐसा माध्यम है, जिसमें किसी कथा, घटनाओं, चरित्रों तथा सम्पूर्ण परिस्थितियों का पूरी सजीवता के साथ चित्रण किया जाता है तथा साथ- ही- साथ सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा मनोवैज्ञानिक पहलुओं का व्यापक रूप से वर्णन किया जाता है। उपन्यास केवल मनोरंजन का साधन नहीं होता बल्कि इसमें मानव जीवन की बहुमुखी छवि को अभिव्यक्त करने की पूर्ण शक्ति निहित होती है। हिन्दी साहित्य में 'उपन्यास' विधा ने साहित्यिक योगदान देने के साथ-साथ सामाजिक परिवर्तन में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इसी संदर्भ में समकालीन महिला साहित्यकारों में मृदुला गर्ग एक ऐसी लेखिका है जिन्होंने अपने लेखन के माध्यम से सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक सभी विषयों से जुड़ी समस्याओं का पूरी सत्यता के साथ चित्रण करने के साथ-साथ नारी पात्रों को निडर, साहसी तथा अपराधबोध से मुक्त करके नारी सशक्तीकरण को बढ़ावा दिया है। इसी कारण हिन्दी साहित्य में मृदुला गर्ग 'बोल्ड लेखिका' के रूप में जानी जाती है। डॉ. तारा अग्रवाल ने मृदुला गर्ग के व्यक्तित्व के संबंध में कहा है- ''एक लेखिका के रूप में अपने को स्थापित करने के लिए उन्हें काफी संघर्ष करना पड़ता है। मृदुला गर्ग के लेखकीय व्यक्तित्व के निर्माण में उनके परिवार की भूमिका तथा परिवेशगत सरकार प्रमुख रहे हैं।''[1]

मूल शब्द - समकालीन, सशक्तीकरण, बहुमुखी आदि।

समकालीन महिला उपन्यासकारों में 'मृदुला गर्ग' जी के उपन्यास इसी रूप में दिखाई पड़ते हैं। इन्होंने समकालीन साहित्य में 'बोल्ड लेखिका' के रूप में एक अलग पहचान बनाई है। क्योंकि उनके लेखन का केन्द्र- बिंदु 'यौन-संबंध' रहा है। इसका खुला चित्रण उन्होंने अपने साहित्य में किया है। समाज में सत्य को लिखना अपने ऊपर एक आरोप लगने जैसा है। हर कोई समाज में हो रहे अत्याचार, शोषण, बलात्कार का खुलकर विरोध नहीं करता है, क्योंकि आज के समय में यह एक आम बात हो गई है। लेकिन हिन्दी साहित्य की बहुचर्चित लेखिका 'मृदुला गर्ग' जी ने अपने साहित्य में नारी-शिक्षा, समाज में व्याप्त मर्यादाओं, पुराने संस्कारों को बदलने, नौकरी करने, नारी मनोविज्ञान तथा सामाजिक-परिवेश का चित्रण करके समाज को एक आईना दिखाने का कार्य किया है। उन्होंने अपने समय में होने वाली सभी सामाजिक समस्याओं का यर्थाथ चित्रण किया है। मृदुला गर्ग इस संबंध में कहती हैं- ''जीवन में जो कुछ घटता है, गहरे छूता है, व्यथित करता है, वह सब

एक दिन उन्यास के रूप में फूट जाता है।''

मृदुला गर्ग जी ने हिन्दी साहित्य की अनेक विधाओं में सृजन कार्य किया है। लेकिन उनके द्वारा लिखा गया उपन्यास साहित्य बहुत प्रसिद्ध रहा है। इनके द्वारा लिखे गए उपन्यासों में 'उसके हिस्से की धूप' (1975), वंशज (1976), चित्तकोबरा (1979), कठगुलाब (1996) आदि चर्चित उपन्यास है। इन्होंने अपने लेखन में नारी स्वाभिमान को स्वेच्छा के स्वर के साथ उन्हें स्वतंत्र अस्तित्व के बारे में सचेत करने का कार्य किया है। मृदुला गर्ग जी का साहित्य-सृजन यर्थाथ पर आधारित है। इस संदर्भ में डॉ. शीलप्रभा वर्मा उनके 'बोल्डनेस व्यक्तित्व' के बारे में अभिव्यक्त करते हुए कहती है- ''श्रीमती गर्ग बोल्ड है, उनका लेखन भी बोल्ड है, सहानुभूति न वे चाहती हैं, न वे बाँटती हैं.....जीवन में दुराव-छिपाव वे जानती नहीं और अपने लेखन की भी उन्होंने उसी के अनुरूप ढाला है। उनकी जैविक तृष्णाओं की सहज, स्पष्ट अभिव्यक्ति भी अपने प्रति बोला गया सच है। एक सूक्ष्म पारदर्शी वेदनधारा उनके लेखन और व्यक्तित्व में बहती हुई दिखाई देती है, वह कभी हँसी में छलकती है तो कभी शुद्ध त्रासदी बनकर उभरती है।''[2] आपके द्वारा लिखे गए 'कठगुलाब' उपन्यास में नारी-शोषण के क्रूर यर्थाथ का चित्रण हुआ है। इसके साथ- ही- साथ ही नारी के दमन और शोषण को दिखाते हुए नारी की चेतना, नारी-संघर्ष, नारी सशक्तीकरण को भी चित्रित किया है। यह उपन्यास नारी-विमर्श की दृष्टि से बहुचर्चित उपन्यास है। मृदुला गर्ग जी ने उपन्यासों के स्त्री-पात्रों स्मिता, मारियान, नर्मदा, असीमा के माध्यम से नारी के जीवन में होने वाली सभी समस्याओं, उनके द्वारा किए गए संघर्षों को यर्थाथ रूप से हमारे सामने प्रकट किया है। आज के समय में भी कहीं-न-कहीं पुरुष, स्त्रियों का आर्थिक, शारीरिक, बौद्धिक शोषण करते हैं। उपन्यास में भी स्त्रियों की यही समस्या दिखाई पड़ती है और स्त्री संघर्श करते हुए पितृसत्तात्मक समाज में हस्तक्षेप करती हैं और पुरुष के बराबर पहुँचने की होड़ भी शामिल हो जाती है। इस उपन्यास में विभिन्न परिस्थितियों में फँसी नारियों का चित्रण किया गया है। 'कठगुलाब' के माध्यम से लेखिका ने स्त्रियों को अपने आप से परिचित कराने का तथा उन्हें समाज में आगे बढ़ने के लिए पुरुषों के बराबर ही कार्य करने के लिए प्रेरित किया है। उपन्यास के चार स्त्री-पात्रों तथा एक पुरूश पात्रों के माध्यम से कथानक पाँच विभागों में बँटा हुआ है। इस उपन्यास के हर एक पात्र की अपनी समस्याएँ तथा कहानियाँ हैं। उपन्यास की स्त्री-पात्र स्मिता जो एक बलात्कारित नारी है, जो अपने अस्तित्व के साथ सम्मान से जीना चाहती है, लेकिन समाज ऐसी स्त्रियों को सम्मान से जीने नहीं देता है, स्मिता बिल्कुल इसके विपरीत है, वह अपने ऊपर होने वाले अत्याचार के प्रति उसके हृदय में प्रतिशोध की अग्नि धधकती है और वह एक निडर और साहसी स्त्री के रूप में उसका विद्रोह करती है, यही विद्रोह उसकी परिवर्तित मनोदशा को नया रूप देता है।

मृदुला गर्ग जी ने 'कठगुलाब' उपन्यास के माध्यम से नारी-चेतना के विभिन्न रूपों को चित्रित किया है। उनके उपन्यास की अन्य स्त्री-पात्र जिसमें 'मारियान' जो एक अच्छी लेखिका है, लेकिन उसके पति द्वारा उसके लेखकीय व्यक्तित्व को चुराया जाता है, मगर वह हार न मानकर नए तरीके से सृजन कार्य करके एक प्रसिद्ध लेखिका के रूप में समाज में अपना स्थान बना लेती है तथा 'नर्मदा' स्त्री पात्र जो एक अनपढ़ स्त्री है, लेकिन विभिन्न परिस्थितियों का निडर होकर सामना करती है। 'असीमा', उपन्यास की सबसे प्रखर व्यक्तित्व की स्त्री है, जो समाज में हो रहे अत्याचारों का खुलकर विरोध करती हैं। वह पुरुष-प्रधान समाज के खिलाफ है और उसका खुलकर विद्रोह करती है। मृदुला गर्ग जी स्मिता और नर्मदा के संबंध में स्वयं लिखती हैं- ''कितनी अजीब बात है कि साधनहीन नर्मदा स्मिता से ज्यादा सक्षम निकली। विकल्प दोनों ने खोजा, पर स्मिता आज तक अपनी मनोग्रंथियों से मुक्त नहीं हो सकी जबकि नर्मदा.....।''[3] इस उपन्यास के एक मात्र पुरुष-पात्र 'विपिन' एक आदर्श पुरुष की भांति स्त्रियों को सम्मान देता है। उसके अन्दर अन्य पुरुशों की तरह नारी का शोषण, भोगवादी प्रवृत्ति विद्यमान नहीं हैं। वह एक आदर्श व्यक्तित्व के रूप में दिखाई पड़ता है। वह उपन्यास में स्त्रियों का समर्थन करता है। मेरा मानना है कि इस तरह के उपन्यासों को हर हिंदी भाशी लोगों को जरूर पढ़ना चाहिए, जिससे हम समझ सकें कि समाज में सभी लोग एक तरह के नहीं होते हैं। उपन्यास का हर एक पात्र समाज में अपना स्थान बनाने के लिए संघर्ष करता हुआ दिखाई पड़ता है। मृदुला गर्ग ने 'कठगुलाब' उपन्यास के माध्यम से नारी-स्वतंत्रता, नारी का आत्मसम्मान, नारी-चेतना का बिगुल बजाया है। उपन्यास का हर एक पात्र कहीं-न- कहीं अपनी स्मिता, अपने आत्म-सम्मान के लिए संघर्ष करते हुए

दिखाई पड़ते हैं। आज के समय में भी स्त्रियाँ अपने अस्तित्व के लड़ाई लड़ रही हैं और आगे बढ़ रही हैं। मृदुला गर्ग जी ने खुद अपने उपन्यास के पात्रों के संबंध में कहा है-''कठगुलाब उपन्यास में पाँच कथावाचक हैं, जो अपनी-अपनी कहानी कहते हैं, लेकिन जीवन में वे सब कहीं-न-कहीं एक-दूसरे से जुड़े हुए अभिन्न हैं। इसलिए उनमें से किसी की कहानी तब तक पूरी नहीं हो सकती, जब कथानक पूरा न हो।''[4]

निष्कर्षतः हम कह सकते है कि मृदुला गर्ग जी समकालीन महिला उपन्यासकारों में अपना एक सर्वोच्च स्थान रखती हैं। उनके द्वारा लिखा गया 'कठगुलाब' उपन्यास नारी के शोषण एवं विद्रोह की कथा है, जिसमें नारी के विभिन्न रूप दिखाई पड़ते हैं। ये नारियाँ अपने संघर्ष के द्वारा समाज में अपना आत्म-सम्मान बनाए रखने में सफल होती है। मृदुला गर्ग जी अपने उपन्यास में नारी अस्मिता तथा नारी-चेतना को विशिष्ट रूप प्रदान करके उसके माध्यम से समाज को यर्थाथता से परिचित कराया है तथा नारी द्वारा अपने आत्मसम्मान तथा स्वयं को सही सिद्ध करने के लिए किए गये प्रयासों को भी अच्छी तरह रेखांकित किया है। अतः 'कठगुलाब' उपन्यास नारी को केंद्र में लिखा गया बहुचर्चित उपन्यास है।

सन्दर्भ ग्रन्थ- सूची

1. अग्रवाल, डॉ. तारा : 'मृदुला गर्ग का कथा साहित्य,' पृ. 13
2. वर्मा, डॉ. शीलप्रभा : 'महिला रचनाकारों की रचनाओं में बदलते सामाजिक संदर्भ', पृ. 41
3. गर्ग मृदुला : 'कठगुलाब', पृ. 180
4. गर्ग मृदुला : 'कठगुलाब', प्लैप पृष्ठ से

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

विद्यार्थी शिक्षकों की चुनौती स्वीकार्यता का उनके व्यक्तित्व पर प्रभाव

प्रो. वंदना गोस्वामी
निर्देशक
शिक्षा संकाय, वनस्थली विद्यापीठ, निवाई, टोंक

शालिनी चावला
शोधार्थी,
शिक्षा संकाय, वनस्थली विद्यापीठ, निवाई, टोंक
Mo. No-9480936622
Email-shalinichawla1980@gmail.com

सारांश

शिक्षक निर्माण एक समग्र प्रक्रिया है, जिसमें न केवल शैक्षणिक दक्षता बल्कि भावनात्मक व सामाजिक परिपक्वता भी आवश्यक होती है। विद्यार्थी शिक्षक, शिक्षक बनने की दिशा में पहला कदम रखते हैं और उन्हें प्रशिक्षण काल में कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। इन चुनौतियों को स्वीकार करने की उनकी क्षमता सीधे उनके व्यक्तित्व पर प्रभाव डालती है। चुनौती स्वीकार्यता केवल समस्या हल करने की योग्यता नहीं, बल्कि मानसिक दृढ़ता, आत्मविश्वास और विकासोन्मुख दृष्टिकोण का परिचायक भी है। अध्यापक शिक्षा में प्रशिक्षणार्थियों (टीचर ट्रेनिंग के छात्र) की कई चुनौतियाँ हैं, जिनमें प्रवेश प्रक्रिया, रोजगार की समस्याएँ, सुविधाओं की कमी, व्यावसायिकता की कमी, अच्छे अभ्यास शिक्षण की कमी, उचित मार्गदर्शन और पर्यवेक्षण की कमी, शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम का कम महत्व, पर्याप्त शिक्षण संकायों की कमी, पाठ योजना और समय प्रबंधन, कक्षा नियंत्रण और अनुशासन, तकनीकी संसाधनों का अभावए आत्म-संदेह शामिल हैं। आज के समय में जब शिक्षा व्यवस्था में निरंतर परिवर्तन हो रहे हैं, ऐसे में शिक्षकों के व्यक्तित्व में अनुकूलनशीलता और चुनौती स्वीकार्यता अत्यंत आवश्यक है। विद्यार्थी शिक्षकों के व्यक्तित्व की ऐसी विशेषताओं को समझना और विकसित करना आवश्यक है, ताकि वे भविष्य के लिए तैयार शिक्षक बन सकें।

परिचयः

अध्यापक शिक्षा (Teacher Education) का शाब्दिक अर्थ है, शिक्षकों को शिक्षित और प्रशिक्षित करने वाली शिक्षा। यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें अध्यापकों को शिक्षण, सामाजिक, व्यावसायिक और व्यक्तिगत कौशल प्रदान किए जाते हैं, ताकि वे विद्यार्थियों को प्रभावी ढंग से शिक्षित कर सकें।

अध्यापक शिक्षा में औपचारिक और अनौपचारिक दोनों प्रकार के अनुभव और क्रियाएं शामिल होती हैं, जो किसी भी व्यक्ति को योग्य शिक्षक बनाती हैं। दूसरे शब्दों में, अध्यापक शिक्षा वह कार्यक्रम है जो किसी व्यक्ति को शिक्षक के रूप में तैयार करती है और उसे शिक्षण, प्रशासन, मूल्यांकन, बाल विकास, और अन्य शैक्षिक जिम्मेदारियों के लिए सक्षम बनाती है।

जो अध्यापकों के ज्ञान, अभिवृत्ति, व्यवहार, और पढ़ाने के कौशल की वृद्धि के लिये बनायी गयी होतीं हैं उन नीतियों,

प्रक्रियाओं आदि के समूह को अध्यापक शिक्षा (Teacher education) कहते हैं। अध्यापक शिक्षा एक जटिल और महत्वपूर्ण प्रक्रिया है, जिसका उद्देश्य ऐसे शिक्षक तैयार करना है जो न केवल ज्ञान के प्रसार के साथ-साथ समाज और राष्ट्र के विकास में भी सहायक बन सकें। भावी शिक्षकों को और अधिक कुशल, जिम्मेदार और नवाचारी बनाया जा सके इसके लिए इसमें सुधार की आवश्यकता है।

अध्यापक शिक्षा शिक्षक निर्माण एक समग्र प्रक्रिया है, जिसमें न केवल शैक्षणिक दक्षता बल्कि भावनात्मक व सामाजिक परिपक्वता भी आवश्यक होती है। विद्यार्थी शिक्षक, शिक्षक बनने की दिशा में पहला कदम रखते हैं और उन्हें प्रशिक्षण काल में कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। इन चुनौतियों को स्वीकार करने की उनकी क्षमता सीधे उनके व्यक्तित्व पर प्रभाव डालती है। चुनौती स्वीकार्यता केवल समस्या हल करने की योग्यता नहीं, बल्कि मानसिक दृढ़ता, आत्मविश्वास और विकासोन्मुख दृष्टिकोण का परिचायक भी है।

एक अध्ययन में पाया गया कि वे विद्यार्थी शिक्षक, जो स्कूल में तकनीकी संसाधनों की कमी के बावजूद रचनात्मक उपाय अपनाते हैं (जैसे चार्ट, समूह चर्चा), उनके व्यक्तित्व में आत्मनिर्भरता और नवाचार की भावना अधिक पाई गई। वहीं जो विद्यार्थी चुनौतियों से बचते रहे, उनमें आत्मविश्वास की कमी और कार्य से दूरी देखी गई।

एक अच्छे शिक्षक के गुणों की सूची निम्नलिखित है–

1. चरित्रवान और आदर्श व्यक्तित्व- शिक्षक में उच्च नैतिक मूल्य, ईमानदारी, निष्पक्षता, न्यायप्रियता और आत्मविश्वास जैसे गुण होने चाहिए।

2. स्वस्थ शरीर और मन- अच्छा स्वास्थ्य और संतुलित मानसिक स्थिति शिक्षक के लिए आवश्यक है।

3. विषय का गहन ज्ञान- शिक्षक को अपने विषय के साथ-साथ अन्य विषयों और सामान्य ज्ञान पर भी अच्छी पकड़ होनी चाहिए।

4. प्रभावी संचार कौशल- स्पष्ट और आकर्षक ढंग से पढ़ाने और समझाने की क्षमता होनी चाहिए।

5. धैर्य और सहानुभूति- हर बच्चे की सीखने की गति अलग होती है, इसलिए शिक्षक में धैर्य और सहानुभूति होनी चाहिए।

6. नेतृत्व क्षमता- कक्षा में नेतृत्व करने और छात्रों को सही दिशा में प्रेरित करने की योग्यता होनी चाहिए।

7. रचनात्मकता और नवाचार- पढ़ाई को रोचक और प्रभावी बनाने के लिए नए तरीके अपनाने की क्षमता होनी चाहिए।

8. अनुशासन और प्रेरणा- अनुशासन बनाए रखते हुए छात्रों को प्रेरित करना और उनका आत्मविश्वास बढ़ाना।

9. सभी के साथ समान व्यवहार- सभी छात्रों के साथ समानता का भाव रखना और कमजोर छात्रों पर विशेष ध्यान देना।

10. अध्ययनशीलता- निरंतर सीखने और खुद को अद्यतन रखने की भावना।

11. अनुभव साझा करना- अपने जीवन के अनुभव छात्रों के साथ साझा करना, ताकि वे जीवन में सफलता की राह पर चल सकें।

12. व्यवहारिकता और विनम्रता- शांत, विनम्र और मधुर वाणी वाला होना।

13. स्व-मूल्यांकन और निरंतर सुधार- खुद का मूल्यांकन करते रहना और अपने कौशल में सुधार करना।

14. चुनौती स्वीकार्यता- शिक्षक के जीवन में आने वाली चुनौतियों को स्वीकार करना उसका एक महत्त्वपूर्ण गुण है।

इन गुणों के कारण ही एक शिक्षक समाज का निर्माता और छात्रों के भविष्य का आधार बनता है।

चुनौती स्वीकार्यता का अर्थ :

चुनौती स्वीकार्यता का तात्पर्य उन परिस्थितियों को सकारात्मक दृष्टिकोण से अपनाने की क्षमता है, जो किसी व्यक्ति

के लिए बाधा बन सकती हैं। यह गुण शिक्षक प्रशिक्षण के दौरान विशेष महत्त्व रखता है क्योंकि यह विद्यार्थियों को मानसिक, सामाजिक व व्यावसायिक रूप से सुदृढ़ बनाता है।

चुनौती स्वीकार्यता का अर्थ है किसी समस्या, अवरोध, या कठिनाई को पहचानना, उसे स्पष्ट रूप से स्वीकार करना और उसके समाधान के लिए प्रयास करने की तैयारी। दूसरे शब्दों में, यह उस मानसिकता को दर्शाता है जिसमें कोई व्यक्ति, संस्था या व्यवस्था अपने सामने आने वाली चुनौतियों को मुखरता से स्वीकार करती है और उन्हें दूर करने के लिए सकारात्मक रवैया अपनाती है।

शिक्षा के क्षेत्र में, चुनौती स्वीकार्यता का मतलब होता है कि शिक्षा व्यवस्था या शिक्षक अपने सामने आने वाली समस्याओं (जैसे गुणवत्ता की कमी, प्रशिक्षण की कमी, पाठ्यक्रम में दोष, तकनीकी बदलाव से अनुकूलन आदि) को स्पष्ट रूप से स्वीकार करते हैं और उनके समाधान के लिए नीति-निर्माता, शिक्षक और संस्थाएँ मिलकर प्रयास करती हैं।

इस प्रकार, चुनौती स्वीकार्यता एक सकारात्मक और सुधारवादी दृष्टिकोण है, जिसमें समस्याओं को छिपाने के बजाय उनका सामना किया जाता है।

विद्यार्थी शिक्षकों की प्रमुख चुनौतियाँ :

अध्यापक शिक्षा में प्रशिक्षणार्थियों की कई चुनौतियाँ हैं, जिनमें प्रवेश प्रक्रिया, रोजगार की समस्याएँ, सुविधाओं की कमी, व्यावसायिकता की कमी, अच्छे अभ्यास शिक्षण की कमी, उचित मार्गदर्शन और पर्यवेक्षण की कमी, शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम का कम महत्व, पर्याप्त शिक्षण संकायों की कमी, पाठ योजना और समय प्रबंधनए कक्षा नियंत्रण और अनुशासनए तकनीकी संसाधनों का अभावए आत्म-संदेह और मूल्यांकन का भय, भाषा एवं संप्रेषण कौशल की कमी और अक्षम शिक्षक शामिल हैं।

शिक्षक बनने की चुनौतियाँ विस्तृत रूप में इस प्रकार हैं:

छात्रों के व्यवहार और कक्षा प्रबंधन :

अध्यापक शिक्षा में प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले व्यक्तियों को नए वातावरण में समायोजित करना पड़ सकता है, जिसमें नए सहपाठी, नए शिक्षक, और नए पाठ्यक्रम शामिल हो सकते हैं। कुछ छात्र ध्यान केंद्रित करने, अनुशासित रहने या निर्देशों का पालन करने में संघर्ष करते हैं।

छात्रों की व्यक्तिगत जरूरतों को पूरा करना :

हर छात्र की सीखने की शैली और गति अलग होती है, इसलिए शिक्षकों को अलग-अलग छात्रों की जरूरतों को ध्यान में रखकर शिक्षण योजना बनानी होती है।

पाठ्यक्रम की माँग :

अध्यापक शिक्षा के पाठ्यक्रम में अक्सर उच्च स्तर की मांग होती है, जिसमें छात्रों को विभिन्न विषयों में गहराई से ज्ञान प्राप्त करना होता है।

संसाधनों की कमी :

कक्षाओं के लिए पर्याप्त सामग्री, उपकरण और तकनीक उपलब्ध नहीं हो सकती है जिससे प्रषिक्षण में पूर्णता नहीं आ पाती।

अभिभावकों और समुदाय के साथ संवाद :

अभिभावकों को शिक्षा के बारे में स्पष्ट करना और उनके साथ सहयोग करना चुनौतीपूर्ण हो सकता है। प्रशिक्षणार्थी संस्था, अभिभावकों और समुदाय में समायोजन नहीं कर पाता और वह तनाव में आ जाता है।

शैक्षणिक नीतियों में बदलाव :

नई नीतियाँ और कार्यक्रम शिक्षक और छात्रों दोनों को प्रभावित करते हैं और उन्हें समायोजित करने में समय लग सकता है।

सीमित समयः

शिक्षकों को बच्चों को सिखाने के साथ-साथ कक्षा प्रबंधन और ग्रेडिंग में भी समय बिताना होता है।

उच्च अपेक्षाएँ :

लोगों को अक्सर लगता है कि शिक्षण एक आसान काम है, लेकिन यह वास्तव में बहुत मुश्किल काम है.। भावी षिक्षक होने के कारण लोगों की अपेक्षाएँ उच्च होती हैं।

शैक्षिक असमानताएँ :

कुछ छात्रों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्राप्त करने में संघर्ष करना पड़ता है.। शैक्षणिक क्षेत्र में लगातार बदलाव हो रहे हैं, इसलिए शिक्षकों को नई जानकारी और शिक्षण विधियों के साथ अद्यतन रहना पड़ता है...

प्रायोगिक अनुभव :

अध्यापक शिक्षा में प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले व्यक्तियों को प्रायोगिक अनुभव प्राप्त करने के लिए कक्षाओं में जाना पड़ सकता है, जहां उन्हें अपने ज्ञान को व्यावहारिक रूप से लागू करना होता है।

भावनात्मक चुनौतियाँ :

अध्यापक शिक्षा में प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले व्यक्तियों को भावनात्मक चुनौतियों का सामना करना पड़ सकता है, जैसे कि छात्रों के साथ संबंध बनाने में कठिनाई या छात्रों के व्यवहार को संभालने में चुनौती।

समय प्रबंधन :

अध्यापक शिक्षा में प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले व्यक्तियों को अपने समय को प्रभावी ढंग से प्रबंधित करना होता है, ताकि वे अपने पाठ्यक्रम की मांगों को पूरा कर सकें और अपने व्यक्तिगत जीवन को भी संतुलित रख सकें।

निरंतर सीखने की आवश्यकता :

अध्यापक शिक्षा में प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले व्यक्तियों को निरंतर सीखने की आवश्यकता होती है, ताकि वे अपने ज्ञान और कौशल को अद्यतन रख सकें और छात्रों को प्रभावी ढंग से सिखा सकें।

यहाँ हम देखेंगे कि प्रषिक्षणार्थियों में चुनौती के प्रति स्वीकार्यता अस्वीकार्यता दोनों का उनके व्यक्तित्व पर क्या प्रभाव पड़ता है-

चुनौती अस्वीकार्यता का व्यक्तित्व पर प्रभाव :

यदि शिक्षकों में चुनौती स्वीकार्यता नहीं होती है, तो उसका प्रभाव शिक्षक, शिक्षा प्रक्रिया और छात्रों पर नकारात्मक रूप से पड़ता है। नीचे इसके प्रमुख प्रभाव दिए गए हैं:

1. समस्याओं से बचाव और सुधार की कमी

शिक्षक अपनी कमियों या कक्षा में आने वाली समस्याओं को स्वीकार नहीं करते, जिससे उन समस्याओं का समाधान नहीं हो पाता और स्थिति बिगड़ती रहती है।

2. व्यावसायिक विकास में बाधा

चुनौतियों को स्वीकार न करने से शिक्षक अपने कौशल और ज्ञान में सुधार नहीं कर पाते, जिससे उनका व्यावसायिक विकास रुक जाता है।

3. शिक्षण प्रभावशीलता में कमी

जब शिक्षक नई तकनीकों या शिक्षण विधियों को अपनाने से बचते हैं, तो उनकी शिक्षण प्रभावशीलता कम हो जाती है और छात्रों को भी कम लाभ मिलता है।

4. कक्षा प्रबंधन में कठिनाई

समस्याओं को स्वीकार न करने से कक्षा प्रबंधन में भी दिक्कतें आती हैं, जिससे छात्रों के व्यवहार और अनुशासन पर भी नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

5. सहयोग और सीखने की संस्कृति का अभाव

जब शिक्षक अपनी चुनौतियों को साझा नहीं करते, तो विद्यालय में सहयोग और सीखने की संस्कृति विकसित नहीं हो पाती और नवाचार की संभावना कम हो जाती है।

6. छात्रों के सीखने की गुणवत्ता पर असर

शिक्षक के कौशल और प्रयास में सुधार न होने से छात्रों की सीखने की गुणवत्ता भी प्रभावित होती है।

इस प्रकार, चुनौती स्वीकार्यता न होने पर शिक्षक, छात्र और पूरी शिक्षा व्यवस्था नकारात्मक रूप से प्रभावित होती है।

चुनौती स्वीकार्यता का व्यक्तित्व पर प्रभाव :

1. आत्मविश्वास में वृद्धि :

जो विद्यार्थी शिक्षक चुनौतियों को स्वीकार करते हैं, उनमें निर्णय लेने की क्षमता एवं आत्मबल बढ़ता है।

2. अनुकूलनशीलता का विकास :

समस्याओं से जूझते हुए वे विभिन्न परिस्थितियों में कार्य करना सीखते हैं।

3. सकारात्मक सोच :

समस्या के समाधान की दिशा में प्रयास करने से उनमें आशावादी दृष्टिकोण विकसित होता है।

4. नेतृत्व क्षमता :

चुनौतीपूर्ण परिस्थितियों में सक्रिय रहकर वे टीम वर्क व नेतृत्व कौशल प्राप्त करते हैं।

5. तनाव प्रबंधन में दक्षता :

चुनौती स्वीकार करना उन्हें मानसिक रूप से अधिक सशक्त बनाता है।

निष्कर्ष :

विद्यार्थी शिक्षकों के व्यक्तित्व विकास में चुनौती स्वीकार्यता की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। यह उन्हें न केवल एक बेहतर शिक्षक बनाती है, बल्कि जीवन की अन्य परिस्थितियों में भी उनका मार्गदर्शन करती है। प्रशिक्षण संस्थानों को चाहिये कि वे विद्यार्थियों को चुनौतियों का सामना करने हेतु प्रेरित करें, ताकि उनका व्यक्तित्व पूर्ण रूप से विकसित हो सके। इसके लिए निम्न कार्य किये जा सकते हैं–

- कक्षा प्रबंधन तकनीकों का उपयोग करें। कक्षा में अनुशासन बनाए रखने और छात्रों को व्यस्त रखने के लिए प्रभावी कक्षा प्रबंधन तकनीकों का उपयोग करें।
- छात्रों को बेहतर तरीके से सिखाने के लिए विभेदित शिक्षण का उपयोग करें। हर छात्र की सीखने की शैली के अनुसार शिक्षण सामग्री को अनुकूलित करें।
- शैक्षणिक संसाधनों का सर्वोत्तम संभव उपयोग करें व उपलब्ध संसाधनों का उपयोग करें, और नए संसाधनों की तलाश करें।
- अभिभावकों और समुदाय के साथ सक्रिय रूप से संवाद करें, अभिभावकों और समुदाय को शिक्षा में शामिल होने के लिए प्रोत्साहित करें।
- अपने आप को अद्यतन रखें, नई शिक्षण विधियों और प्रौद्योगिकी के साथ अद्यतन रहें।
- अपना ध्यान केंद्रित करें, शिक्षण के सकारात्मक पहलुओं पर ध्यान दें, और अपने काम में संतुष्टि प्राप्त करें।
- समस्या-आधारित शिक्षण को बढ़ावा देना
- जीवन कौशल एवं मानसिक सुदृढ़ता की कार्यशालाएँ
- प्रशिक्षकों द्वारा प्रेरणादायी फीडबैक
- प्रेरक उदाहरणों की प्रस्तुति

सिफारिशें :

1. शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम में व्यक्तित्व विकास कार्यशालाओं का समावेश।
2. काउंसलिंग एवं मार्गदर्शन सत्रों की नियमित व्यवस्था।
.3 सहकर्मी सहयोग पर आधारित गतिविधियाँ बढ़ाना।
4. चुनौतियों को अवसर में बदलने की मानसिकता विकसित करने हेतु प्रेरक सत्र।
5. अध्ययन की आवश्यकता

आज के समय में जब शिक्षा व्यवस्था में निरंतर परिवर्तन हो रहे हैं, ऐसे में शिक्षकों के व्यक्तित्व में अनुकूलनशीलता और चुनौती स्वीकार्यता अत्यंत आवश्यक है। विद्यार्थी शिक्षकों के व्यक्तित्व की ऐसी विशेषताओं को समझना और विकसित करना आवश्यक है, ताकि वे भविष्य के लिए तैयार शिक्षक बन सकें।

संदर्भ

1. Sharma, R. A. (2005). Psychology of Learning and Development.
2. NCTE (2014). Teacher Education Curriculum Framework.
3. Bandura, A. (1986). Social Foundations of Thought and Action. Prentice-Hall.
4. Sharma, R. A. (2005). Psychology of Learning and Development. R. Lall Book Depot.
5. NCTE. (2014). National Curriculum Framework for Teacher Education.
6. Eysenck, H. J. (1967). The Biological Basis of Personality.
7. Chauhan, S. S. (2003). Advanced Educational Psychology.
8. https://www.google.com/search?q=student+teacher+ki+bchunautiyan&rlz=1C
9. https://www.rethinked.com/resources/teachers-not-prepared-increasing-challenging-behaviors/
10. https://www.teachersoftomorrow.org/blog/insights/challenges-of-becoming-a-teacher/
11. https://hi.wikipedia.org/wiki/%
12. https://wwwideasforindiain/tag&search/challenges&in&accss&to&secondary&educati -in-india-hindi-html
13. https://wwwjansattacom/politics/jansatta-editorial-page-article-and-comment-on-new-curriculum-and-challenges/1696176/
14. https://wwwsanskritiiascom/hindi/loksabha&rajyasabha&tv&discussions/primary-education-challenges-and-opportunities

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

हरियाणा की लोक वाणी में गाँधी : एक अध्ययन

डॉ. रितु पूनिया
सहायक आचार्या
इतिहास एवं भारतीय संस्कृति विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर
ई-मेलः ritu_sparkle@yahoo.in

डॉ. रश्मि गुर्जर
सहायक आचार्या
इतिहास एवं भारतीय संस्कृति विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर
ई-मेलः rashmigurjar23@gmail.com

शोध सारांश

हरियाणा की लोक वाणी में गाँधी विषयक यह शोध पत्र गाँधी जी के विचारों, आदर्शों और स्वतंत्रता संग्राम में उनके योगदान को हरियाणा की लोक संस्कृति के संदर्भ में प्रस्तुत करने का प्रयास है। इन लोक गीतों ने ग्रामीण अंचलों में गाँधी जी के राजनैतिक आंदोलनों और समाज सुधार कार्यक्रमों में पहुँचाने का प्रयास किया। हरियाणा की लोक परम्परा ने गाँधी जी को नायक से अधिक एक आत्मीय चरित्र के रूप में स्वीकार किया और उन्हें अपनी सांस्कृतिक धारा में सम्मिलित कर लिया। लोकगीत गाँधी जी के विचारों के प्रचार-प्रसार के प्रभावशाली माध्यम बनें।

मुख्य शब्द : लोक, सत्य, अहिंसा, गाँधी, लोक चेतना, सामाजिक सुधार।

लोक गीत भारतीय लोक संस्कृति का अह्म हिस्सा हैं। वे गीत जो लोक मानस की अभिव्यक्ति है, लोक गीत कहलाते हैं। ये वे पारंपरिक गीत हैं जो सदियों से मौखिक परंपरा के जरिए एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित होते आ रहे हैं। लोकगीत का अर्थ है - लोक में प्रचलित, लोक रचित और लोक विषयक गीत लोक मानव समाज का वह वर्ग है जो अभिजात्य संस्कार, शास्त्रीयता और पांडित्य के अहंकार से रहित है। लोक गीत इतिहास लेखन की मौखिक परंपरा का प्रतिनिधित्व करते हैं। भारत के प्रत्येक अंचल के अपने गीत हैं जो लोक बोलियों के माध्यम से वहाँ की संस्कृति को सहेजे हैं। हरियाणवी लोकगीत भी यहाँ की समृद्ध लोक संस्कृति की पहचान है जो यहाँ के रीति-रिवाज़, बोली, त्यौहार, वीरता तथा प्रेम आदि अनेक भावों की अभिव्यक्ति है। भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के बड़े काल का प्रतिनिधित्व करने वाले महात्मा गाँधी का उल्लेख हरियाणवी लोकगीतों में एक जन नायक के रूप में हुआ है। स्वतंत्रता संग्राम में उनके योगदान, सत्य और अहिंसा के सिद्धांत तथा उनके रचनात्मक कार्यक्रमों का उल्लेख लोक गीतों में देखने को मिलता है। ये लोकगीत आम जन में राष्ट्रीयता की भावना जागृत करने में अहम् भूमिका का निर्वाह करते हैं।[1]

जन-मानस पर गाँधीजी के प्रभाव की झलक प्रदेश के लोकगीतों में पूरी तरह देखने को मिलती है।[2] इनमें गाँधी जी को एक त्यागी, सत्यवादी और राष्ट्रपिता के रूप में दर्शाया गया है। उन्हें गाँव-गाँव घूमकर आज़ादी की अलख लगाने वाले नेता के रूप में देखा गया है। गाँधी जी के सभी राजनैतिक तथा समाज सुधार संबंधी, कार्यों को लोकगीतों के माध्यम से जनमानस तक पहुँचाने का प्रयास किया गया है। इन लोकगीतों की तुकबंदियों में सीधे सरल ढंग से बापू के विभिन्न कार्यों की विशद चर्चा हुई है।[3] ये गीत लोक भावनाओं के सरल, लेकिन प्रभावशाली माध्यम है, जिनमें गाँधी जी के जीवन, को लोक

भाषा में प्रस्तुत किया गया है। देशभक्ति संबंधी गीतों में गाँधी जी के अंग्रेजों को देश से भगाने, जेल जाने तथा स्वतंत्रता संग्राम के गाँधीवादी युग में उनके राज का उल्लेख किया गया है। गाँधीजी को लोक द्वारा बापू, राष्ट्रपिता आदि शब्दों से संबोधित कर उनके राष्ट्रव्यापी महत्व को दर्शाने का प्रयास किया गया है।

"गाँधी ने अंगरेज भजाया।
अर भारत का मान बचाया।।"

इन पंक्तियों के माध्यम से सरल भाषा में अंग्रेजों को भारत से भगाने पर मजबूर कर भारत को एक स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में सम्मान दिलाने में गाँधीजी के योगदान का उल्लेख है। इसके अतिरिक्त–

"देसी घी की भरी से कोल्ली।
गाँधी बाब्बू की जै बोल्ली।।"[4]
"भरी थाली यो चाँदी की।
जय बोलो महात्मा गाँधी की।।"

आदि लघु पंक्तियाँ लोक द्वारा गाँधी जी की जय जयकार किए जाने पर प्रकाश डालती है। हरियाणवी लोक गीतों में गाँधी जी के सत्य एवं अहिंसा के संदेश का भी वर्णन किया गया है।

"एक जलेबी तेल में।
गाँधी भेज्या जेल में।।
जेल का फाटक गिया टूट।
गाँधी आया फोरन छूट।।
सतागरह गाँधी ने चलाया।
देस म्हारा आज़ाद कराया।।"[5]

इस गीत में गाँधी जी द्वारा चलाए गए सत्याग्रह कार्यक्रम चलाने और देश को आजाद करवाने का उल्लेख मिलता है।

हरियाणवी लोक गीतों में गाँधी जी को सत्य का पुजारी और अहिंसा के मार्गदर्शक के रूप में दिखाया गया है।

"गाँधी था सत का मतवाला।
सत का था उसने परण पाला।
सत के बल पर अमरता पाई।
सांच ने आंच ना लागण पाई।।"[6]

उपरोक्त गीत में गाँधी जी की सत्य के प्रति आस्था और सिक प्रकार उन्होंने सत्य के बल पर अमरता प्राप्त की यह देखने को मिलता है। गाँधी जी के 'अहिंसा परमो धर्म' के सिद्धांत को भी लोकगीतों के माध्यम से जनमानस से साझा किया गया।

"अहिंसा परम धरम कहलाया।
तय तियाग का मारग दिखलाया।।"[7]

गाँधी जी द्वारा सादगीपूर्ण जीवन यापन के आदर्श के प्रति भी लोक में रूझान देखने को मिलता है।

गाँधीजी द्वारा चरखे व खादी के माध्यम से स्वदेशी का जो अभियान राष्ट्रीय आंदोलन के दौरान चलाया गया उसने चरखे को घर-घर में सम्मान के प्रतीक के रूप में स्थापित करवाया। कुछ समय पहले तक भी हरियाणा के प्रत्येक गाँव में स्त्रियों को सामूहिक रूप से चरखा कातते हुए देखा जा सकता था। सामूहिक कताई का ग्राम्य जीवन में विशेष महत्व था।[8]

देख कै नै गाँधी का चरखा।
अंगरेजां का था दिल धड़का।।"

गाँधी जी द्वारा धर्म तथा जाति के आधार पर समाज में भेदभाव को दूर करने का प्रयास किया। गाँधीजी के इन प्रयासों

को भी हरियाणवी लोकगीतों में समाहित कर भाईचारे व सद्भाव की भावना जन में संचारित करने का प्रयास लोकगीतों ने किया।

"देस के हो रहे थे बारां बाट
बणिया बाह्मण अर कोई जाट।
बाब्बू ने मिटाई छूटाछूत।
सब सैं भारत मां के पूत।"[9]

गाँधी जी का जन आंदोलन केवल स्वतंत्रता-प्राप्ति तक ही सीमित नहीं रहा। उन्होंने समाज में फैली ऊँच-नीच व अमीर-गरीब के भेद को भी पाटने का प्रयास किया। तत्कालीन समय में किसानों और मजदूरों के हक के लिए गाँधी जी द्वारा किए गए प्रयासों को भी हरियाणवी लोक गीतों में स्थान दिया गया।

"अमीर गरीब में पड़ी जो खाई।
गांधी बाब्बू नै कोन्या भाई।।
गरीब मजूरां का हक दिलाया।
अमीरां तै यूँ उपदेस सुनाया।।
धन नै साझा समझो भाई।
नहीं तो कहलाओगे कसाई।।"[10]

उपरोक्त पंक्तियों से स्पष्ट होता है कि जिस युग में संचार के साधन आसानी से उपलब्ध नहीं थे उस युग में जन-मानस तक गाँधीजी के कार्यक्रम पहुँचाने में लोक गीतों ने महती भूमिका अदा की। इन पंक्तियों में सरल शब्दों में गाँधीजी के ट्रस्टीशिप के सिद्धांत का उल्लेख देखने को मिलता है।

हरियाणवी लोक गीतों में गाँधीजी के कार्यक्रमों में जाने हेतु ग्रामीण महिलाओं के उत्साह को दर्शाने वाले मनोभाव भी सुंदरता के साथ प्रदर्शित किए गए हैं।

"गंगा नीर जणो सोभा पा रिहा,
सोने के कलसे में।
मैं बी तेरे संग चलूंगी,
गाँधी के जलसे में।।"[11]

इन गीतों के माध्यम से स्त्रियाँ घर के पुरुषों को गाँधीजी का साथ देने तथा देश की आज़ादी के लिए जेल जाने के लिए भी प्रोत्साहित करती प्रतीत होती हैं।

"गाँधी बाब्बू का आया जमाणा,
देव पियारे जेल तम जाणा।"[12]

गाँधी जी के स्वतंत्रता आंदोलन में योगदान को चित्रित करने के साथ-साथ हरियाणवी लोकगीतों में नाथूराम गोडसे द्वारा गाँधीजी को गोली मारने के घटनाक्रम के विरूद्ध रोष भी देखने को मिलता है। लोकगीतों के माध्यम से हरियाणा अंचल में जन-मानस गाँधीजी की मृत्यु को किस प्रकार अपूर्णीय क्षति मानकर दुःखी है, दर्शाने का प्रयास किया गया है।

"भारत के चन्दरमा छिपग्ये, रहे विलख तारे,
एक अज्ञान मराठा था जिन गाँधी जी मारे।"[13]

साथ ही बापू की हत्या की खबर सुन किस प्रकार नर-नारी स्वयं को असहाय पा रहे हैं, इस बात का उल्लेख भी हरियाणी लोक गीतों में देखने को मिलता है।

"भारत को आजाद बणा के सुर्ग के बीच डिग दिया,
एक अज्ञानी भाई हम नै बिना पिता के करग्या।।"[14]

नाथू राम गोडसे को उसके कृत्य के लिए कोसने वाले गीत भी हरियाणवी लोक साहित्य में देखने को मिलते हैं।

"नत्थू नाश करणिये तू नै हिंद के सूर्ज छिपाए,
भारत के जितने नेता थे एक दम घबड़ाए।"[15]
नत्थू राम! तन्नै सरम ना आइ, बाब्बू कै गोली मारी।
तेरे करमां नै रोण लगारी, बैठी योह् दुनिया सारी।।
काच्चा कुनबा छोड़ के बाब्बू, सुरग लोक में सोगे।
भारत के सब नर-नारी सअब, बिना बाप के होंगे।।[16]

निष्कर्ष

इस प्रकार हरियाणा के लोक गीतों में महात्मा गाँधी की छवि एक नैतिक, राजनीतिक और सामाजिक आदर्श के रूप में उभरती है। इन गीतों में गाँधी जी को सत्य, अहिंसा, त्याग और स्वदेशी आंदोलन के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया गया है। ये गीत न केवल गाँधी जी के विचारों को जनमानस तक पहुँचाने का माध्यम बने, वरन् ग्रामीण जनता को स्वतंत्रता संग्राम से जोड़ने का सशक्त साधन भी बने। इन गीतों ने हरियाणा की ग्रामीण जनता में देशभक्ति, सामाजिक समानता और जागरूकता का भाव जगाया। गाँधीजी को 'बापू', 'गाँधी बाबा' जैसे आत्मीय संबोधनों से पुकारा गया, जिससे उनका व्यक्तित्व गाँव-गाँव में अपनेपन के साथ पहुँचा। इन लोकगीतों में गाँधीजी केवल ऐतिहासिक पुरुष के रूप में नहीं, बल्कि एक जीवंत आदर्श के रूप में चित्रित किया गया है। इनके माध्यम से लोक में गाँधी जन-नायक, आशा के प्रतीक और राष्ट्रपिता के रूप में अमर हो गए हैं।

संदर्भ सूची

1. सत्येन्द्र, लोक साहित्य विज्ञान, राजस्थानी ग्रंथागार, जोधपुर, 2017, पृ. 315
2. कादयान, ओम प्रकाश, हरियाणा के लोक गीत, भाग-2, हरियाणा ग्रंथ अकादमी, पंचकूला, 2012, पृ. 272.
3. वही, पृ.273.
4. शारदा, साधुराम (संपादक), हरियाणा के लोक गीत, हरियाणा ग्रंथ अकादमी, पंचकूला, 2003, पृ. 296.
5. वही, पृ.297.
6. वही, पृ.298.
7. वही, पृ.300.
8. वही।
9. कादयान, ओम प्रकाश, पूर्वोक्त, पृ.351.
10. शारदा, साधुराम, पूर्वोक्त, पृ.299.
11. वही, पृ. 302.
12. वही.
13. यादव, शंकर लाल, हरियाणा प्रदेश का लोकसाहित्य, हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद, 2000, पृ. 260.
14. वही, पृ. 261.
15. वही.
16. शारदा, साधुरान, पूर्वोक्त, पृ. 304.

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

राजस्थान में पंचायतीराज एवं ई व ईजी गवर्नेंस : चुनौतियां और समाधान

अशोक कुमार मीणा
सह आचार्य-राजनीति विज्ञान विभाग,
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कालाडेरा (जयपुर)

डॉ. राजेश कुमार शर्मा
सह आचार्य-राजनीति विज्ञान विभाग,
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

सारांश : यह शोध पत्र राजस्थान में पंचायती राज और ई-गवर्नेंस के एकीकरण की प्रक्रिया पर प्रकाश डालता है, जो ग्रामीण क्षेत्रों में शासन को सशक्त और पारदर्शी बनाने का एक महत्वपूर्ण प्रयास है। पंचायती राज की स्थापना से लेकर ई-गवर्नेंस की आधुनिक पहलों तक, यह एकीकरण ग्रामीण विकास में क्रांतिकारी बदलाव लाने की क्षमता रखता है। हालांकि, इस प्रक्रिया में कई बाधाएं सामने आती हैं, जिनमें तकनीकी सीमाएं, प्रशासनिक चुनौतियां, सामाजिक असमानताएं, राजनीतिक जटिलताएं, और न्यायिक विलंब शामिल हैं। शोध में इन समस्याओं के समाधान के लिए नवाचारी सुझाव प्रस्तुत किए गए हैं, जैसे डिजिटल साक्षरता को बढ़ावा देना, बुनियादी ढांचे को मजबूत करना, और सामुदायिक भागीदारी को प्रोत्साहित करना। अंत में, भविष्य की संभावनाओं पर विचार करते हुए, यह शोध राजस्थान को एक आदर्श मॉडल के रूप में प्रस्तुत करता है, जो उन्नत प्रौद्योगिकी और समावेशी नीतियों के जरिए ग्रामीण सशक्तीकरण की दिशा में अग्रसर हो सकता है।

मुख्य शब्द : पंचायती राज, ई-गवर्नेंस, राजस्थान, ग्रामीण शासन, डिजिटल समावेशन, सामाजिक समावेशन।

परिचय : पंचायती राज भारत में ग्रामीण स्वशासन की एक प्राचीन और गौरवशाली परंपरा है, जो समय के साथ विकसित होकर आधुनिक शासन प्रणाली का एक अभिन्न अंग बन गया है। यह व्यवस्था ग्रामीण क्षेत्रों में लोकतंत्र की जड़ों को मजबूत करती है और स्थानीय लोगों को अपने विकास और निर्णय लेने की प्रक्रिया में भागीदार बनाती है। पंचायती राज का शाब्दिक अर्थ है "पांच व्यक्तियों का शासन," जो परंपरागत रूप से गांवों में पांच सम्मानित और बुद्धिमान बुजुर्गों की सभा के रूप में कार्य करता था। यह प्रणाली भारतीय संस्कृति और सामाजिक ढांचे का एक महत्वपूर्ण हिस्सा रही है, जिसका उल्लेख वेदिक काल (लगभग 1700 ईसा पूर्व) से मिलता है।

वेदिक साहित्य में "ग्रामिणी" जैसे गांव के प्रमुख अधिकारियों का उल्लेख मिलता है, जो स्थानीय प्रशासन का काम संभालते थे। मौर्य और गुप्त काल में भी ग्राम सभाएं और पंचायतें विवादों के निपटारे और सामुदायिक निर्णयों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती थीं। हालांकि, मुगल शासन और ब्रिटिश काल में इस प्रणाली का ह्रास हुआ, क्योंकि केंद्रीकरण और औपनिवेशिक प्रशासन ने स्थानीय स्वशासन को कमजोर किया। स्वतंत्रता के बाद, महात्मा गांधी की प्रेरणा से पंचायती राज को पुनर्जीवित करने का प्रयास शुरू हुआ। 1957 में बलवंत राय मेहता समिति की सिफारिशों ने इस दिशा में पहला कदम उठाया, जिसने त्रिस्तरीय पंचायती राज प्रणाली की नींव रखी। इसके बाद 2 अक्टूबर 1959 को राजस्थान के नागौर में जवाहरलाल नेहरू ने पंचायती राज की औपचारिक शुरुआत की।

पंचायती राज भारत में ग्रामीण स्वशासन की आधारशिला है, जो ग्रामीण समुदायों को सशक्त बनाने और सामाजिक-आर्थिक

विकास को बढ़ावा देने का कार्य करती है। दूसरी ओर, ई-गवर्नेस और ईजी गवर्नेस सूचना और संचार प्रौद्योगिकी का उपयोग करके शासन को पारदर्शी, जवाबदेह, और नागरिक-केंद्रित बनाने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम हैं।

सुशासन का अर्थ एक ऐसे उत्तरदायी, पारदर्शी और कुशल राजनीतिक ढांचे से है, जो सहमति आधारित निर्णय निर्माण और समानता पर आधारित हो। सुशासन केवल सरकार तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें गैर-सरकारी संगठन, अनुसंधान संस्थान, वित्तीय संस्थान, बहुराष्ट्रीय कंपनियां और नागरिक समाज जैसे विभिन्न पक्ष शामिल हैं। सुशासन की मूल भावना यह है कि शासन प्रक्रिया जनता के हित में हो, जिसमें पारदर्शिता, जवाबदेही और विधि का शासन सुनिश्चित हो। प्राचीन भारतीय ग्रंथों जैसे रामायण, महाभारत और कौटिल्य के अर्थशास्त्र में सुशासन की अवधारणा का उल्लेख मिलता है, जहां राजा और प्रजा के बीच पिता-पुत्र जैसे संबंधों को महत्व दिया गया था। इस प्रकार सुशासन की जड़ें भारतीय संस्कृति में गहरी हैं, और आधुनिक संदर्भ में इसे ई-गवर्नस के माध्यम से नई दिशा मिली है।

ई-गवर्नस, जो इलेक्ट्रॉनिक गवर्नस का संक्षिप्त रूप है, सूचना प्रौद्योगिकी, कम्प्यूटर, इलेक्ट्रॉनिक्स और दूरसंचार जैसे आधुनिक तकनीकी साधनों के उपयोग से शासन प्रक्रियाओं को सरल, पारदर्शी और प्रभावी बनाने का एक साधन है। ई-गवर्नस का मुख्य उद्देश्य सरकार और नागरिकों के बीच दूरी को कम करना, सेवाओं की डिलीवरी को तेज और सुगम बनाना, साथ ही भ्रष्टाचार और लालफीताशाही को नियंत्रित करना है। विश्व बैंक और अन्य अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं ने 1989 के बाद से ई-गवर्नस को विकासशील देशों के लिए एक महत्वपूर्ण उपकरण के रूप में पहचाना, जिसका प्रभाव 1992 की विश्व बैंक रिपोर्ट में देखा गया। भारत में स्वतंत्रता के बाद से इस दिशा में प्रयास किए गए, और 2000 के दशक में सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम और राष्ट्रीय ई-गवर्नस योजना (2006) ने इसे गति प्रदान की।

ई-गवर्नस की विशेषताओं में सहभागिता, आम सहमति, जवाबदेही, पारदर्शिता, अनुक्रियाशीलता, प्रभावशीलता और विधि का शासन शामिल हैं। इन विशेषताओं ने शासन को जन-केंद्रित बनाया है, जहां नागरिक अपनी समस्याओं को ऑनलाइन शिकायत निवारण, ई-जनमत संग्रह और अन्य डिजिटल माध्यमों के जरिए सरकार तक पहुंचा सकते हैं। उदाहरण के लिए, उमंग ऐप और माईगव पोर्टल ने नागरिकों को एकल मंच पर विभिन्न सरकारी सेवाओं का लाभ उठाने की सुविधा प्रदान की है। इसके अतिरिक्त, आधार जैसी पहल ने डिजिटल पहचान और सीधे लाभ हस्तांतरण (DBT) के माध्यम से पारदर्शिता और दक्षता में क्रांतिकारी बदलाव लाया है।

भारतीय संदर्भ में ई-गवर्नस की प्रासंगिकता और भी अधिक है, क्योंकि देश की बड़ी आबादी ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है, जहां जागरूकता और शैक्षिक स्तर कम है। डिजिटल इंडिया और ई-गवर्नस ने इन क्षेत्रों में सूचनाओं के संप्रेषण को तेज किया है। मोबाइल गवर्नस, जो ई-गवर्नस का एक हिस्सा है, स्मार्टफोन और इंटरनेट की बढ़ती पहुंच के कारण ग्रामीण भारत तक सरकारी सेवाओं को पहुंचाने में सफल रहा है। उदाहरण के लिए, आरोग्य सेतु, डिजिलॉकर और पीएम किसान जैसी पहलें ने ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में प्रभावी परिणाम दिखाए हैं। इसके अलावा, राष्ट्रीय ऑप्टिकल फाइबर नेटवर्क और जियो जैसे निजी उपक्रमों ने डिजिटल कनेक्टिविटी को बढ़ावा दिया है, जिससे ई-गवर्नस की पहुंच व्यापक हुई है।

राजस्थान में ई-मित्र और राजकाज जैसी ई-गवर्नेस पहल ने स्थानीय शासन को डिजिटल बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। फिर भी, पंचायती राज और ई व ईजी गवर्नेस के एकीकरण में कई चुनौतियां बाधक हैं, जिनकी विवेचना निम्न बिंदुओं के रूप में की गई है-

ग्रामीण क्षेत्रों में डिजिटल बुनियादी ढांचे की कमी

ग्रामीण राजस्थान में डिजिटल बुनियादी ढांचे की कमी ई व ईजी गवर्नेस के कार्यान्वयन में सबसे बड़ी बाधा है। डिजिटल बुनियादी ढांचे में विश्वसनीय इंटरनेट कनेक्टिविटी, नियमित बिजली आपूर्ति, और टेलीकॉम नेटवर्क शामिल हैं, जो ग्रामीण क्षेत्रों में अक्सर अनुपस्थित या अपर्याप्त हैं।

डिजिटल साक्षरता का अभाव

डिजिटल साक्षरता का अभाव राजस्थान में ई-गवर्नेस के प्रभावी कार्यान्वयन में एक प्रमुख बाधा है। डिजिटल साक्षरता से तात्पर्य कंप्यूटर, स्मार्टफोन, इंटरनेट, और डिजिटल अनुप्रयोगों के उपयोग की बुनियादी समझ और कौशल से है। पंचायती राज संस्थाओं के प्रतिनिधि, जैसे सरपंच और पंच, जो स्थानीय स्तर पर ई-गवर्नेस पहल लागू करने के लिए जिम्मेदार हैं, अक्सर डिजिटल उपकरणों का उपयोग करने में असमर्थ होते हैं।

महिलाओं में डिजिटल साक्षरता की कमी विशेष रूप से चिंताजनक है। 73वें संवैधानिक संशोधन ने राजस्थान में पंचायतों में महिलाओं के लिए एक तिहाई आरक्षण सुनिश्चित किया है, लेकिन कई महिला सरपंच डिजिटल उपकरणों के उपयोग में असमर्थ हैं। सामाजिक बाधाएं, जैसे परिवारों द्वारा महिलाओं को तकनीकी उपकरणों का उपयोग करने से रोकना और 'सरपंच पति' की प्रथा, जहां पुरुष रिश्तेदार महिला सरपंच की ओर से निर्णय लेते हैं, डिजिटल साक्षरता की कमी के कारण और बढ़ जाती है।

उपकरणों और संसाधनों की अपर्याप्तता

ग्रामीण पंचायतों में डिजिटल उपकरणों, जैसे कंप्यूटर, प्रिंटर, और स्मार्टफोन, की कमी एक और प्रमुख तकनीकी चुनौती है। इसके अलावा पंचायतों को डिजिटल उपकरणों की खरीद और रखरखाव के लिए पर्याप्त वित्तीय संसाधन नहीं दिए जाते है।

इस प्रकार राजस्थान में डिजिटल बुनियादी ढांचे की कमी, डिजिटल साक्षरता का अभाव, और उपकरणों व संसाधनों की अपर्याप्तता पंचायती राज और ई-गवर्नेस के एकीकरण में प्रमुख तकनीकी चुनौतियां हैं। ये चुनौतियां राजस्थान की भौगोलिक, सामाजिक, और आर्थिक वास्तविकताओं से उपजती हैं। डिजिटल भारत, भारतनेट, और ई-मित्र जैसे प्रयास इन समस्याओं को हल करने की दिशा में महत्वपूर्ण हैं, लेकिन उनकी गति और प्रभावशीलता को बढ़ाने की आवश्यकता है।

नौकरशाही का प्रतिरोध और तकनीकी परिवर्तनों के प्रति अनिच्छा

राजस्थान में नौकरशाही का प्रतिरोध और तकनीकी परिवर्तनों के प्रति अनिच्छा पंचायतीराज में ई व ईजी गवर्नेस को बेहतर रूप से लागू करने में एक गंभीर बाधा है। जिला और ब्लॉक स्तर के अधिकारी अक्सर डिजिटल प्रणालियों को अपनाने में हिचकते हैं, क्योंकि वे इन्हें जटिल और अपने पारंपरिक कार्यप्रणाली के लिए खतरा मानते हैं। इस प्रतिरोध के पीछे कई कारण हैं। पहला, नौकरशाही कर्मचारियों, विशेष रूप से वरिष्ठ कर्मचारियों को डिजिटल उपकरणों के उपयोग का पर्याप्त प्रशिक्षण नहीं मिलता।

केंद्रीकरण बनाम विकेंद्रीकरण का संघर्ष

केंद्रीकरण और विकेंद्रीकरण के बीच का संघर्ष राजस्थान में पंचायती राज में ई व ईजी गवर्नेस को लागू करने में एक महत्वपूर्ण नीतिगत बाधा है। 73वें संवैधानिक संशोधन ने पंचायती राज संस्थाओं को स्वायत्तता प्रदान करने का लक्ष्य रखा था, लेकिन केंद्र और राज्य सरकारों के अत्यधिक नियंत्रण ने इस स्वायत्तता को सीमित कर दिया है।

अपर्याप्त वित्तीय संसाधन और बजट की कमी

अपर्याप्त वित्तीय संसाधन और बजट की कमी राजस्थान में पंचायती राज और ई व ईजी गवर्नेस को बेहतर रूप से लागू करने में एक गंभीर चुनौती है। पंचायती राज संस्थाओं को डिजिटल उपकरणों की खरीद, रखरखाव, और कर्मचारियों के प्रशिक्षण के लिए पर्याप्त धन नहीं मिलता। इस कमी के कारण, कई पंचायतें ई-मित्र और डिजिटल पंचायत पोर्टल जैसे प्लेटफार्मों का उपयोग करने में असमर्थ है।

सामाजिक और सांस्कृतिक चुनौतियां

राजस्थान के ग्रामीण समाज में सामाजिक असमानता, जिसमें जाति, लिंग, और आर्थिक असमानता शामिल हैं, पंचायती राज और ई व ईजी गवर्नेंस को बेहतर रूप से लागू करने में एक बड़ी बाधा है। ग्रामीण क्षेत्रों में जाति-आधारित भेदभाव अभी भी प्रचलित है, जिसके कारण निचली जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लोग डिजिटल सेवाओं तक पहुंचने में पिछड़ जाते हैं। लिंग आधारित असमानता भी एक गंभीर समस्या है। 73वें संवैधानिक संशोधन ने पंचायतों में महिलाओं के लिए एक तिहाई आरक्षण सुनिश्चित किया, लेकिन सामाजिक रूढ़ियों के कारण कई महिला सरपंच अपने कर्तव्यों का निर्वहन प्रभावी ढंग से नहीं कर पातीं है। आर्थिक असमानता भी डिजिटल सेवाओं तक पहुंच को सीमित करती है। यह आर्थिक असमानता ई-गवर्नेंस सेवाओं, जैसे डिजिटल भुगतान और ऑनलाइन आवेदन, तक पहुंच में बाधक है।

पारंपरिक मानसिकता और डिजिटल प्रणालियों के प्रति अविश्वास

राजस्थान के ग्रामीण समुदायों में पारंपरिक मानसिकता और डिजिटल प्रणालियों के प्रति अविश्वास ई-गवर्नेंस के कार्यान्वयन में एक महत्वपूर्ण बाधा है। ग्रामीण लोग अक्सर डिजिटल प्रणालियों को जटिल और असुरक्षित मानते हैं, जिसके कारण वे पारंपरिक तरीकों, जैसे कागजी दस्तावेज और व्यक्तिगत मुलाकात, को प्राथमिकता देते हैं। पारंपरिक मानसिकता भी इस अविश्वास को बढ़ाती है। राजस्थान के ग्रामीण समाज में, विशेष रूप से बुजुर्ग और कम शिक्षित लोग, डिजिटल प्रणालियों को अपनाने में हिचकते हैं, क्योंकि वे नई तकनीक को अपनी दैनिक जीवनशैली के लिए अनुपयुक्त मानते हैं।

राजनीतिक हस्तक्षेप और पंचायतों की स्वायत्तता पर प्रभाव

राजनीतिक हस्तक्षेप राजस्थान में पंचायती राज और ई-गवर्नेंस के एकीकरण में एक अन्य प्रमुख चुनौती है, जो पंचायतों की स्वायत्तता को सीमित करता है। 73वें संवैधानिक संशोधन ने पंचायती राज संस्थाओं को नीति निर्माण और योजनाओं के कार्यान्वयन में स्वायत्तता प्रदान करने का लक्ष्य रखा था, लेकिन केंद्र और राज्य सरकारों का अत्यधिक हस्तक्षेप इस लक्ष्य को कमजोर करता है। यह हस्तक्षेप ई-गवर्नेंस की प्रभावशीलता को भी प्रभावित करता है, क्योंकि डिजिटल प्रणालियों का डिजाइन और कार्यान्वयन अक्सर केंद्रीकृत स्तर पर तय होता है, जिसमें स्थानीय पंचायतों की राय को नजरअंदाज किया जाता है। इसके अलावा, राजनीतिक हस्तक्षेप के कारण पंचायतों और जिला प्रशासन के बीच समन्वय की कमी देखी जाती है।

राजनीतिक हस्तक्षेप का एक अन्य रूप राज्य सरकारों द्वारा पंचायतों के लिए केंद्रीकृत नीतियां लागू करना है। उदाहरण के लिए, राजस्थान में मनरेगा और प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना के तहत योजनाओं का चयन और कार्यान्वयन जिला या राज्य स्तर पर तय होता है, जिसमें पंचायतों को केवल कार्यान्वयन की जिम्मेदारी दी जाती है। यह हस्तक्षेप ई-गवर्नेंस की प्रभावशीलता को कम करता है, क्योंकि डिजिटल प्रणालियां स्थानीय जरूरतों के अनुरूप नहीं हो पातीं। इसके अलावा, स्थानीय स्तर पर राजनीतिक दबाव भी न केवल पंचायतों की स्वायत्तता को कम करता है, बल्कि ई-गवर्नेंस की पारदर्शिता और जवाबदेही को भी प्रभावित करता है।

भ्रष्टाचार और पारदर्शिता की कमी

राजस्थान में पंचायती राज संस्थाओं द्वारा योजनाओं के कार्यान्वयन में भ्रष्टाचार एक गंभीर चुनौती है, जो ई-गवर्नेंस की पारदर्शिता और जवाबदेही को कमजोर करता है। ग्रामीण विकास योजनाएं, जैसे राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना (मनरेगा), प्रधानमंत्री आवास योजना, और स्वच्छ भारत मिशन, पंचायतों के माध्यम से लागू की जाती हैं, लेकिन इनमें भ्रष्टाचार के कई मामले सामने आए हैं। भ्रष्टाचार का एक प्रमुख कारण पंचायतों में पारदर्शी निगरानी तंत्र की कमी है। हालांकि डिजिटल पंचायत पोर्टल और ई-मित्र जैसे उपकरण पारदर्शिता बढ़ाने के लिए बनाए गए हैं, लेकिन इनका उपयोग सीमित है। इसके अलावा, भ्रष्टाचार को बढ़ावा देने में स्थानीय स्तर पर नौकरशाही और पंचायत प्रतिनिधियों की सांठगांठ भी शामिल है। यह

भ्रष्टाचार ई-गवर्नेंस की प्रभावशीलता को कम करता है, क्योंकि डिजिटल प्रणालियां केवल तभी प्रभावी हो सकती हैं, जब उनका उपयोग पारदर्शी और ईमानदार तरीके से किया जाए।

समाधान और सुझाव

डिजिटल बुनियादी ढांचे का विकास

राजस्थान में पंचायती राज और ई-गवर्नेंस के एकीकरण को बढ़ावा देने के लिए डिजिटल बुनियादी ढांचे का विकास अत्यंत आवश्यक है। ग्रामीण क्षेत्रों में विश्वसनीय इंटरनेट कनेक्टिविटी और बिजली आपूर्ति की कमी डिजिटल सेवाओं की पहुंच को सीमित करती है। डिजिटल भारत पहल के तहत भारतनेट परियोजना ने ग्रामीण पंचायतों को ब्रॉडबैंड से जोड़ने का लक्ष्य रखा है। बिजली आपूर्ति की नियमितता भी महत्वपूर्ण है। इस समस्या के समाधान के लिए, सौर ऊर्जा आधारित माइक्रो-ग्रिड स्थापित किए जा सकते हैं। इसके अलावा, टेलीकॉम बुनियादी ढांचे को मजबूत करने के लिए सार्वजनिक-निजी साझेदारी (PPP) मॉडल को प्रोत्साहित करना चाहिए। डिजिटल बुनियादी ढांचे के विकास से डिजिटल पंचायत पोर्टल और ई-मित्र जैसी सेवाएं ग्रामीण नागरिकों तक प्रभावी ढंग से पहुंच सकेंगी।

पंचायतों की वित्तीय और प्रशासनिक स्वायत्तता बढ़ाना

राजस्थान में पंचायती राज और ई-गवर्नेंस के एकीकरण को बढ़ावा देने के लिए पंचायतों की वित्तीय और प्रशासनिक स्वायत्तता को मजबूत करना आवश्यक है। सरकार को पंचायतों को अधिक वित्तीय और प्रशासनिक शक्तियां देनी चाहिए। वित्तीय स्वायत्तता बढ़ाने के लिए, पंचायतों को स्थानीय कर संग्रह, जैसे संपत्ति कर और जल कर, में अधिक अधिकार देना चाहिए। स्थानीय कर संग्रह की शक्ति बढ़ाने से पंचायतें डिजिटल उपकरणों की खरीद और रखरखाव के लिए स्वतंत्र रूप से धन आवंटित कर सकेंगी। प्रशासनिक स्वायत्तता के लिए, पंचायतों को योजनाओं के चयन और कार्यान्वयन में अधिक स्वतंत्रता दी जानी चाहिए। इस हेतु सरकार को केंद्रीकृत योजनाओं, जैसे मनरेगा, में स्थानीय प्राथमिकताओं को शामिल करने की अनुमति देनी चाहिए।

सामाजिक अंकेक्षण को मजबूत करना

राजस्थान में सामाजिक अंकेक्षण को मजबूत करना पंचायती राज और ई-गवर्नेंस की पारदर्शिता और जवाबदेही बढ़ाने का एक प्रभावी समाधान है। सामाजिक अंकेक्षण ग्राम सभाओं के माध्यम से योजनाओं की निगरानी और मूल्यांकन की प्रक्रिया है, लेकिन इसकी प्रभावशीलता सीमित है। सामाजिक अंकेक्षण को डिजिटल पंचायत पोर्टल के साथ एकीकृत करना चाहिए, ताकि योजनाओं की जानकारी, जैसे मनरेगा और स्वच्छ भारत मिशन, सार्वजनिक रूप से उपलब्ध हो।

ग्राम सभाओं की सक्रिय भागीदारी को बढ़ाने के लिए, सरकार को जागरूकता अभियान चलाने चाहिए। इन कार्यशालाओं में स्थानीय भाषा और दृश्य-श्रव्य सामग्री का उपयोग करना चाहिए, ताकि ग्रामीण आसानी से समझ सकें। इसके अलावा, सामाजिक अंकेक्षण के लिए स्वतंत्र निगरानी समितियां बनाई जानी चाहिए, जिनमें महिलाओं और अनुसूचित जाति/जनजाति के प्रतिनिधियों को शामिल किया जाए।

पंचायत चुनावों में धन और अपराधीकरण पर अंकुश

राजस्थान में पंचायती राज और ई-गवर्नेंस के एकीकरण को बढ़ावा देने के लिए पंचायत चुनावों में धन और अपराधीकरण पर अंकुश लगाना आवश्यक है। पंचायत चुनावों में धनबल और बाहुबल का बढ़ता प्रभाव लोकतांत्रिक प्रक्रिया को कमजोर करता है और डिजिटल शासन की पारदर्शिता को प्रभावित करता है। इस हेतु सरकार को कड़े नीतिगत सुधार लागू करने चाहिए।

पहला, पंचायत चुनावों में धन के उपयोग पर सख्त सीमा निर्धारित की जानी चाहिए। इसके साथ ही, डिजिटल भुगतान प्रणाली, जैसे यूपीआई, के माध्यम से सभी चुनावी खर्चों को अनिवार्य करना चाहिए, ताकि पारदर्शिता बढ़े। दूसरा, अपराधीकरण पर अंकुश लगाने के लिए, गंभीर आपराधिक मामलों में लिप्त व्यक्तियों को पंचायत चुनाव लड़ने से अयोग्य घोषित किया जाना चाहिए।

डिजिटल उपकरणों के माध्यम से पारदर्शिता बढ़ाना

राजस्थान में डिजिटल उपकरणों के माध्यम से पारदर्शिता बढ़ाना भ्रष्टाचार पर नियंत्रण का एक प्रभावी समाधान है। डिजिटल पंचायत पोर्टल, ई-मित्र कियोस्क, और प्रत्यक्ष लाभ हस्तांतरण (DBT) जैसी प्रणालियां योजनाओं की निगरानी और जवाबदेही को बढ़ा सकती हैं। सरकार को डिजिटल उपकरणों का उपयोग अनिवार्य और व्यापक करना चाहिए।

पहला, सभी ग्रामीण विकास योजनाओं, जैसे मनरेगा और स्वच्छ भारत मिशन, की जानकारी डिजिटल पंचायत पोर्टल पर सार्वजनिक की जानी चाहिए। इसके लिए, डिजिटल पोर्टल को सरल और स्थानीय भाषा में उपलब्ध कराना चाहिए, ताकि ग्रामीण आसानी से जानकारी प्राप्त कर सकें।

दूसरा, प्रत्यक्ष लाभ हस्तांतरण (DBT) को सभी योजनाओं में अनिवार्य करना चाहिए। इसके लिए, सरकार को ग्रामीणों के बैंक खातों को आधार से जोड़ने की प्रक्रिया को तेज करना चाहिए।

तीसरा, ऑनलाइन निगरानी और शिकायत निवारण प्रणालियों को मजबूत करना चाहिए। इसे बढ़ाने के लिए, सरकार को ई-मित्र कियोस्क पर शिकायत निवारण केंद्र स्थापित करना चाहिए। इसके अलावा, डिजिटल पोर्टल पर रीयल-टाइम निगरानी डैशबोर्ड बनाना चाहिए, जो योजनाओं की प्रगति को सार्वजनिक करे।

स्थानीय स्तर पर मानव संसाधन विकास

राजस्थान में स्थानीय स्तर पर मानव संसाधन विकास पंचायती राज और ई-गवर्नेंस की चुनौतियों का एक प्रभावी समाधान है। ग्रामीण पंचायतों में डिजिटल प्रणालियों के संचालन के लिए प्रशिक्षित कर्मचारियों की कमी है। 2023 में पंचायती राज विभाग की एक रिपोर्ट के अनुसार, 50% ग्राम पंचायतों में डाटा एंट्री ऑपरेटर नहीं थे। इसे हल करने के लिए, सरकार को स्थानीय युवाओं को प्रशिक्षित और नियुक्त करना चाहिए। इसके लिए ग्रामीण युवाओं के लिए डिजिटल साक्षरता और तकनीकी प्रशिक्षण कार्यक्रम शुरू किए जाने चाहिए। इसके अलावा स्थानीय स्तर पर रोजगार के अवसर सृजित करने चाहिए। इसके साथ ही स्थानीय गैर-सरकारी संगठनों और स्वयं सहायता समूहों (SHGs) को मानव संसाधन विकास में शामिल करना चाहिए। इसके लिए, सरकार को गैर-सरकारी संगठनों को वित्तीय सहायता प्रदान करनी चाहिए।

निष्कर्ष : पंचायतीराज में ई व ईजी गवर्नेंस को बेहतर रूप से लागू करना राजस्थान में ग्रामीण शासन को सशक्त बनाने, नागरिकों को सुलभ और निष्पक्ष सेवाएं प्रदान करने, और सामाजिक-आर्थिक विकास को गति देने का एक परिवर्तनकारी प्रयास है। ई-मित्र और राजकाज जैसे डिजिटल मंचों ने ग्रामीण शासन को तकनीकी रूप से समृद्ध करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। यह एकीकरण भविष्य में ग्रामीण राजस्थान को एक आत्मनिर्भर, समावेशी, और समृद्ध समाज की ओर ले जाएगा। निश्चित ही भविष्य में, उन्नत तकनीकों का उपयोग ग्रामीण राजस्थान में शासन को और अधिक सुलभ और कुशल बनाएगा। कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) और डेटा विश्लेषण उपकरण पंचायतों को स्थानीय जरूरतों के आधार पर योजनाएं तैयार करने में सक्षम बनाएंगे। यह तकनीकी प्रगति ग्रामीण शासन को अधिक उत्तरदायी और प्रभावी बनाएगी, जिससे ग्रामीणों का जीवन स्तर उन्नत होगा। क्लाउड कंप्यूटिंग और ब्लॉकचेन तकनीक का उपयोग डेटा प्रबंधन को सुरक्षित और पारदर्शी बनाएगा। ब्लॉकचेन आधारित प्रणालियां योजनाओं के धन आवंटन और उपयोग को ट्रैक करेंगी, जिससे भ्रष्टाचार की संभावना कम होगी। स्मार्ट डिवाइस, जैसे सस्ते टैबलेट और स्मार्टफोन, ग्रामीण पंचायतों में वितरित किए जा सकते हैं, जो स्थानीय भाषा में संचालित हों। यह तकनीकी नवाचार ग्रामीण समुदायों को डिजिटल सेवाओं से जोड़ेगा और उनकी शासन प्रक्रिया

में भागीदारी बढ़ाएगा।

पंचायतीराज में ई व ईजी गवर्नेंस को सम्मिलित व बेहतर रूप से लागू करने का प्रयास राजस्थान में ग्रामीण शासन के लिए एक उज्ज्वल भविष्य प्रस्तुत करता है। तकनीकी प्रगति, समावेशी नीतियां, और सामुदायिक सहभागिता ग्रामीण समुदायों को सशक्त बनाएंगे, और ग्राम स्वराज के आदर्श को साकार करेंगे। राजस्थान इस दिशा में एक मॉडल बन सकता है, जो अन्य राज्यों के लिए प्रेरणा बनेगा।

संदर्भ सूची

1. एसोसिएशन ऑफ डेमोक्रेटिक रिफॉर्म्स (2020) "पंचायत चुनाव विश्लेषण", नई दिल्ली, पृ. 31
2. गवर्नमेंट ऑफ आंध्र प्रदेश (2005) "प्रजा परियोजनाः ग्रामीण सेवा वितरण", हैदराबाद, आंध्र प्रदेश सरकार, पृ. 45
3. गुप्ता, डी. (2020) "भारत में ई-गवर्नेंस और नीतिगत सुधार", नई दिल्ली, सेज पब्लिकेशन्स, पृ. 12
4. गुप्ता, एन. (2022) "भारत में डिजिटल शासन और सामुदायिक सहभागिता", नई दिल्ली, एकेडमिक प्रेस, पृ. 33
5. गुप्ता, आर. (2019) "पंचायती राज में सामाजिक अंकेक्षण", जयपुर, रॉयल पब्लिकेशन्स, पृ. 27
6. गुप्ता, एस. (2021) "डिजिटल इंडिया और ग्रामीण शासन", नई दिल्ली, सेज पब्लिकेशन्स, पृ. 19
7. गुप्ता, वी. (2020) "पंचायती राज और लैंगिक सशक्तीकरण", नई दिल्ली, सेज पब्लिकेशन्स, पृ. 41
8. कुमार, आर. (2018) "भारत में पंचायती राज और भ्रष्टाचार नियंत्रण", जयपुर, प्रिंटवेल पब्लिशर्स, पृ. 36
9. कुमार, एस. (2021) "भारत में ग्रामीण शासन और तकनीकी प्रगति", नई दिल्ली, सेज पब्लिकेशन्स, पृ. 22
10. कुमार, वी. (2018) "पंचायती राज में सामाजिक समावेशन", जयपुर, रॉयल पब्लिकेशन्स, पृ. 47
11. केरल सरकार (2018) "अक्षय परियोजना, डिजिटल साक्षरता और सेवा वितरण", तिरुवनंतपुरम, केरल सरकार, पृ. 15
12. जैन, आर. (2021) "ग्रामीण भारत में डिजिटल शासन और सामुदायिक सहभागिता", नई दिल्ली, ओरिएंट ब्लैकस्वान, पृ. 30
13. जैन, पी. (2019) "पंचायती राज में सामाजिक अंकेक्षण और पारदर्शिता", नई दिल्ली, एकेडमिक प्रेस, पृ. 44
14. जोशी, ए. (2017) "भारत में पंचायती राज, एक सामाजिक विश्लेषण", नई दिल्ली, रॉ मटेरियल्स पब्लिकेशन, पृ. 38
15. ट्रांसपेरेंसी इंटरनेशनल (2020) "भ्रष्टाचार अनुभूति सूचकांक", बर्लिन, ट्रांसपेरेंसी इंटरनेशनल, पृ. 25
16. द हिंदू (2023) "पंचायती राज में महिलाएंः चुनौतियां और अवसर", जयपुर संस्करण, 15 मार्च 2023, पृ. 49
17. दैनिक भास्कर (2023) "राजस्थान में पंचायती राज और डिजिटल शासनः एक अवलोकन", जयपुर संस्करण, 10 अप्रैल 2023, पृ. 21
18. पंचायत डेवल्यूशन इंडेक्स (PDI) (2024) "पंचायत डेवल्यूशन इंडेक्स रिपोर्ट 2024", नई दिल्ली, भारतीय लोक प्रशासन संस्थान, पृ. 32
19. पंचायती राज मंत्रालय, भारत सरकार (2022) "मनरेगा सामाजिक अंकेक्षण दिशानिर्देश", नई दिल्ली, भारत सरकार, पृ. 17
20. पंचायती राज मंत्रालय, भारत सरकार (2023) "वार्षिक रिपोर्ट 2022-23", नई दिल्ली, भारत सरकार, पृ. 40
21. पांडिचेरी सरकार (2008) "ग्राम ज्ञान केंद्रः प्रगति रिपोर्ट", पांडिचेरी, पांडिचेरी सरकार, पृ. 23
22. शर्मा, बी. (2022) "पंचायती राज और डिजिटल क्रांति", जयपुर, प्रगति प्रकाशन, पृ. 34
23. शर्मा, वी. (2020) "पंचायती राज में डिजिटल नवाचार", जयपुर, प्रिंटवेल पब्लिशर्स, पृ. 20
24. सिंह, के. (2021) "ग्रामीण भारत में डिजिटल क्रांति", नई दिल्ली, सेज पब्लिकेशन्स, पृ. 45
25. सिंह, एन. (2019) "पंचायती राज और ग्रामीण विकास", नई दिल्ली, रॉ मटेरियल्स पब्लिकेशन, पृ. 23
26. सिंह, पी. (2021) "डिजिटल इंडिया और ग्रामीण सशक्तीकरण", नई दिल्ली, एकेडमिक प्रेस, पृ. 38